श्रीराजराजेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी-नित्याराधनस्तोत्राणि

सङ्कलयिता
सदानन्द-ब्रह्मचारी

संक्षिप्तसपर्यापद्धतियुतानि

श्रीराजराजेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी
नित्याराधनस्तोत्राणि

सङ्कलयिता

सदानन्द-ब्रह्मचारी

व्यवस्थापकः मध्यप्रदेशस्य नरसिंहपुरमण्डलान्तर्गतश्रीधामज्योतेश्वर-
स्थितस्य परमहंसीगङ्गाआश्रमस्य, प्रतिनिधिः अनन्तश्रीविभूषित-
द्वारकाज्योतिष्पीठद्वयाधीश्वरस्य जगद्गुरोः शङ्कराचार्यस्य
श्रीस्वरूपानन्दसरस्वतीस्वामिनः, कार्यनिर्वाहकः गुर्जर-
प्रदेशस्य अहमदाबादनगरस्य शाहपुरदरवाजा-
स्थितस्य अद्वैत-आश्रमस्य, निदेशकः
द्वारकाशारदापीठ संचालितायाः
मासिक गुर्जरपत्रिका-
'नवभारती'
इत्यस्याश्च

श्रीराजराजेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी नित्याराधन-स्तोत्राणि

(संक्षिप्त-सपर्यापद्धतियुतानि)

संयोजकः

सुबुद्धानन्द-ब्रह्मचारी

मुख्य-सचिवः

जगद्गुरुशङ्कराचार्यमहाराजानाम्

प्रेरकः

नारायणस्वरूप-ब्रह्मचारी

मन्त्री

द्वारका-शारदापीठम्, द्वारका

सम्पादकः

उमाशङ्करपाण्डेयः

व्यवस्थापकः

द्वारका-शारदामठः, वाराणसी

वि॰सं॰ २०५२ सन् १९९५

प्रकाशकः —

श्री अर्जुन भाई मोढवाडिया

संयुक्त सचिव — शारदापीठ विद्यासभा
सिंडीकेट सदस्य — सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट
प्रमुख न्यासी — मालदेव जी ओडेदरा महिला कॉलेज, पोरबन्दर

प्राप्ति-स्थानम्—

(१) **परमहंसी गंगा आश्रम**

झोंतेश्वर, जि. नरसिंहपुर (म.प्र.)

(२) **द्वारका शारदा पीठ**

मु. पो. द्वारका, जि. जामनगर (गुजरात)

(३) **द्वारका शारदा मठ**

बी ४/४१, हनुमानघाट, वाराणसी (उ.प्र.)

प्रथमसंस्करणम् — २००० प्रतिरूपाणि
मूल्यम्— ७५.०० रूप्यकाणि

मुद्रक :— **तारा प्रिंटिंग वर्क्स,**
कमच्छा, वाराणसी—२२१ ०१०

[हम **श्री नारायणस्वरूप जी ब्रह्मचारी** (मंत्री—द्वारका शारदापीठ, द्वारका) के आभारी हैं, जिन्होंने "श्रीराजराजेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी-नित्याराधन-स्तोत्राणि" के प्रकाशन हेतु प्रकाशक को प्रेरित किया ।]

समर्पण

पूज्य गुरुजी के
श्रीचरणों में –
जिनके आश्रय से
जगदम्बा के चरण
सुलभ हो सके।

जिनकी ऋतम्भरा प्रज्ञा से
सम्पूर्ण विश्व की विज्ञानघन
महासत्ता आलोकित है—
उस सनातन परम्परा
के महर्षियों के चरणों में सादर समर्पित

विषयानुक्रमणिका

	पृष्ठाङ्कः
१. शिवसङ्कल्प— प्रो. वि. वेङ्कटाचलम्	१-८
२. प्ररोचना— डॉ. कामेश्वरनाथ मिश्र	१-२
३. किञ्चिद् वक्तव्य	१-४
४. शुभाशीर्वाद (परमपूज्य शंकराचार्य जी महाराज)	५
५. संक्षिप्त परिचय (जगद्गुरु स्वामी श्रीस्वरूपानन्द जी महाराज)	७-११
६. श्रीविद्यापीठ झोंतेश्वर— एक परिचय	१३-१४
७. श्रीयन्त्र एवं माहात्म्य	१५-१६
८. आद्याशक्ति श्रीविद्या राजराजेश्वरी (संक्षिप्त स्वरूप-वर्णन)	१७-२७
स्तोत्रपाठात्मको भागः	
९. ललितापञ्चरत्नम्	३-४
१०. श्रीराजराजेश्वरी-प्रातःस्मरणम्	५-६
११. श्रीबालात्रिपुरसुन्दरीमानसपूजास्तोत्रम्	७-१५
१२. श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीमानसपूजास्तोत्रम्	१६-३५
१३. त्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रम्	३६-३७
१४. मूलमन्त्रात्मकश्रीचक्रराजस्तवः	३८-४१
१५. घटस्तवः	४२-४५
१६. चर्चास्तवः	४६-५१
१७. अम्बास्तवः	५२-५७
१८. श्रीललिताम्बिकास्तवः	५८-६०
१९. श्रीमन्त्रमातृकापुष्पमालास्तवः	६१-६३
२०. श्रीललितेन्दुशेखरस्तवः	६४-६५
२१. श्रीत्रिपुरास्तवराजः	६६-८२
२२. देवीभुजङ्गस्तोत्रम्	८३-८७

२३. भवानीभुजङ्गम् ८८-९०
२४. राजराजेश्वरीशरणागतिस्तुतिः ९१-९२
२५. मूलमन्त्रात्मकबालास्तुतिः ९३
२६. श्रीललिता-षोडशी-स्तुतिः ९४-९६
२७. लघुस्तुतिः ९७-१००
२८. त्रिपुरसुन्दरीवेदपादस्तोत्रम् १०१-११२
२९. ज्ञानकालिकास्तोत्रम् ११३-११४
३०. मकरन्दस्तवराजस्तोत्रम् ११५-११८
३१. सकलजननीस्तोत्रम् ११९-१२५
३२. ललितालालाटाक्षस्तोत्रम् १२६-१२८
३३. आम्नायस्तोत्रम् १२९-१३२
३४. वाञ्छाकल्पलता १३३-१४४
३५. भवान्यष्टकम् १४५-१४६
३६. त्रिपुरसुन्दर्यष्टकम् १४७-१४८
३७. त्रिपुरामेधासूक्तम् १४९

कर्मकाण्डात्मको भागः

३८. परमदेवीसूक्तम् १५३-१५५
३९. त्रैलोक्यमोहनकवचम् १५६-१६१
४०. दिव्यमङ्गलाध्यानम् १६२-१७१
४१. संक्षिप्तश्रीचक्रनित्यार्चनविधिः १७२-१७५
४२. श्रीसूक्तम् १७६-१७८
४३. देव्यथर्वशीर्षम् १७९-१८२
४४. देव्युपनिषद् १८३-१८४
४५. त्रिपुरोपनिषद् १८५-१८६
४६. भावनोपनिषद् १८७-१८८

श्रीललितानामार्चनात्मको भागः

४७. ललितासहस्रनामस्तोत्रम् १८९-२०५

४८. ललितासहस्रनामावलिः २०६-२२७

४९. ललितात्रिशतीस्तोत्रम् २२८-२३३

५०. ललितात्रिशतीनामावलिः २३४-२४०

५१. सौभाग्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् २४१-२४२

५२. आश्चर्याष्टोत्तरशतनामावलिः २४३-२४७

५३. ललिताऽष्टोत्तरशतनामावलिः २४८-२५०

५४. सम्बुद्ध्यन्तखड्गमालास्तोत्रम् २५१-२५३

५५. चतुर्थ्यन्तखड्गमालानामावलिः २५४-२५८

५६. ललिताम्बिकानीराजनम् २५९-२६०

५७. पुष्पाञ्जलिस्तोत्रम् २६१-२६३

५८. मूलदेवतास्तुतिः २६४-२६८

५९. देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम् २६९-२७०

परिशिष्टात्मको भागः

६०. सौन्दर्यलहरी २७३-२९०

६१. आनन्दलहरी २९१-२९४

६२. द्वारका शारदापीठ का संक्षिप्त परिचय २९५-२९९

६३. ज्योतिष्पीठ का संक्षिप्त परिचय ३००-३०२

■

शिवसङ्कल्प

स्तोत्रप्रिया स्तुतिमती श्रुतिसंस्तुतवैभवा ।

—ललितासहस्रनामस्तोत्र, २२३

स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः ।

— विष्णुसहस्रनामस्तोत्र, ८६

आध्यात्मिक साधना के तीन प्रसिद्ध सोपानों— कर्म, भक्ति, ज्ञान— में भक्ति मार्ग का यही वैशिष्ट्य है कि वह सर्वजन सुलभ है । यह भक्ति क्या है ? शास्त्रकारों ने भक्ति की अनेक प्रकार की परिभाषाएँ लिखी हैं । भगवत्पाद शङ्कराचार्य ने मोक्ष के साधनों में भक्ति की श्रेष्ठता बताकर आत्मस्वरूप के अनुसन्धान को ही भक्ति का लक्षण बता दिया ।

मोक्षकारणसामग्र्यां भक्तिरेव गरीयसी ।
स्वस्वरूपानुसन्धानं भक्तिरित्यभिधीयते ॥

(विवेकचूडामणि, ३२)

आचार्य भगवत्पाद ने जिस भक्ति का यहाँ उल्लेख किया वह तो भक्ति का चरम विकास है । एक आधुनिक विद्वान् ने सामान्य लोगों के लिए सरलता से बोधगम्य एवं सरलता से याद रखने योग्य ढंग से समझाते हुए इस शब्द के प्रथम और अंतिम अक्षरों को ही प्रथम और अंतिम अक्षरों के रूप में जोड़कर चमत्कार करते हुए कहा— भगवदासक्ति ही भक्ति है । जैसे संस्कृत व्याकरण में प्रत्याहार की परिकल्पना है, उसी प्रकार 'भगवदासक्ति' शब्द के आद्य एवं अन्त्य अक्षरों को मिलाओ, देखो, बन गयी भक्ति ! परमेश्वर के प्रति ऐसा दृढ़ स्नेह, जिसके कारण अन्य सभी विषयों में अनिच्छा और अनास्था की स्थिति हो जाये, वही वास्तविक भक्ति है । एक साधारण-से क्षणिक या सीमित काल के 'स्नेह' और अविचल 'आसक्ति' में यही मौलिक अन्तर है ।

भक्तियोग की भूमिकाएँ अनेक हैं और उनके स्तर भी विभिन्न हैं । अर्चन-पूजन तो इसका एक सर्वसामान्य प्रकार है । देवताओं की पूजा का एक

प्रमुख अंग है— 'स्तोत्र'। स्तोत्रों की लोकप्रियता वेदकाल से अक्षुण्ण रूप में चली आ रही है। वैदिक साहित्य के बाद पुराणों में, तन्त्र-आगमों में, यहाँ तक काव्य-साहित्य में भी, प्रचुर मात्रा में स्तोत्रों का समावेश है।

स्तोत्र साहित्य एवं भगवत्पाद शङ्कराचार्य

यद्यपि स्तोत्र की परम्परा बहुत प्राचीन है फिर भी साहित्य की एक स्वतन्त्र विधा के रूप में इसके विकास का श्रेय श्री शङ्कराचार्य को ही जायेगा। उपासना के क्षेत्र में गणेश, कुमार-कार्त्तिकेय, सूर्य, विष्णु, शक्ति एवं शिव को मान्यता देकर 'षण्मत स्थापनाचार्य' के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त आद्य शङ्कराचार्य ने इन समस्त देवता विषयक अनेक प्रकार के स्तोत्रों की रचना की है। भारतीय दार्शनिक मनीषा के इस मूर्धन्य आचार्य ने स्तोत्र साहित्य के 'मार्गदर्शी महर्षि' की प्रतिष्ठा तो अर्जित की ही है, इस क्षेत्र में उनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा ने अनेक विधाओं को भी जन्म दिया है। भुजंगप्रयात, मत्तमयूर आदि छन्दों में निहित संगीत-लय की उपयोगिता को पहचानकर इस क्षेत्र में प्रथम प्रयोग करने का श्रेय इन्हीं को है। इसी प्रकार वेद-उपनिषद् से प्रसिद्ध वाक्यांशों को अपने श्लोकों के एक चरण के रूप में गूँथकर 'वेदपादस्तव' की धारा भी इन्हीं की प्रतिभा की देन है। इसके अतिरिक्त पादादिकेशान्त स्तोत्र, क्षमापनस्तोत्र, लहरी काव्य आदि भी आचार्य शङ्कर की ही मौलिक उद्भावनाएँ हैं। गीतों में आज जो 'ध्रुवा' पद्धति सर्वत्र प्रचलित है और नाट्यशास्त्र में जिसका उल्लेख है, ऐसी ध्रुवाओं का प्रयोग भी शङ्कराचार्य के अनेक स्तोत्रों में पाया जाता है।

माता के रूप में परदेवतोपासना

अन्य समस्त रूपों की अपेक्षा भक्त के हृदय को अत्यधिक उद्वेल्लित कर भावनाभिभूत करने का अद्भुत सामर्थ्य है। शङ्कराचार्य के जीवन की घटनाओं में उनकी माँ का देहावसान और उस अवसर पर योगशक्ति से आचार्य का वहाँ पहुँचना और अन्त्येष्टि संस्कार में तत्कालीन ब्राह्मणों के द्वारा असहयोग एवं विरोध तथा अंत में असहाय होकर अपने घर के आँगन में ही दाह-संस्कार की घटनाएँ तो सर्वविदित हैं। किन्तु मानव जीवन के उस संवेदनशील क्षण में मातृभक्ति के उद्गार के रूप में आचार्यश्री के द्वारा 'मातृपञ्चक' नाम से मातृस्तुति की रचना से कम लोग परिचित हैं। इस मातृस्तोत्र से जो एकमात्र श्लोक परम्परा में सुरक्षित है, उसमें कविहृदय —

आस्तां तावदियं प्रसूतिसमये दुर्वारशूलव्यथा
नैरुच्यं तनुशोषणं मलमयी शय्या च सांवत्सरी।
एकस्यापि न गर्भभारभरणक्लेशस्य यस्याः क्षमो
दातुं निष्कृतिमुन्नतोऽपि तनयस्तस्यै जनन्यै नमः॥

आचार्य कहते हैं— पुत्र चाहे जितने ऊँचे से ऊँचे सामाजिक पद पर प्रतिष्ठित क्यों न हो, और उससे कुल की कल्पनातीत उन्नति हुई हो, वह माता के उस ऋण से तो कभी भी उऋण नहीं हो सकता जो उसने अपने कोख में उसे दस माह तक धारण कर जन्म दिया हो, भले ही प्रसूतिकाल की अवर्णनीय असह्य पीड़ा, गर्भधारण के समय के और सद्योजात शिशु के पालन-पोषण के जो नाना-प्रकार के क्लेश एवं तनाव इत्यादि को भुलाकर एक तरफ कर भी दिया जाये।

मातृतत्त्व को ममतामयी अपरिमित वात्सल्य धारा के अक्षय्य उत्स के रूप में जब कोई भी व्यक्ति पहचानता है तब उसका भावुक हृदय उस स्नेह-सागर की लहरों से आप्लावित, आप्यायित एवं अभिभूत हो जाता है और वह स्वयं आश्वस्त हो जाता है कि प्रेम के अनन्त संसार में मातृ-स्नेह ही स्नेह की पराकाष्ठा है और अनुग्रह-शक्ति का परमोच्च सोपान है, सांसारिक स्नेह का चरम विकास-विन्दु है। उसी अनुभूति के धरातल पर मानव की अन्तश्चेतना में **'न मातुर्दैवतं परम्'** का बोध जाग उठता है। यही रहस्य है उपासना क्रम में जगन्नियन्ता के लीला-वैभव को नारी के रूप में, जगज्जननी के रूप में या पराशक्ति के रूप में देखते हुए उसके समक्ष आत्मसमर्पण का। आध्यात्मिक साधना में शाक्त मार्ग के वैशिष्ट्य, महत्त्व एवं उत्कर्ष का भी रहस्य यही है।

यहाँ पर एक बात का उल्लेख आवश्यक है। पाश्चात्त्य संस्कृत विद्वानों ने तथा उस वासना से आक्रान्त उनके पिछलग्गू तथाकथित भारतीय वैदिक विद्वानों ने वैदिक युग के भारतीय समाज को अविकसित, घुमक्कड़ प्रकृति की जनजातियों के रूप में निरूपित करने की जो चेष्टा की है, वह मन्त्रों में निहित सामाजिक विकास की यथार्थता को न पहचान पाने का ही परिणाम है। एक स्थिर एवं प्रतिष्ठित समाज की विकसित सभ्यता के प्रमाण पद-पद पर वैदिक

मन्त्रों में और अन्य संदर्भों में कोई भी देख सकते हैं। चाहिये केवल ऋजु दृष्टि। संहिता भाग से और उपनिषद् भाग से मातृ-स्नेह एवं मातृमहिमा की भावना के समाज में प्रतिष्ठित होने के तीन उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिससे माता के प्रति स्नेह, समादर, सम्मान, पूजनीयता के साथ पराशक्ति के रूप में उपासनां इस देश में वेदकाल से ही चली आ रही है— यह बात स्पष्टतया प्रम॥गत हो सके एवं जनमानस से एतद्विषयक भ्रान्तियाँ दूर हो जायें। जल देवता 'आपः' को संबोधित प्रसिद्ध मन्त्र '**आपो हिष्ठामयो भुवः**' इत्यादि यजुर्वेद के मन्त्र में जब ऋषि 'अप्'- देवता से प्रार्थना करते हैं कि आप अपने पास के रसों में से जो सर्वाधिक कल्याणमय हो, सर्वाधिक पोषक एवं स्वादिष्ट हो उस अंश को हमें वितरित करें। जैसा कि अपनी संतान से अमित प्यार करने वाली एक माँ बच्चों को अपने पास की वस्तुओं में सर्वश्रेष्ठ, सर्वाधिक हितकारक एवं प्रियतम पदार्थ को बाँटती है, (**यो वः शिवतमो रसः तस्य भाजयतेह नः उशतीरिव मातरः**) क्या इसमें माता की ममता की हृदयस्पर्शी झलक नहीं है? इसी प्रकार जब तैत्तिरीयोपनिषद् के उस बहुत प्रसिद्ध संदर्भ में जब एक आचार्य अपने गुरुकुल में अध्ययन पूरा कर जाने वाले शिष्य को उपदेश देते हुए उसके वैयक्तिक एवं सामाजिक कर्तव्यों का बोध कराते हुए पूजनीय व्यक्तियों के क्रम में जब सर्वप्रथम कहते हैं— अपनी माँ को देवता मानकर सम्मान-समर्चना करो (**मातृदेवो भव**), क्या इस माता-देवता समीकरण में माँ की पूजनीयता के साथ सर्वलोक-नियामक तत्त्व को जगज्जननी के रूप में देखने की पूर्वपीठिका की झलक नहीं मिलती है? यदि पराशक्ति की उपासना के लिए इससे भी अधिक स्पष्ट एवं पुष्ट प्रमाण चाहिये तो केनोपनिषद् का वह सन्दर्भ अकाट्य प्रमाण है, जिसमें अग्नि, वायु और इन्द्र जैसे देवता परब्रह्म के समक्ष निर्वीर्य होकर परास्त हो जाते हैं, वह परब्रह्म सुन्दर स्त्री के रूप में प्रकट होती है और उसका हिमवत्पुत्री उमा के रूप में उल्लेख किया गया। (**स तस्मिन्नेवाकाशे स्त्रियमाजगाम बहुशोभमानाम् उमां हैमवतीम्**।)

इससे स्पष्ट है कि भारत की आध्यात्मिक साधना के इतिहास में पराशक्ति की उपासना मात्र पौराणिक या तांत्रिक युग की देन नहीं है, किन्तु उसका मूल उत्स वेद है। हाँ, इतना अवश्य है कि परवर्ती काल में इस शाक्त उपासना पद्धति का बहुमुखी एवं शाखोपशाख विकास पुराणों में एवं तन्त्र आगमों में हुआ है।

प्रस्तुत संकलन

प्रस्तुत संकलन में जगज्जननी 'पराशक्ति' की आराधना में भक्तों के द्वारा नित्य प्रयुक्त श्रेष्ठ स्तोत्रों का समावेश है जिनका प्रयोग पूरे देश में बहुधा प्रचलित है एवं नित्योपयोगी है। यही इसका वैशिष्ट्य भी है। भगवत्पाद शङ्कराचार्य की परम्परा के संरक्षक एवं वर्तमान में द्वारका के शारदापीठ एवं बदरिकाश्रम के ज्योतिष्पीठ के धुरन्धर धर्माचार्य **अनन्तश्रीविभूषित स्वरूपानन्द स्वामी जी महाराज** की प्रेरणा एवं कृपानुग्रह से प्रकाशित हो रहा है, यह इसके उत्कर्ष का निदान है। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि इसमें श्रीविद्या-उपासना पद्धति में दक्षिण भारत में अधिक प्रचलित ललितासहस्रनाम, ललितात्रिशती आदि नाम-साधना के ग्रन्थों को भी सम्मिलित किया गया, जिससे यह ग्रन्थ सभी क्षेत्रों के भारतवासियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। स्वामी जी की तपःस्थली में शृंगरी के ब्रह्मलीन जगद्गुरु **श्री अभिनवविद्यातीर्थ स्वामी जी महाराज** के करकमलों से प्रतिष्ठापित श्रीराजराजेश्वरी का मन्दिर अब अभिनव तीर्थस्थल के रूप में तथा पुराने ५१ पीठों के साथ एक अभिनव शक्तिपीठ के रूप में जनमानस में प्रतिष्ठित हो गया है। इसी पीठ की अधिष्ठात्री देवी श्रीराजराजेश्वरी की नित्याराधना में संलग्न शिष्यों की संयुक्त तपस्या इस संकलन में संगृहीत होने से, मैं समझता हूँ, इस ग्रन्थ में तपोमहिमा के तरंगों के स्पन्दन की प्राणशक्ति भी है। परम तपःपूत स्वामी जी के तपस्यारत शिष्यों के द्वारा सम्पादित इस ग्रन्थ के पाठकों को भी उस तप का फल प्राप्त होगा। भगवान् मनु ने कहा भी है—

यद् दुस्तरं यद् दुरापं यद् दुर्गं यच्च दुष्करम्।
सर्वं तु तपसा साध्यं तपो हि दुरतिक्रमम्॥ (११।२३८)

मेरे लिए विशेष प्रसन्नता की बात है कि इस पुण्य कार्य में हमारे विश्वविद्यालय के छात्र-संघ के पूर्व अध्यक्ष और उदीयमान तरुण विद्वान् **श्री उमाशङ्कर पाण्डेय** का सम्पादक के रूप में महत्त्वपूर्ण योगदान है। उनके भावी अभ्युदय के लिए माँ से प्रार्थना करता हूँ।

नाम-साधना

रूप-साधना एवं नाम-साधना भक्ति की दो समानान्तर धाराएँ हैं, जिनका अपना-अपना अलग वैशिष्ट्य एवं वैभव है। पुराणों और तन्त्रों में इसका शाखोपशाख विस्तार है। स्वयं भगवत्पाद आद्य शङ्कराचार्य ने महाभारंत के विष्णुसहस्रनामस्तोत्र पर भाष्य लिखकर नामानुसन्धान के विशिष्ट महत्त्व पर तथा कलियुग में उसकी विशेष उपादेयता पर अपना हस्ताक्षर देकर उसे प्रमाणित किया है।

ऋषियों की तपस्या से परिपूत इन नामों के विचित्र वीर्य के सम्बन्ध में आचार्य विनोबा भावे की रोचक उक्ति स्मरणीय है। उनके आश्रम में विष्णुसहस्रनाम के पाठ के सन्दर्भ में जब किसी ने पूछा कि इन कालातीत नामों को छोड़कर आज के संदर्भ में प्रासंगिक नामावली की रचना क्यों न की जाये? तब बाबा ने कहा- 'ये साधारण नाम नहीं हैं। महापुरुषों के द्वारा सहस्राब्दियों से इनके पाठ से इनमें असाधारण शक्ति एवं वीर्य का आधान हो गया। जैसे होमियोपैथी के दवाओं में वीर्य (पोटेन्सी) बढ़ाये जाने पर उनकी शक्ति और सामर्थ्य शतगुणी या सहस्रगुणी हो जाती है, ठीक वैसी ही स्थिति इन नामों की है। यदि आज मैं एक नयी नामावली बना भी लूँ, इसमें इतनी पोटेन्सी कैसे और कब आयेगी? मनुष्य के पापों का नाश करने में ललितासहस्रनाम के एक-एक नाम की शक्ति के सम्बन्ध में कहा भी गया—

एकस्य नाम्नो या शक्तिः पातकानां निवर्तने।
तन्निवर्त्यमघं कर्तुं नालं लोकाश्चतुर्दश॥

नामों की अद्भुत शक्ति का वैज्ञानिक परीक्षण करने का समय अब आ गया है। पूर्व में जो श्रद्धा-विश्वास की ही बातें थीं, आज विज्ञान की कसौटी पर उनका परीक्षण आवश्यक हो गया। एक 'कम्प्यूटर' वैज्ञानिक ने विष्णुसहस्रनाम पर एक विचित्र-सा वैज्ञानिक प्रयोग भी किया, जो मात्र सैद्धान्तिक लगता है। ('Structural Frames and Systems of Sri-Sri Vishnu Sahasranama Stotram- Dr. S. K. Kapoor; Maharshi Nagar, India, 1991)। संभव है, इन समस्त पक्षों पर भविष्य में वैज्ञानिक अनुसन्धान भी होगा। हम आशा कर सकते हैं कि भावी पीढ़ियों में विश्वास को विज्ञान का बल एवं संबल

भी प्राप्त होगा। पूर्वी भारत के मयूर कवि ने **सूर्यशतक** की स्वयं रचना कर उसके पारायण से रोग की मुक्ति पायी, दक्षिण में निकट भूतकाल में ही केरल के संत कवि नारायण भट्टतिरि ने श्रीमद्भागवत के '**नारायणीयम्**' के रूप में नये रूपान्तर की रचना कर 'गुरुवायूर' मन्दिर के श्रीकृष्ण की कृपा प्राप्त कर कुष्ठ रोग से भी निवृत्ति पायी है— ये सब ऐतिहासिक घटनाएँ हैं, किंवदन्ती मात्र नहीं। ललितासहस्रनामस्तोत्र में पठित नामों में एक नाम 'नामपारायणप्रीता' भी है। इसमें नामपारायण के रहस्यात्मक अर्थ की व्याख्या करते हुए विख्यात भाष्यकार भास्कर राय ने लिखा है कि वर्णों की तांत्रिक पद्धति से योजना से २०,७३६ नाम होते हैं, उन्हीं का पारायण यहाँ अभिप्रेत है। तंत्र की ऐसी दुरूह बातें तो आम आदमी के लिए नहीं हैं। जिनको रुचि है वे भास्कर राय के भाष्यार्थ के विज्ञ विद्वानों से समझ सकते हैं। यहाँ भास्कर राय के भाष्य से 'स्तोत्रप्रिया' इस नाम की व्याख्या में जो छः प्रकार के स्तोत्रों का उल्लेख किया, उसके संकेत मात्र से संतोष करना चाहता हूँ।

स्तोत्रं श्लोकिको गुणानुवादः षड्विधः—

नमस्कारस्तथाशीश्च सिद्धान्तोक्तिः पराक्रमः।
विभूतिः प्रार्थना चेति षड्विधं स्तोत्रलक्षणम्॥

इत्यभियुक्तोक्तिः।

भगवत्पाद श्रीशङ्कराचार्य ने श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्र के अपने भाष्य में '**स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं**- - -" की व्याख्या में स्तोत्र का स्वरूप बताते हुए 'गुणसङ्कीर्तनात्मकम्' कहकर गुणों के वर्णन को ही स्तोत्र बताया। किन्तु भगवान् के नामों के अंतर्गत 'स्तोत्र' शब्द को देखकर इस मूर्धन्य दार्शनिक ने नाम और रूप का अभेद प्रतिपादित करते हुए लिखा है कि शब्दात्मक स्तोत्र भी विष्णु ही है (**स्तोत्रं गुणसंकीर्तनात्मकम्, तद् हरिरेव**)। उक्त संदर्भ में महर्षि वेद- व्यास ने भगवान् को 'स्तोत्र' स्वरूप तो कहा ही, साथ ही उनको 'स्तुतिः स्तोता' कहकर स्तुतिक्रिया के एवं स्तुति करने वाले के रूप में जहाँ प्रतिपादित किया दार्शनिक शङ्कराचार्य की अद्वैतानुभूति जाग उठी और वहीं स्पष्ट कर दिया

कि विष्णु के समस्त कारक ग्रन्थ निर्गुण ब्रह्मस्वरूप में कर्त्ता, करण, क्रिया आदि समस्त रूप समाविष्ट हैं ।

वास्तव में इन समस्त स्तोत्रों का भी चरम लक्ष्य ऐसी 'अद्वैतवासना' की प्राप्ति ही है, जो परमेश्वर- परमेश्वरी के अनुग्रह से भी प्राप्य है । कहा भी गया है—

'ईश्वरानुग्रहादेव पुंसामद्वैतवासना' ।

अंत में इस संकलन में संगृहीत 'अम्बास्तव' के एक मार्मिक पद्य की तरफ पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ, जिसमें भक्त-कवि (कुछ लोगों के अनुसार इसका रचनाकार कोई कालिदास था) के अनुसार देवी के चरणों में शरणागति से ही मनुष्य तर्क-वितर्कों की दार्शनिक जटिलताओं से उठकर विशुद्ध अद्वैतभावना की भूमि पर पहुँच सकता है—

यावत्पदं पदसरोजयुगं त्वदीयं
नाड्गीकरोति हृदयेषु जगच्छरण्ये ।
तावद् विकल्पजटिलाः कुटिलप्रकारा-
स्तर्कग्रहाः समयिनां प्रलयं न यान्ति ॥२७ ॥

वाराणसी,
(अक्षयतृतीया)
२-५-१९९५

वि. वेङ्कटाचलम्
कुलपति
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी
एवं
कुलाधिपति
श्री लाल बहादुरशास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली ।

प्ररोचना

रदनवसनपत्रो हासपुष्पावलिश्च
विमलशुभसटावल्लरी बाहुशाखः ।
विविधबुधसमीहासत्फलाढ्यप्रसूतिः
गुरुसुरतरुरेको मे प्रणामोऽस्तु तस्मै ॥१ ॥

उत्कल्लोलसुधासमुद्रहृदये द्वीपे मणेर्भास्वरे
मन्दारादिलताप्रतानसुभगे चेतोहरे नन्दने ।
गुञ्जन्मञ्जुमिलिन्दचित्रशलभे कादम्बफुल्ले वने
सच्चिन्तामणिधाम्नि कान्तविलसत्पर्यङ्कसिंहासने ॥२ ॥

ईशाजाच्युतरुद्रदेवविधृते पञ्चास्यसादाशिवे
श्रीकामेश्वरनाथनाभिजनिते साहस्रपद्मे स्थिता ।
प्रत्यूषार्कनिभारुणाम्बरवृता प्रत्यङ्मुदीप्तप्रभा
शीर्षन्यस्तकलाधरांशमकुटा प्रोद्भासिधम्मिल्लका ॥३ ॥

ग्रैवेयप्रविलम्बहारसुषमा मञ्जीरकाञ्चीचिता
पाशं पौष्पशराङ्कुशौ च सुधनुः सन्धारयन्ती करे ।
सौन्दर्याद्भुतविग्रहा त्रिनयना स्मेराननना स्वेष्टदा
वन्द्येषा ललिता सदैव विगलत्कारुण्यवाष्पेक्षणा ॥४ ॥

का देवी किं प्रभावा सा को नाम ज्ञातुमर्हति ।
शरावेण महासिन्धुर्मापयितुं न शक्यते ॥५ ॥
तथापि ललिता देवी राजराजेश्वरी सदा ।
सुप्रसन्ना स्वभक्तेभ्यो भुक्तिं मुक्तिं च यच्छति ॥६ ॥

ऋषीणां हृदये सैषा कवीनां मानसे तथा ।
आविर्भूता महादेवी वाग्रूपेण स्तवेषु च ॥७ ॥
आगमेषु पुराणेषु कल्पसूत्रेषु वान्यतः ।
सङ्ग्रहेषु कवीनां च सपर्याविधयः स्तवाः ॥८ ॥

राजमानास्तु ते जाताः दुर्लभाः भक्तसङ्कुले ।
लभ्यमानेषु ग्रन्थेषु प्रामाण्यं विद्यते न वा ॥९ ॥
द्वित्राः प्रामाणिकाः शुद्धाः प्राप्यास्तेऽपि महर्घकाः ।
सीदन्ति ललितादेव्याः वरिवस्याचिकीर्षवः ॥१० ॥

तत्समीक्ष्य सदानन्दो ब्रह्मचारी महोदयः ।
द्वारकाशारदा-ज्योतिष्पीठद्वयाधीश्वरैः ॥११ ॥
शङ्कराचार्यपादैस्तु स्वरूपानन्दनामभिः ।
प्रेष्ठाऽन्तेवासिरूपेण दीक्षितो ललिताप्रियः ॥१२ ॥

सङ्कलय्य च तान् सर्वान् भक्तानां हितहेतवे ।
प्रस्तौति ग्रन्थ एकस्मिन् साधुवादं स अर्हति ॥१३ ॥
एतादृशानि सम्पाद्य पुण्यकर्माणि सः कृती ।
लभतामक्षयां कीर्तिं जगदम्बाप्रसादतः ॥१४ ॥

धर्मः सनातनो वृद्धिं यात्वधर्मो विनाशिताम् ।
सद्भावः प्राणिवर्गेऽस्तु विश्वं कल्याणतामियात् ॥१५ ॥

चिज्ज्योतिर्मम चित्तसद्मनि घनं ग्रस्ते तमोभिर्दृढं
दुःसंस्कारकपाटकातिपिहिते कौकृत्यसङ्कीलिते ।
उद्यद्भानुकरांशुकैर्नखमणेर्भाभिश्च चन्द्रानने ।
हृद्दीपेन समं विघाट्य तरसा त्वं त्वज्जसाऽऽविर्भवेः ॥१६ ॥

वाराणस्याम्
अक्षयतृतीयायाम्,
वि. सं. २०५२
(२.५.१९९५)

डॉ. कामेश्वरनाथमिश्रः
आचार्यः, संस्कृतविभागस्य
अधिष्ठाता, शब्दविद्यासङ्कायस्य
केन्द्रीय-उच्च-तिब्बती शिक्षा संस्थानम्
सारनाथः, वाराणसी

किञ्चिद् वक्तव्य

भगवान् भाष्यकार श्रीमदादि शंकराचार्य ने अपने द्वारा रचित 'त्रिपुर-सुन्दरी-वेदपाद-स्तव' में कहा है—

सन्तु विद्या जगत्यस्मिन् संसारभ्रमहेतवः।
भजेऽहं तां यया विद्वान् विद्ययाऽमृतमश्नुते॥

अर्थात्, संसार में भ्रम उत्पन्न करने वाली अनेकों विद्याएँ हैं; किन्तु मैं उस विद्या का आश्रय लेता हूँ जिस विद्या के द्वारा विद्वान् मोक्ष प्राप्त करते हैं। प्रश्न उठता है— वह विद्या कौन-सी है? यह तो निश्चित ही है कि वह विद्या न तो कमाने की है और न खाने की। न ही संसार के व्यवहारों को चलाने की। वह विद्या निश्चय ही ब्रह्मगतिप्रदा होनी चाहिए। **'सा विद्या या विमुक्तये', 'विद्या हि सा ब्रह्मगतिप्रदा या'** आदि वाक्य जिसको इंगित करते हैं, वह विद्या **'श्रीविद्या'** है।

ललितासहस्रनाम में पराभट्टारिका भगवती राजराजेश्वरी की **'आत्मविद्या महाविद्या श्रीविद्या कामसेविता'** कहकर स्तुति की गई है। यही विद्या पंचदशी, षोडशी आदि नामों के मन्त्रों से प्रसिद्ध है। यह पूर्णतः गुरुगम्य है। इसकी उपासना का प्रकार अत्यन्त विस्तृत, विशिष्ट एवं गोप्य है। इसी कारण यह सर्वसाधारण के लिए दुर्लभ है।

हमारे परमाराध्य ज्योतिष एवं द्वारका-शारदापीठाधीश्वर जद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ने मध्यप्रदेश के हृदयस्थल नरसिंहपुर जिले में 'श्रीवनम्' नामक सुरम्य वन में भगवती राजराजेश्वरी त्रिपुर-सुन्दरी का भव्य विशाल मन्दिर स्थापित करके ऐसी दुर्लभ विद्या को सर्वसुलभ बना दिया है।

सगुण भक्ति-परम्परा में स्तोत्रपाठ का विशेष, महत्त्व है। भगवती राजराजेश्वरी पराभट्टारिका त्रिपुरसुन्दरी की उपासना स्तोत्र-पाठों के माध्यम से सरल, सुलभ एवं उनके दिव्य स्वरूप को हृदयकमलमध्य में अवस्थित कराने में अत्यन्त सहायक होती है। शास्त्रों में स्तोत्रगान का अत्यन्त महत्त्व है।

तन्त्रोपासना में कभी-कभी अत्यन्त गूढ रहस्य होने के कारण साधक को कठिनाई होती है; परन्तु स्तोत्रों के माध्यम से साधक पराम्बा के दिव्यविग्रह को धीरे-धीरे साकार स्वरूप प्रदान करने लगता है और अन्ततः सकल ऐहिक कामनाओं की प्राप्ति कर वह अपने आराध्य के साथ परमाद्वैत प्राप्त कर लेता है। स्तोत्रपाठ से भावों का प्रवाह निर्मलगतिं से बढ़ने लगता है। हृदय की रागात्मिका वृत्ति अपने उपास्य की राह ढूँढते-ढूँढते व्याकुल हो जाती है। सकल कल्मष दूर हो जाते हैं और पाठ करते-करते हृदय इतना व्याकुल हो जाता है कि अश्रु की अविरल धाराएँ साधक के संज्ञान के बिना ही बहने लगती हैं। यह भाव का प्रवाह निरन्तर पाठ करते-करते स्वतः स्फुटित होता है और अन्ततः इष्ट के साक्षात्कार के साथ भक्ति की वह धारा अपना वांछित किनारा प्राप्त कर लेती है, इसीलिए साधक पाठ करते-करते यही कहता है कि—

एतावदेव जननि स्पृहणीयमास्ते
त्वद्वन्दनेषु सलिलस्थगिते च नेत्रे।
सान्निध्यमुद्यदरुणायतसोदरस्य
त्वद्विग्रहस्य सुधया परयाप्लुतस्य॥

— कल्याणवृष्टिस्तव।

श्रीविद्या की उपासना भोगदा एवं मोक्षदा दोनों है— 'भोगाय तु मोक्षाय ललिता तूभयप्रदा'। यह आराधना सकलपुरुषार्थप्रदाराधना है। इस सपर्या की अनेक पद्धतियाँ एवं स्तोत्र-संग्रह प्रकाशित हैं; परन्तु अभी तक ऐसा संकलन प्रकाशित नहीं हो पाया है जो साधकों के लिए बिना किसी कठिनाई के उनके साधनापथ में सहायक बन सके। अनेक पाठों के लिए अनेक ग्रन्थों का सहारा लेना इस उपासना-पद्धति को और भी श्रमसाध्य बना देता है। इसी कारण बहुत दिनों से किसी ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता समझी जा रही थी जो सर्वजनग्राह्य होने के साथ ही सकलफलदायक एवं त्रिपुराप्रीतिकारक हो। इस बात को ध्यान में रखते हुए ही प्रस्तुत ग्रन्थ संकलित किया गया। इससे इस दिशा में व्याप्त कमी बहुत स्तर तक दूर होगी तथा भक्तगण जगदम्बा से सम्बद्ध विविध स्तोत्रों का पाठ कर अपने मनोरथ की सिद्धि कर सकेंगे। तथा भगवती ललिताम्बा

उनके हृदय-सिंहासनारूढ़ा होकर उन्हें समष्टिगत तथा व्यष्टिगत दोनों प्रकार के कल्याणकारी कार्यक्रमों के संयोजन की प्रेरणा देंगी ।

प्रस्तुत ग्रन्थ में संक्षिप्त पूजा-पद्धति के अतिरिक्त ऐसे स्तोत्रों का संकलन किया गया है जो सहज अभ्यास के द्वारा पढ़े जा सकते हैं और इनका यथासौविध्य नित्य प्रति पाठ भी किया जा सकता है । इस परमपवित्र स्तोत्र-संग्रह के प्रेरणा-स्रोतों का स्मरण करना आवश्यक समझता हूँ । पूज्य शङ्कराचार्य जी के मुख्य सचिव श्री सुबुद्धानन्द ब्रह्मचारी, श्री रामकृष्णानन्द ब्रह्मचारी, राजयोग आश्रम, बरहटा, डॉ. कामेश्वर नाथ मिश्र, वाराणसी पीठ-पंडित आचार्य रविशंकर जी शास्त्री, श्री राजेन्द्र प्रसाद शास्त्री झोंतेश्वर, श्रीप्रकाश जी मिश्र धर्मसंघ वाराणसी तथा श्री रामभद्र जी उपाध्याय संपादक-हृषीकेश पंचांग, इन समस्त सुहृदजनों को अभिवादन करते हुए उनके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त कर कर्तव्य पूर्ण करने में सन्तोष प्राप्त कर रहा हूँ । पुस्तक के सम्पादन एवं व्यावहारिक स्वरूप देने में सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय छात्रसंघ के अध्यक्ष अनुज श्री उमाशंकर पाण्डेय ने जो परिश्रम किया उसे भुलाया नहीं जा सकता, निश्चय ही श्री पाण्डेय माँ जगदम्बा की कृपा के अर्ह हैं ।

प्रो. वि. वेङ्कटाचलम्, कुलपति, सं. सं. वि. वि. वाराणसी ने 'शिवसङ्कल्प' लिखकर न केवल हमारा उत्साहवर्द्धन किया; अपितु मार्गनिर्देशन भी किया है । एतदर्थ हम आपके परम आभारी हैं । डॉ. हरिश्चन्द्रमणि त्रिपाठी, प्रकाशनाधिकारी, सं. सं. वि. वि. वाराणसी, ईक्ष्यशोधक डॉ. हरिवंश पाण्डेय एवं तारा प्रिंटिंग वर्क्स के स्वत्वाधिकारी श्री रवि प्रकाश पण्ड्या ही वह तत्त्व हैं, जिनके सहयोग के विना यह ग्रन्थ मूर्त्तरूप न ले पाता । श्रीविद्या साधना में रत उन सभी साधकों के प्रति आभार व्यक्त किये बिना सन्तोष नहीं हो रहा है जिनकी सत्प्रेरणा से इस ग्रन्थ को अपनी अल्प बुद्धि से संकलित कर पाया ।

अगर श्रीनारायण स्वरूप जी ब्रह्मचारी ने इस पुस्तक के प्रकाशन का आर्थिक बोझ उठाने का आश्वासन न दिया होता, तो पुस्तक का प्रकाशन सम्भव न हो पाता, एतदर्थ इसका सारा श्रेय उन्हीं को जाता है ।

अन्त में वात्सल्यमयी करुणामयी 'माँ' के चरणों में प्रणाम करते प्रार्थना करता हूँ कि प्रस्तुत स्तोत्र-संग्रह से साधक लाभान्वित होंगे तभी मेरा श्रम सार्थक होगा ।

पूज्य जगद्गुरु शंकराचार्य जी महाराज 'सद्गुरुदेव' की आज्ञा से प्रकाशित यह पुस्तक श्रीविद्या साधकों के कल्याण का पथ बनती है तो इससे अधिक हमें क्या चाहिए ?

यत्रैव यत्रैव मनो मदीयं तत्रैव तत्रैव तव स्वरूपम् ।
यत्रैव यत्रैव शिरो मदीयं तत्रैव तत्रैव पदद्वयं ते ॥

हे माँ ! जहाँ-जहाँ मेरा मन जावे, वहाँ-वहाँ आपके स्वरूप का दर्शन करूँ एवं जहाँ-जहाँ मेरा सिर हो वहाँ-वहाँ आपके चरण-कमल हों ।

॥ इति शम् ॥

—संकलक

अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं द्वारकापीठाधीश्वर स्वामी श्रीस्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज का शुभाशीर्वाद

नैसर्गिक प्रेम प्राप्त करने की इच्छा जीव का स्वभाव है। इस संसार में प्रेम की समग्रता उसे माँ के वात्सल्य में मिलती है। बालमानस्था के वात्सल्यपूर्ण स्नेह को माँ से प्राप्त करने वाला आजीवन उसका स्मरण करता है। हमारे ऋषि मुनियों ने माँ के प्रेम के मूल में समस्त विश्व की पालयित्री महाशक्ति के प्रेम का दर्शन किया और कहा कि वह महामाया है। वह निर्मोह पशुपक्षियों में भी मोह उत्पन्न करके उनका स्वार्थ भुलाकर उनके पुत्रों का पालन करती है। वह परमेश्वरी चैतन्यस्वरूपा है, समस्त गुणों की अधिष्ठात्री है। तीन शरीर रूपी तीन पुरों की साक्षिणी होने के कारण उसे त्रिपुरसुन्दरी कहा जाता है। परमहंसी गङ्गा क्षेत्र श्रीधनम् उस जगज्जननी की उपासना का प्रमुख केन्द्र बनने जा रहा है।

साधकजन सात्विक उपचारों से उस करुणामयी की आराधना करके स्वयं सद्गुणसम्पन्न और शक्तिशाली बनकर समष्टि-व्यष्टि के समन्वित विकास में योगदान करें। सबको स्नेहमयी दृष्टि से देखते हुये सबको आह्लादित करें यह जगदम्बा से प्रार्थना है।

स्वरूपानन्द सरस्वती

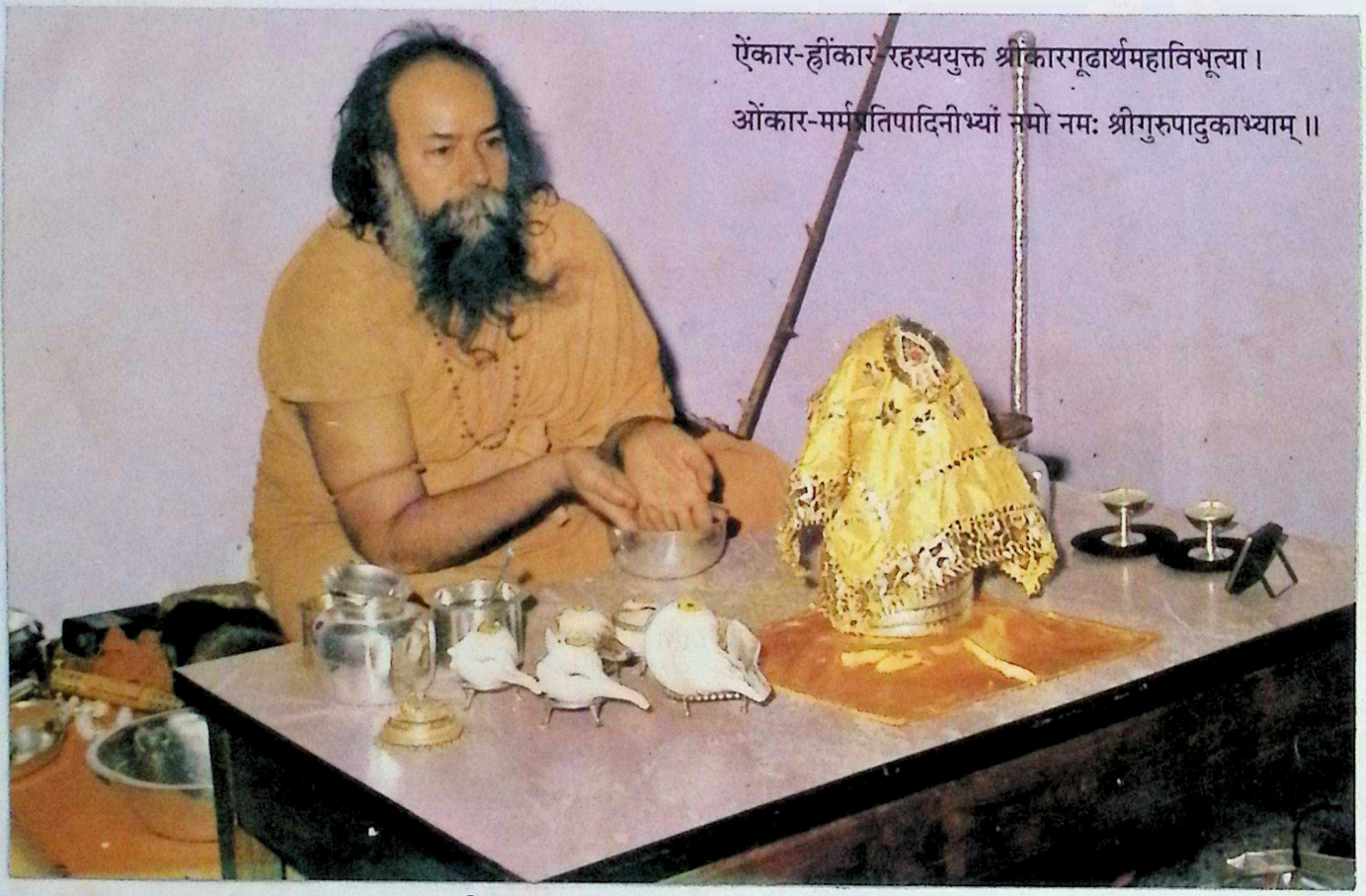

श्रीचक्राराधनतत्पर पूज्य महाराजश्री

श्रीविद्या साधना के वर्तमान आचार्य अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज का संक्षिप्त परिचय

भारत की पवित्र तपोभूमि में वसुन्धरा ने समय-समय पर महान् तेजस्वी पुरुषों को जन्म दिया है। ऐसे ही अवतारी पुरुषों से हमारा भारत, सनातन वैदिक धर्म उत्तुंग हिमालय की तरह स्थिर व स्थित हैं। धार्मिक अनुष्ठानों एवं अध्यात्मज्ञान के तत्त्वों का पोषक यह भारत संसार के समक्ष इतरदेशों की अपेक्षा अपना मस्तक ऊँचा किए हुए खड़ा है। ऐसे अध्यात्मराज्य के राजा महापुरुषों का आदर्श स्वीकार कर हमें अपने जीवन को उन्नत बनाना चाहिए।

पुस्तक पढ़ने से जिसका ज्ञान नहीं होता, वह अलभ्य ज्ञान संत महापुरुषों की सेवा से सहज ही प्राप्त हो जाता है; क्योंकि संतों का ज्ञान ही आचरण है। भगवान् आदि शंकराचार्य द्वारा स्थापित चार पीठों में से दो पीठों (द्वारका एवं ज्योतिष्पीठ) को सुशोभित करने वाले स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज जैसी दिव्य-विभूति का संक्षिप्त परिचय अनधिकारी चेष्टा है, तथापि सद्गुरुदेव भगवान् के चरण-कमलों में अपनी श्रद्धा-भक्ति, प्रेम-पूर्ण पुष्पाञ्जलि प्रदान करने के लोभ का संवरण नहीं कर पा रहा हूँ।

जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज करोड़ों सनातन हिन्दु-धर्मावलम्बियों के प्रेरणापुंज और उनकी आस्था के ज्योति स्तम्भ हैं; लेकिन इससे भी परे वे एक उदार मानवतावादी सन्त हैं। परमवीतराग, निःस्पृह और राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत एक परमहंस साधु, जिनके मन में दलितों-शोषितों के प्रति असीम करुणा है। उनके विषय में सम्पूर्णता के दावे के साथ कुछ भी लिख पाना किसी के लिये भी असम्भव है। इसलिये क्योंकि

पूज्य श्रीचरण एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व के धनी हैं। आप जरा उनके जीवन पर, उनके कार्यों पर एक नजर तो डालिये, कहीं भी किसी तरह के अभाव का अनुभव, आपको नहीं होगा। अब इसे भला किसी तरह आप अभिव्यक्ति दे सकेंगे ? पूर्णता को अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। हाँ,असम्पूर्ण से उसकी ओर संकेत अवश्य किया जा सकता है। वैसे ही जैसे कोई अपने दोनों हाथ फैलाकर महाकाश के महत्त्व को अभिव्यक्त करे।

महिम्न स्तोत्र के रचियता ने भगवान् शंकर की महिमा को इन शब्दों से अभिव्यक्त किया है कि— यदि सारी पृथ्वी ही एक कागज हो, समुद्र स्याही हो, कल्पवृक्ष की शाखायें लेखनी हों और स्वयं सरस्वती ही सारा समय लिखती रहें तो भी उस पूर्णता को अभिव्यक्त नहीं कर सकेंगी। इतिहास साक्षी है कि वे ही भगवान् शंकर आदि शंकराचार्य के रूप में अवतरित हुए और उन्होंने अपने छोटे-से जीवन के बड़े-बड़े कार्यों से इस देश को सम्पूर्ण बनाकर अपनी सम्पूर्णता की ओर संकेत किया। जो स्वयं पूर्ण है वही अपूर्ण को पूर्ण कर सकता है।

उन्हीं भगवान् आदिशंकराचार्य के द्वारा प्रवर्तित परम्परा की एक नहीं दो-दो कड़ियों को पूर्णता प्रदान कर रहे हैं— पूज्य श्रीचरण। ज्योतिष्पीठ और द्वारका-शारदापीठ। आज समय वह नहीं है, परिस्थितियाँ भी वह नहीं हैं, फिर भी पूज्य श्रीचरणों ने जो कुछ किया वह उनके महिमामय सम्पूर्ण व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति के लिये पर्याप्त है। दूसरा कोई यदि उसे अभिव्यक्त करने का प्रयत्न करेगा तो वह निदर्शन मात्र होगा। यहाँ वही करने का प्रयास किया जा रहा है।

पूज्य महाराजश्री का जन्म संवत् १९८० के भ्राद्रपद मास के शुक्लपक्ष की तृतीया (तदनुसार २ दिसम्बर, १९२४) के शुभ दिन भारत के हृदयस्थल माने जाने वाले मध्यप्रदेश के सिवनी जिले के दिघोरी गाँव में सनातन हिन्दू परम्परा के कुलीन ब्राह्मण परिवार में पिताश्री धनपति उपाध्याय एवं माता गिरिजा देवी के यहाँ हुआ। माता-पिता ने विद्वानों के आग्रह पर इनका नाम पोथीराम रखा। पोथी अर्थात् शास्त्र, मानो यह शास्त्रावतार हों। ऐसे संस्कारिक परिवार में पूज्यश्री के संस्कारों को जागृत होते देर न लगी और मात्र नव वर्ष की कोमल वय में आपने गृह त्याग कर धर्म-यात्राएँ प्रारम्भ कर दीं। भारत के

प्रत्येक प्रसिद्ध तीर्थों, स्थानों और संतो के दर्शन करते हुए आप काशी पहुँचे। वहाँ आपने ब्रह्मलीन स्वामी करपात्री जी महाराज एवं स्वामी महेश्वरानन्द जी जैसे विद्वानों से वेद-वेदांग, शास्त्र-पुराणेतिहास सहित स्मृति एवं न्यायग्रन्थों का विधिवत् अनुशीलन किया।

यह वह काल था जब भारत को अंग्रेजों से मुक्त करवाने की लड़ाई चल रही थी। महाराजश्री भी इस पक्ष के थे, इसलिये जब १९४२ में 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का घोष मुखरित हुआ तो महाराजश्री भी स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े और मात्र १९ वर्ष की अवस्था में 'क्रांतिकारी साधु' के रूप में प्रसिद्ध हुए। पूज्य श्रीचरणों को इसी सिलसिले में वाराणसी और मध्यप्रदेश के जेलों में क्रमशः ९ और ६ महीने की जेलें भोगनी पड़ीं। महापुरुषों के संकल्प की शक्ति से १९४७ में देश आजाद हुआ। अब पूज्यश्री में तत्त्वज्ञान की उत्कण्ठा जागी।

भारतीय इतिहास में एकता के प्रतीक सन्त श्रीमदादिशंकराचार्य द्वारा स्थापित अद्वैतमत को सर्वश्रेष्ठ जानकर, आज के विखंडित समाज में पुनः शंकराचार्य के विचारों के प्रसार को आवश्यक जान और तत्त्वचिन्तन के अपने संकल्प की पूर्ति हेतु १९५० में ज्योतिष्पीठ के ब्रह्मलीन शंकराचार्य स्वामी श्रीब्रह्मानन्द सरस्वती जी महाराज से विधिवत् दण्डसंन्यास की दीक्षा लेकर 'स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती' नाम से प्रसिद्ध हुए।

जिस भारत की स्वतंत्रता के लिए आपने संग्राम किया था, उसी भारत को आजादी के बाद भी अखण्ड, शान्त और सुखी न देखकर एवं भारत के नागरिकों को दैहिक, दैविक एवं भौतिक तापों से मुक्ति दिलाने हेतु स्वामी करपात्री जी महाराज द्वारा स्थापित 'रामराज्य परिषद्' पार्टी के अध्यक्ष पद से सम्पूर्ण भारत में रामराज्य लाने का प्रयत्न किया और हिन्दुओं को उनके राजनैतिक अस्तित्व का बोध कराया।

ज्योतिष्पीठ के शंकराचार्य स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के ब्रह्मलीन हो जाने पर सन् १९७३ में द्वारकापीठ के शंकराचार्य एवं स्वामी करपात्री जी महाराज सहित देश के तमाम संतो-विद्वानों द्वारा आप ज्योतिष्पीठ पर अभिषिक्त हुए और ज्योतिष्पीठाधीश्वर शंकराचार्य के रूप में हिन्दु-धर्म को अमूल्य संरक्षण देने लगे।

आपका संकल्प है— विश्व का कल्याण। इसी शुभ भावना को मूर्तरूप देने के लिये आपने बिहार प्रान्त के सिंहभूम जिले में 'विश्व-कल्याण आश्रम' की स्थापना की। जहाँ जंगल में रहने वाले आदिवासियों को भोजन, औषधि एवं रोजगार देकर उनके जीवन को उन्नत बनाने का प्रयास किया। सम्प्रति दो करोड़ की लागत से एक विशाल एवं आधुनिक अस्पताल वहाँ निर्मित हो चुका है, जिससे क्षेत्र के तमाम गरीब आदिवासी लाभान्वित हो सकेंगे।

पूज्य महाराजश्री ने समस्त भारत की आध्यात्मिक उन्नति को ध्यान में रखकर 'आध्यात्मिक उत्थान-मण्डल' नामक संस्था स्थापित की। जिसका मुख्यालय भारत के मध्यभाग में मध्यप्रदेश के नरसिंहपुर जिले में रखा। जहाँ पूज्य महाराजश्री ने ही राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी भगवती का विशाल मंदिर बनाया है। सम्प्रति सारे देश में आध्यात्मिक उत्थान-मण्डल की १२०० से अधिक शाखाएँ लोगों में आध्यात्मिक चेतना के जागरण एवं ज्ञान-भक्ति के प्रचार के लिये समर्पित हैं।

द्वारका-शारदापीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री अभिनव सच्चिदानन्दतीर्थ जी महाराज के ब्रह्मलीन होने पर उनके इच्छापत्र के अनुसार २७ मई, १९८२ को आप द्वारकापीठ की गद्दी पर अभिषिक्त हुए और आदिशंकराचार्य द्वारा स्थापित चार पीठों की परम्परा में एक साथ दो पीठों पर विराजने वाले पहले शंकराचार्य के रूप में प्रसिद्ध हुए।

सन् १९८५ से १९८८ तक गुजरात में तीन वर्ष तक अकाल पड़ा, जिससे गुजरात का पशुधन चारे के अभाव में समाप्तप्राय हो जाने की स्थिति में आ गया, तब पूज्य महाराजश्री ने ५ मालगाड़ियों से लगभग एक करोड़ का चारा देश के अन्य भागों से गुजरात भिजवाया।

रामजन्मभूमि के प्रश्न पर पूज्यश्री ने हिन्दुओं की अस्मिता एवं धार्मिक अधिकारों को केन्द्र बनाकर 'रामजन्मभूमि पुनरुद्धार समिति' के तत्त्वावधान में एक आन्दोलन खड़ा किया। इसी प्रश्न पर पूज्य महाराजश्री को गिरफ्तार भी होना पड़ा। चित्रकूट, झोंतेश्वर और फतेहपुर के विराट् साधु-महात्मा सम्मेलनों के द्वारा आपने राममन्दिर निर्माण के विचार को सन्त समाज का व्यापक समर्थन व ठोस आधार प्रदान किया। अन्ततः शृंगेरी में चतुष्पीठ सम्मेलन के द्वारा आपने

इस चिन्तन को संकल्प के रूप में गठित कर सनातन-धर्म के व्यापक समर्थन की आधारभूमि खड़ी कर दी। महाराजश्री का प्रारम्भ से ही मानना है कि रामजन्मभूमि के मुद्दे को आस्था से हटाकर राजनीतिकमुद्दा न बनाया जाय। इसलिए आपने चारों शंकराचार्यों सहित ऐसे सन्तों को लेकर श्री रामजन्म-भूमि रामालय न्यास का गठन किया जो राजनीति से दूर हटकर राममन्दिर निर्माण हेतु तत्पर हैं। पूज्यश्री आज भी रामजन्मभूमि, कृष्णजन्मभूमि और काशी विश्वनाथ के उद्धार हेतु सतत प्रयत्नशील हैं।

एतदातिरिक्त देश भर में महाराजश्री द्वारा अनेकों संस्कृत विद्यालय, बाल विद्यालय, आयुर्वेद औषधालय, अनुसंधानशाला, आश्रम, आदिवासी शाला, गौशाला और अन्नक्षेत्र जैसी प्रवृत्तियाँ संपादित हो रही हैं। तथा आप स्वयं भी अनवरत भ्रमण करते हुए संस्थाओं का सम्यक् संचालन व धर्मप्रचार कर रहे हैं।

ऐसे पुनीत कार्यों से युक्त शंकरावतार पूज्य गुरु जी के चरणों में कोटिशः वन्दन।

मध्याञ्चलीयनरसिंहपुरस्थराज-
राजेश्वरीभगवतीसुविशालधाम।
निर्माप्य किञ्च शतशः परिकल्प्य संस्थाः
स्वामिन्! मनुष्यकुलमङ्गलमातनोषि॥

अद्याभिनन्द्य करपात्रयतीश्वरस्या-
शीर्वागुदित्वरतदात्ममहात्मवर्यम्।
पीठद्वयाधिपतिविश्वगुरुस्वरूपा-
नन्दश्रियं यतिवरं प्रमुदं व्रजामः॥

■

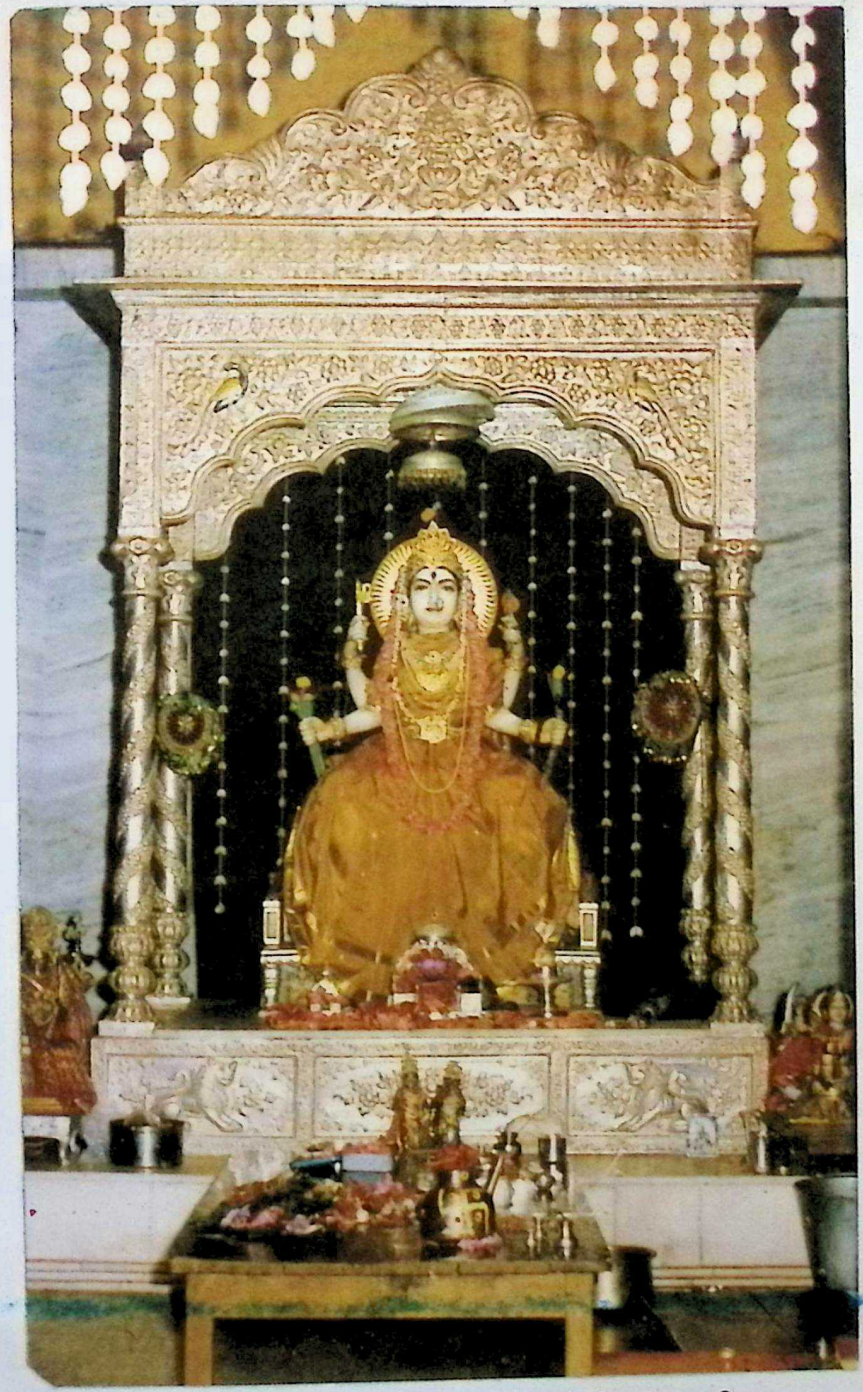

आद्याशक्ति श्रीविद्या राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी

श्रीविद्यापीठ-मन्दिर, झोंतेश्वर, नरसिंहपुर, मध्यप्रदेश

श्रीविद्यापीठ : झोंतेश्वर

(एक परिचय)

कल्पान्तोदितचण्डभानुविलसद् देहप्रभामण्डिता
कालाम्बोदसमानकुन्तलभरा कारुण्यवारान्निधिः
काद्यर्णाङ्कितमन्त्रराजविलसत् कूटत्रयोपासिता
श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥

मध्यप्रदेश के हृदयस्थल नरसिंहपुर जिले के मध्य 'श्रीवनम्' नामक सुरम्य वन में स्थित परमहंसी गंगा आश्रम पूज्य जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज की तपःस्थली है।

पूज्य महाराजश्री ने अपने तपःकाल में ही (लगभग १९५० से १९५५) उस स्थान पर परमहंसों की प्रेरणा प्राप्त कर माँ का शक्तिपीठ स्थापित करने का संकल्प लिया था। आप जन्म से ही शक्ति के उपासक थे। अपनी शक्तिमयी माँ गिरिजा देवी की छाया से मुक्त होते ही आप जगदम्बा की गोद में क्रीड़ा करने लगे थे। फिर भला माँ अपने दुलारे वत्स के लिए कुछ क्यों न करतीं? प्रत्यक्ष है— संसार के सर्वोच्च पद (वह भी एक नहीं दो-दो पीठों) पर अपने बेटे को माँ ने बैठाया। अस्तु, माँ का प्यार मिलते ही इस योगी ने अपनी तपः-स्थली में विशाल श्रीविद्यापीठ मन्दिर निर्माण करवाकर दिसम्बर, १९८२ में परम-पूज्य शृङ्गेरीपीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीमदभिनवविद्या-तीर्थजी महाराज के करकमलों से प्राण-प्रतिष्ठा करवाकर राष्ट्र के शक्तिपीठों में एक नया इतिहास जोड़ा, जो कि शक्ति-उपासकों के लिए मुक्ति का द्वार बना हुआ है।

बात यहीं समाप्त नहीं होती। पूज्य महाराजश्री मठों में रहकर विश्राम या आनन्द लेने वाले महापुरुषों में से नहीं हैं, इसीलिए सनातनधर्म के प्रचारार्थ आप सतत भ्रमण करते रहते हैं। आपने देश के कोने-कोने में शक्तिपीठ स्थापित करने का पावन संकल्प लिया है, जिस क्रम में अभी तक आपने श्रीविद्यापीठ,

झोंतेश्वर के अतिरिक्त ज्योतिर्मठ (जोशीमठ), सम्राट् पैलेस गढ़रोड मेरठ, विश्वकल्याण आश्रम सिंहभूम बिहार, कोन्नगर कलकत्ता पवई, जबलपुर, श्रीविद्यामठ वाराणसी, गणेशगंज, सिवनी, मोहनगढ़ी पन्ना आदि स्थानों में भगवती राजराजेश्वरी की स्थापना करवाई है।

परन्तु इन सभी स्थानों में श्रीविद्यापीठ, झोंतेश्वर प्रमुख, प्रथम और श्रीचरणों को प्रिय है। हिमालय की गोद में जैसे पार्वती विराजती हैं, वैसे ही 'श्रीवनम्' में माँ भगवती राजराजेश्वरी विराजमान हैं। उनकी साक्षात् सत्ता के फलस्वरूप यह स्थान भारत के पाँचवे धाम के रूप में विख्यात हो गया है।

— सदानन्द ब्रह्मचारी

■

श्रीयन्त्रम्

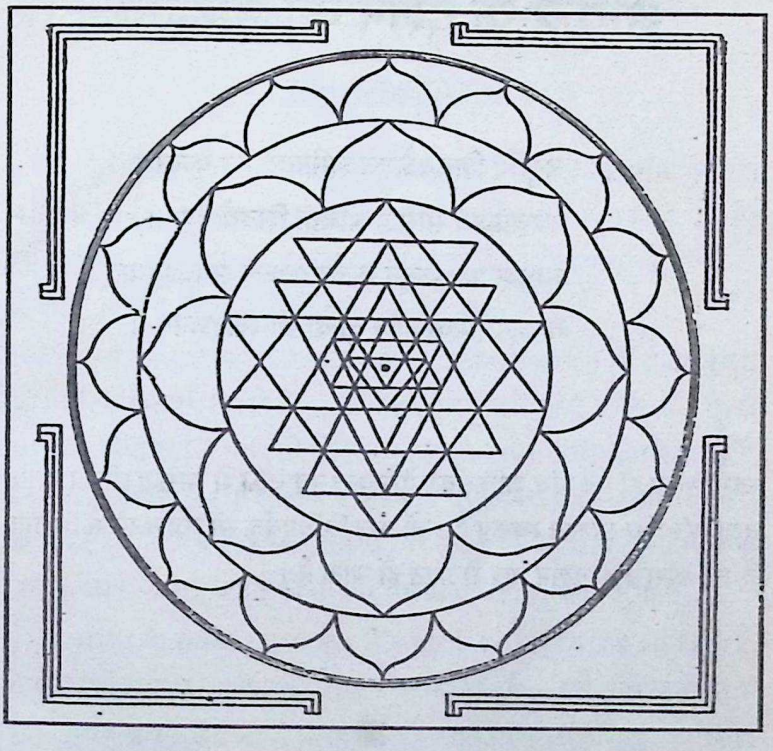

बिन्दुत्रिकोणवसुकोणदशारयुग्म-
मन्वस्त्रनागदलसंयुतषोडशारम् ।
वृत्तत्रयञ्च धरणीसदनत्रयञ्च
श्रीचक्रमेतदुदितं परदेवतायाः ॥

श्रीयन्त्र के दर्शन का माहात्म्य

चतुर्भिः शिवचक्रैश्च शक्तिचक्रैश्च पञ्चभिः ।
नवचक्रैश्च संसिद्धं श्रीचक्रं शिवयोर्वपुः ॥
सम्यक् शतं क्रतून् कृत्वा यत्फलं समवाप्नुयात् ।
तत्फलं समवाप्नोति कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ॥

चार शिवचक्रों एवं पाँच शक्तिचक्रों, ऐसे कुल नव चक्रों से संसिद्ध श्रीचक्र शिव तथा शक्ति का साक्षात् स्वरूप है । जो फल विधिपूर्वक सौ यज्ञ करने से मिलता है, वह श्रीयन्त्र के दर्शन मात्र से प्राप्त हो जाता है ।

■

आद्याशक्ति श्रीविद्या राजराजेश्वरी

संक्षिप्त स्वरूप-वर्णन

'देवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया' से निश्चित है कि शक्ति के बिना कोई भी कार्य नहीं किया जा सकता। वह शक्ति शिव से सम्पन्न होती है और शक्ति एवं शक्तिमान् में भेद देखना सर्वथा गलत है। शक्ति शक्तिमान् की होती है, शक्ति से रहित शिव कोई भी कार्य करने में असमर्थ है।

उन्हीं शक्तियों में आद्याशक्ति श्रीविद्या राजराजेश्वरी है। माँ राजराजेश्वरी को विभिन्न नामों से पुकारते हैं— ललिता, त्रिपुरसुन्दरी आदि। त्रिपुरसुन्दरी की साधना ही श्रीविद्या है, पंचदशी, षोडशी, महाराज्ञी कामेश्वरी, पराभट्टारिका आदि इन्हीं के ही स्वरूप हैं। माँ ललिता महात्रिपुरसुन्दरी अनेक कोटि ब्रह्माण्ड- जननी तो हैं ही, इसके साथ संसार के समस्त सार प्रपंच की अधिष्ठात्री आनन्दरूपा शिवशक्ति से सम्पन्न जगत् की उत्पत्ति, पालन एवं संहार की हेतु भी हैं।

संसार के समस्त मनुष्य मात्र में सुखप्राप्ति की एकमात्र इच्छा रहती है, येन केन प्रकारेण सुखप्राप्ति हो। सुख प्राप्त करने के मनीषियों ने दो मार्ग बताये हैं— प्रथम श्रेय, दूसरा प्रेय। श्रेयमार्ग से परमार्थ मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है और प्रेय मार्ग से पारलौकिक सुख यानि स्वर्गादि काम भोग; परन्तु इन दोनों के लिए ही धर्म की आवश्यकता होती है और धर्मसाधन के लिए तन के साथ धन की आवश्यकता होती है और इसकी पूर्ति के लिए हमारे पूर्वजों, ऋषि-महर्षियों ने विभिन्न प्रकार की साधना-पद्धतियों को इष्ट कर निर्देशित किया। इन्हीं क्रमों में यह क्रम है— श्रीविद्या-क्रम। इस साधना-क्रम से साधक की वे दोनों अपेक्षाएँ पूर्ण होती हैं जो उसके जीवन में आवश्यक हैं।

भगवती राजराजेश्वरी माँ के साधकों के लिए भोग-मोक्ष दोनों ही प्राप्त होते हैं— 'श्रीसुन्दरीसाधनतत्पराणां भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव'। इसी विशेषता से शक्ति-साधकों की संख्या में वृद्धि पाई जाती है। अन्य देवी-देवताओं के सम्बन्ध में कहा जाता है कि उन सब की साधना से मनोकामनानुसार या तो भोग या मोक्ष दो में से एक ही प्राप्त होता है; परन्तु माँ भगवती राजराजेश्वरी की उपासना

से जीवनपर्यन्त भोग उपरान्त मोक्ष मिलता है। संसार के समस्त पदार्थों की जो शक्ति सम्पन्न है वह 'श्रीविद्या' है, और जो पदार्थ शक्तिसम्पन्न हैं वे ही भगवान् कामेश्वर हैं। अतः भगवती की आराधना ही एक ऐसी साधना है जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चतुर्दिक् पुरुषार्थ प्रदान करती है। कहा भी गया है—

"या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः" ॥

माँ का महत्त्व, शक्ति का महत्त्व और संसार में जो कुछ है यानि शिव का महत्त्व वह माँ के कारण ही है। माँ के महत्त्व का गान शब्द से नहीं किया जा सकता। अपनी सन्तति के हित के लिए "माँ" अपने परमप्रिय पति को भी कदाचित् छोड़ देती है; परन्तु वात्सल्य, त्याग, तपस्या और सहिष्णुता की प्रतिमूर्ति माँ भगवती अपने बालक, अपने साधक, अपने भक्त को कभी नहीं छोड़ सकती। माता शब्द में ही कितनी अनिर्वचनीय पवित्रता है, अपनी सन्तान के लिए माँ हिमालय के जैसी निर्मल और गंगा के जैसी पवित्र है। यदि वसुन्धरा पर कोई वस्तु है जो भगवान् के प्रेम की अधिक से अधिक स्मृति दिला सके, वह हमारी माँ है। माँ की गोद में पहुँचकर बालक "अभय पा गया हूँ" ऐसा ही मानता है। अपने बड़ों से भयभीत होने पर माँ का आँचल ही उसका सहारा होता है। कितने ही भयभीत बालक को माँ जब अपने आँचल में "साड़ी के पल्लू" में ढँक लेती है, बालक सोचता है कि मैं किसी अभेद्य किले की दीवारों में सुरक्षित हूँ। मातृत्व का वह श्रोत कभी नष्ट न होने वाला अबाध रूप से बहता रहता है। गरीबी से अमीरी, सुख-दुःख, हर परिस्थिति में सहिष्णु वह मातृत्व उत्तुंग हिमालय की भाँति अक्षुण्ण रूप से देदीप्यमान होता है। बच्चे के लिए माँ देवता है और माँ के लिए बच्चा भगवान्। "माँ" शब्द का प्रयोग हम जिसके लिए करते हैं उसकी बराबरी विश्व की किसी मूल्यवान् वस्तु से नहीं की जा सकती। ऐसा इसलिए कि हमारी सत्ता में माँ विशेष है। बालक बड़े से बड़ा अपराध करके भी माता की क्षमाशीलता को ध्यान में रखकर वह अपने को सुरक्षित समझता है और कुछ तो क्या भूख-प्यास जैसी साधारण समस्या के लिए भी हम माँ की ही आराधना करते हैं— **"तृषाक्षुधार्ताः जननीं स्मरन्ति"**। तभी तो माँ के ममत्व की एक बूँद अमृत के समुद्र से भी ज्यादा मीठी है।

भारतीय संस्कृति विश्व की अतिप्राचीन संस्कृति है। "मातृदेवो भव" इस संस्कृति का प्रथम सूत्र है। वही माँ श्री है, श्रीविद्या है, राजराजेश्वरी है। इनका ध्यान करके जो साधक, शिशु अपनी अस्फुट वाणी से ही सही सारी श्रद्धा को कृतज्ञता को भरकर पुकारता है वह जननी शक्ति सौन्दर्यमयी, करुणा से परिपूर्ण, वात्सल्यमयी, माता अपने शिशु के पास दौड़ पड़ती है। पुष्प की कोमलता, सागर की गम्भीरता, गंगा की पवित्रता, धरा की सहिष्णुता, चन्द्रमा की शीतलता एक साथ जहाँ मिल जावे उसका नाम होगा "माँ"। एक छोटा-सा शब्द 'माँ' लघुतर से लघुतम होता गया। इतने में ही उसकी प्रसन्नता में सृष्टि का सृजन-कृपा में पालन और शेष में प्रलय होता है। सच्चरित्रता से भरा हुआ वह पुत्र जब ऐसी माँ की आराधना करेगा तब क्या उस पुत्र को इस विश्व में कुछ भी अप्राप्य, अगम्य होगा? प्राचीनकाल से ही माँ की ममता में समस्त ऋषि-महर्षि आराधना (साधना) करते हुए मातृत्व में ही लीन हो पाते थे। उसी परम्परा को बढ़ाने वाले भगवान् दत्तात्रेय, सुमेधा, परशुराम जी, हयग्रीव, अगस्त्य, लोपामुद्रा आदि ऋषि माता की गोद में अभी भी उत्क्षेपण कर रहे हैं। संसार में मातृप्रेम सर्वश्रेष्ठ होता है। हर मनुष्य के हृदय में अपनी जन्मदात्री के प्रति, आराध्या के प्रति स्वाभाविक प्रेम होता है। प्राकृतिक सुन्दरता के सुरम्य मनोहारि परिधान के मध्य आदि मानव ने जब आँखें खोलीं तो अपने आपको ममतागयी माँ के चरणों में पाया। उसका स्नेहभरा हाथ सिर को सहला रहा था। सृष्टि की कल्पना माता की ही तो क्रीड़ा है। जिस तरह एक माँ अपने पुत्र के जन्म से, उसके लालन-पालन में ही अपना सब कुछ न्यौछावर कर देती है, उसी तरह यह जगद्धात्री माँ समस्त सृष्टि की कल्पना को अपना पुत्र समझकर इस क्रीड़ास्थली पर आमोद-प्रमोद से लालन में तत्पर है। प्रकृति के इस स्नेह और ममता से भरे प्लावित में मानव हृदय क्या कभी ऐसी माँ के प्रति कृतघ्न हो सकता है?

अतः चलें उस पथ की ओर जो हमारा अभीष्ट ममता के समुद्र में डुबोकर माँ की गोद को प्राप्त कराने वाला है। भगवती राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी ही वह तत्त्व हैं जो साधकों को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चतुर्वर्ग फलप्राप्ति के लिए श्रेयस्कर है। हमारी माँ के प्रति कृतज्ञता ही उसकी पूजा है।

प्राकट्य

प्राचीन भारतीय संस्कृति में ये परम्परा रही है कि किसी तत्त्व को जानने के पूर्व उसके सम्प्रदाय को जाना जाय। क्रमानुसार शिष्य-परम्परा से शिष्य-प्रशिष्यों से जो क्रम अनुवर्तन हो और उसका ज्ञान इसी क्रम से वर्धित होता जाय, इसी क्रम-परम्परा का नाम "सम्प्रदाय" है। श्रीविद्या-परम्परा में श्रीविद्या के प्रवक्ता सुमेधा ऋषि हुए। उन्होंने यह विद्या, परशुराम से प्राप्त की। परशुराम ने भगवान् दत्तात्रेय से, दत्तात्रेय ने ब्रह्मा से, ब्रह्मा ने विष्णु से और विष्णु ने शिव से।

त्रिपुरारहस्य नामक ग्रन्थ में भगवती राजराजेश्वरी के चरित्रों के आख्यान मिलते हैं। प्रसंग आता है— एक बार देवताओं के बीच "अहंकार" ने जन्म लिया और समस्त देवगण "मैं सबसे बड़ा हूँ," इस भाव में आकर एक की दूसरे अवहेलना करने लगे। इन्द्रादि प्रमुख देवता भगवान् विष्णु के पास, जो क्षीरसागर में कमलासन कर लेटे हुए ब्रह्मा जी को अस्फुट उपदेश कर रहे थे, पहुँचे। सभी देवगण प्रणाम कर विष्णु के आदेशानुसार उनके समकक्ष बैठ गये। फिर विष्णु के प्रश्न पर इन्होंने अपने आगमन का कारण यह बताया कि हम लोगों में परस्पर बहुत विवाद छिड़ा हुआ है और उसके कारण बहुत अशान्ति हो रही है। इस विवाद को मिटाने के लिए ही आपकी सेवा में हम सब उपस्थित हुए हैं। इन्द्र ने कहा कि एक दिन जब मैं देवसभा में बैठा देवताओं को अपना माहात्म्य बता रहा था कि मैं सब देवताओं का राजा हूँ, मुझे पूरी शक्ति और सर्वज्ञता प्राप्त है, मेरे शासन में ही आप लोगों को सदा रहना चाहिए, तब बीच में ही अग्नि ने खड़े होकर कहा कि आपका यह अभिमान सत्य नहीं। सबसे बड़ी शक्ति तो मुझे प्राप्त है कि मैं समस्त वस्तुओं को क्षण-भर में नष्ट कर सकता हूँ। मैं ही सब पार्थिव पदार्थों को बनाता हूँ और मैं ही बिगाड़ता हूँ। इसलिए, सबसे श्रेष्ठ तो मुझे मानना चाहिए। अग्नि अपना महत्त्व कह ही रहे थे कि बीच में ही सोम बोल उठे कि नहीं, तुम्हारा जीवन तो मेरे ही आधार पर है। यदि मैं तुम्हें भोजन नहीं दूँ तो तुम कभी के समाप्त हो जाओ। जगत् के सम्पूर्ण तत्त्व

तो मेरे ही परिणामभूत हैं। हमारे बिना किसी पदार्थ की सृष्टि नहीं हो सकती। तुम तो केवल मेरे अंगों की भिन्न-भिन्न रूप में व्यवस्था मात्र करते हो। तुम तो मेरे अनुयायी हो। इसलिए सबसे श्रेष्ठ तो मैं ही हूँ। इसी बीच वायु बोल उठे कि तुम सब वृथा अभिमान कर रहे हो। मेरे समान शक्ति तो किसी में भी नहीं है। मैं एक निमेष के लिए भी अपनी गति बन्द कर दूँ तो संसार के सब प्राणी मरणासन्न हो जायें। जड़ पदार्थों को भी मैं जहाँ चाहूँ उड़ा ले जा सकता हूँ। वृष्टि आदि तो मेरे ही कारण होती है। अग्नि मेरी सहायता के बिना नहीं जल सकते। सोम का अवयवसन्निवेश भी मैं ही बनाता हूँ। इसलिए सबसे श्रेष्ठ तो मैं ही हूँ। हे प्रभो ! इस प्रकार हम लोगों में विवाद उठ खड़ा हुआ और वह किसी प्रकार शान्त नहीं हो पा रहा है। यदि यह विवाद बढ़कर परस्पर संघर्ष का रूप धारण कर लेगा तो जगच्चक्र का परिचालन असम्भव हो जायेगा। अतः आपकी सेवा में हम सब उपस्थित हैं कि वस्तु-स्थिति को स्पष्ट करके हमारा विवाद शान्त कर दें।

इन्द्र की बात सुनकर विष्णु मुस्कुराये और एक बार ब्रह्मा की ओर देखा और उन्होंने ब्रह्मा से कहा कि इन्हें मुख्य तत्त्व का आप उपदेश कर दें; किन्तु ब्रह्मा ने निवेदन किया कि भगवन् ! इन अभिमानग्रस्तों की समझाना मेरी शक्ति के बाहर है। आप ही कृपाकर इन्हें मुख्य तत्त्व का उपदेश दे सकते हैं। विष्णु ने कहा कि परतत्त्व का उपदेश तो मैं भी नहीं कर सकता। मैं भगवान् शंकर का स्मरण करता हूँ। वे ही यहाँ आकर अपने उपदेश द्वारा इनका विवाद शान्त करेंगे। भगवान् विष्णु आदि के स्मरण करने पर शंकर भगवान् वहाँ पधारे। अभ्युत्थान और कुशल-स्वागत के अनन्तर सब वृत्तान्त सुनकर भगवान् शंकर ने कहा कि इन देवताओं को जगदम्बा ने मोहित किया है। उस भगवती की कृपा के बिना इनका मोह शान्त नहीं हो सकता, इसलिए उचित है कि हम सब मिलकर भगवती का ध्यान और स्तुति करें। वही कृपा कर प्रादुर्भूत होंगी और इनका मोह दूर करेंगी। जब ब्रह्मा, विष्णु और महेश ध्यानमग्न भगवती की स्तुति करने लगे तब अकस्मात् घोर महाभयानक शब्द हुआ। उस भयानक शब्द से वहाँ पर बैठे सभी देवता मूर्च्छित-प्राय हो गये और ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश खड़े होकर स्तुति करने लगे।

प्रादुर्भवुः परतेजःपुञ्जो ह्यनुत्तमः ।
तन्मध्यतः समुद्भूतं चक्राकारानुत्तमम् ।
तन्मध्ये तु महादेवीमुदयार्कसमप्रभाम् ॥ (ब्रह्माण्डपु. १३७० ॥)

चैतन्य-लाभ होने पर देवताओं ने देखा कि एक तेजोमय, किन्तु सौम्य मूर्त्ति दूर स्थित दिखाई दे रही है । उन्हें उस दिव्य रूप का तत्त्व कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि यह क्या अद्भुत वस्तु है । देवताओं ने परामर्श कर पहले अग्नि को भेजा कि तुम जाकर इसके रूप का ज्ञान प्राप्त करो कि यह क्या है । अग्नि ने समीप जाकर जब उस अद्भुत मूर्ति से पूछा कि आप कौन हैं ? तब वहाँ से शब्द हुआ कि पहले तुम अपना परिचय दो और बतलाओ कि क्या शक्ति रखते हो । अग्नि ने बड़े अभिमान से कहा, "मैं सब का प्राण रूप, सब वस्तुओं में रहने वाला अग्नि हूँ । मुझमें इतनी शक्ति है कि मैं क्षणमात्र में सम्पूर्ण जगत् को भस्म कर सकता हूँ" । इस पर उस मूर्त्ति ने एक तिनका (तृण) उसके सामने रखा और कहा कि पहले इसे भस्म करके दिखाओ । अग्नि ने अपनी सम्पूर्ण शक्ति उस तृण पर लगा दी; किन्तु उसे न जला सके । वे बिलकुल निस्तेज होकर लौट आये । उन्होंने अन्य देवताओं से कहा कि मैं इस अद्भुत तत्त्व को नहीं पहचान सका । अब आप लोग यत्न कीजिए । तत्पश्चात् सोम, वायु आदि गये और वे भी उस तृण को न तो गीला कर सके, न उड़ा सके । अन्त में इन्द्र अपने विविध आयुधों से सुसज्जित होकर उस आश्चर्यमय रूप के सामने पहुँचे । इन्द्र का वज्र भी उस तृण का कुछ नहीं बिगाड़ सका और इन्द्र निस्तेज हो गये । सभी के हतप्रभ हो जाने पर और उनके द्वारा बहुत स्तुति-प्रार्थना करने पर, उस महातेज से एक सौम्य मूर्त्ति प्रकट हुई । उस मूर्त्ति ने इन्द्र को समझाया कि तुम किसी में भी शक्ति नहीं है । समस्त शक्तियाँ मेरी दी हुई हैं । तुम लोग वृथा बड़प्पन का अभिमान मत करो और जिस-जिस कार्य में नियुक्त हो, उसका सम्पादन ठीक प्रकार से करते रहो । इसी से तुम्हें सिद्धि प्राप्त होंगी । तत्पश्चात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि को भी दर्शन, आशीर्वाद एवं वर आदि देकर वह मूर्त्ति अन्तर्हित हो गयी । अन्त में दत्तात्रेय ने कहा कि यह माँ राजराजेश्वरी का कुमारिका-अवतार था, जो देवताओं के अभिमान को नष्ट करने के लिए हुआ था ।

ब्रह्माण्ड पुराण के ललितोपाख्यान में भी प्रसंग आता है जिसे भास्कर राय प्रणीत "सौभाग्यभास्कर" (चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान से प्रकाशित) में उद्धृत किया गया है। देवी के प्रादुर्भाव को सुनकर ब्रह्मा आदि देवता उनका दर्शन करने गये। विष्णु और शिव भी गये। नारद तथा असंख्य अन्य ऋषि-मुनि भी पहुँचे। विश्वकर्मा ने अमरावती के समान एक दिव्यपुरी का निर्माण किया। यह पुरी अत्यन्त सुन्दर थी। उसमें बड़े-बड़े भवन एवं परकोटे थे। एक विशाल सभाभवन में रत्नजड़ित अनेक सिंहासन थे। चिन्तामणियों से निर्मित एक दिव्य सिंहासन मुख्य था। ब्रह्मा ने सोचा कि पुरी की शक्ति और वैभव के बल पर साधारण व्यक्ति भी त्रिलोकी का स्वामी हो सकता है। श्रुति में कहा गया है कि तीनों लोकों में शंकर के अतिरिक्त और कोई भी इनका वरण करने योग्य नहीं है। इस समय महेश्वर (शिव) का स्वरूप अतुलनीय था। करोड़ों कामदेव भी उनके सामने लज्जित हो रहे थे। ब्रह्मा ने उन्हें देखकर उनका आलिंगन कर उन्हें कामेश्वर की संज्ञा प्रदान की। ब्रह्मा इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वे ही परा-शक्ति के योग्य वर हैं। उन्होंने समस्त देवों सहित परा-शक्ति की वंदना की। देवी को देखकर नीललोहित (शिव) अपनी सुधबुध खो बैठे और अपने क्रियाकलापों का भी उन्हें ध्यान नहीं रह गया। देवी भी उन्हें देखकर प्रेम से अभिभूत हो गईं और मन ही मन शिव को पति रूप में वरण कर लिया। दोनों ही भावविभोर हो गये। कुछ समय के लिए दोनों ही उद्वेलित हो उठे।

इसके पश्चात् ब्रह्मा ने आद्याशक्ति से निवेदन किया कि समस्त देवता, ऋषि-मुनि, किन्नर, गन्धर्व और अप्सराओं आदि की मनोभिलाषा है कि आप हमें युद्ध क्षेत्र में अपने पति सहित दर्शन दें। आप संसार की दैत्यों से रक्षा करने के लिए जिसका समझें उसका वरण करें और इस पुरी के सिंहासन को सुशोभित करें। समस्त देव, ऋषि-मुनि आदि आपको महाराज्ञी पद पर अभिषिक्त करेंगे। हमारी आकांक्षा आपको अपने पति के साथ सिंहासन पर आसीन करने की है।

ब्रह्मा के ये वचन सुनकर देवी ने ब्रह्मा, विष्णु और अन्य देवों और मुनियों को सम्बोधित करते हुए कहा— "मैं आदिकाल से स्वतन्त्र हूँ। मेरी जीवन-शैली, मेरी लीला, मेरे क्रिया-कलाप मेरी इच्छा से ही होते हैं। अतः मेरे उपयुक्त

पति ऐसा ही होगा जिसके जीवन का व्यवहार मेरी जीवन-शैली के उपयुक्त हो"। देवी के इस कथन का अनुमोदन करते हुए ब्रह्मा बोले— "आप ही ब्रह्म हैं, आप ही चिति और आनन्द हैं, जिनसे प्रकृति का उद्भव हुआ है। आप अनादि और अनन्त हैं तथा कार्य और कारणरूपा आप ही हैं। आप ही पंचब्रह्म-स्वरूपिणी हैं, अर्थात् आप ही सद्-असद्, कामरूपा, व्यक्त और अव्यक्तरूपा हैं। आप ही सृष्टि की रचना करती हैं और उसे धारण भी करती हैं। संसार के कल्याण के लिए आप जिसे अपने उपयुक्त समझें, उसका वरण करें। बार-बार ब्रह्मा के अनुनय-विनय करने पर देवी ने एक पुष्पहार उठाया और उसे आकाश में उछाल दिया। यह हार नीचे आकर कामेश्वर के कण्ठ में गिरा। सभी देवों में आनन्द छा गया। ब्रह्मा के कहने पर विष्णु ने धार्मिक रीति से कामेश्वर और देवी को मंगलमय सूत्र में आबद्ध कर दिया।

विवाहोपरान्त सभी देवताओं ने देवी को अनेक दिव्य वस्तुएँ भेंट कीं। ब्रह्मा ने एक महान् शक्तिशाली ईख का धनुष जो सदैव अक्षुण्ण रहने वाला था, हरि ने पुष्प-बाण, वरुण ने नागपाल, विश्वकर्मा ने अंकुश, अग्नि ने मुकुट, चन्द्र और सूर्य ने दो बड़े-बड़े बाले, रत्नाकर ने मणियों की माला, इन्द्र ने मधुपात्र, कुबेर ने चिन्तामणियों की माला, विष्णु ने छत्र, गंगा और यमुना ने चँवर तथा आठों वसुओं, रुद्रों, आदित्यों, अश्विनीकुमारों, मरुतों, गन्धर्वों, साहवों तथा प्रमथों के स्वामी ने अपने-अपने शस्त्र भेंट किये। अन्य देवताओं ने भी विभिन्न प्रकार के रथ, अश्व, गज, ऊँट और विभिन्न प्रकार के आयुध भेंट किये।

तदनन्तर अभिषेक की तैयारी होने लगी। ब्रह्मा ने वायवीय रथ तैयार कराया जिसका नाम कुसुमाकर था। यह रथ आकाश और पृथ्वी दोनों पर ही वायु की गति से चलने में समर्थ था। बड़े उत्साह और समारोहपूर्वक देवी को कामेश्वर सहित सिंहासन पर बैठाया गया। देवी ने भी इस अवसर पर अपनी शक्तियों के द्वारा उपस्थित जनों को उनकी मनचाही वस्तुएँ प्रदान कीं, इसके अनन्तर कामेश्वर देवी सहित करीब दस सहस्र वर्षों तक इस पुरी में रहकर तीनों लोकों का शासन करते रहे।

भण्डासुर के वध का भी वर्णन हयग्रीव ने किया। इस प्रसंग में भण्डासुर के जन्म, वैभव तथा वध की यहाँ चर्चा करना प्रासंगिक होगा। वैसे इस संदर्भ

में ललितोपाख्यान में इसका विस्तृत उल्लेख है । संक्षेप में यह कथानक इस प्रकार है :

अगस्त्य मुनि के प्रश्न करने पर हयग्रीव ने बताया कि भण्डासुर का जन्म रुद्र की क्रोधाग्नि से हुआ था । अतः भण्ड दानव बना । उसका स्वभाव अत्यन्त भयंकर था । भण्ड काम का ही आकार था । देवताओं ने शिव का विवाह पार्वती से कराने के लिए, शिव की तपस्या को भंग करने के लिए अपना माध्यम काम को ही बनाया था, जिसने शिव की तपस्या में विघ्न उपस्थित कर दिया; किन्तु शिव के तीसरा नेत्र खोलते ही कामदेव भस्म हो गया । पार्वती जी को इससे बड़ा दुःख हुआ । कामदेव के भस्मीकरण को देखकर गणों के अधिष्ठाता चित्रकर्मा ने भस्म से एक आश्चर्यजनक व्यक्ति का आकार बना दिया । रुद्र ने अपने सम्मुख जब इस आकार को देखा तो उनकी दृष्टि पड़ते ही उस आकार में प्राण संचारित हो उठे । ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे काम एक बार पुनः शरीरधारी बन गया हो । वह अत्यन्त शक्तिशाली और देदीप्यमान हो गया । उसकी प्रभा दोपहर के सूर्य के समान प्रखर थी । चित्रकर्मा ने आह्लादपूर्वक उसको आलिंगनबद्ध करते हुए कहा, "हे पुत्र ! महादेव की स्तुति करो । वे समस्त पदार्थों के दाता हैं ।" ऐसा कहकर चित्रकर्मा ने उसे शतरुद्रीय मंत्र भी प्रदान किया । उस बालक ने एस सौ बार मंत्र का पाठ करते हुए रुद्र को नमन किया । भगवान् महादेव बालक पर अत्यन्त प्रसन्न हो गये और उन्होंने उसे वर माँगने को कहा । बालक ने महादेव से निवेदन किया कि मुझे सदैव अपने शत्रु का आधा बल प्राप्त होकर मेरे बल के साथ संयुक्त हो जाये । मेरे बाण उसके महत्त्वपूर्ण गणों और शस्त्रों को व्यर्थ कर दे । महादेव ने "तथास्तु" कहकर उसको वर प्रदान कर दिया और कुछ क्षण मौन रहने के बाद बोले कि तू साठ हजार वर्ष तक शासन करेगा ।

महादेव के इस उदार चरित्र को देखकर ब्रह्मा ने "भण्ड, भण्ड, भण्ड" कहा । इसी से यह बालक भण्ड कहलाया । भण्ड का शाब्दिक अर्थ होता है— "भाग्यवान्" । यही बालक आगे चलकर भण्डासुर कहलाया ।

कुछ समय के पश्चात् भण्ड एक शक्तिशाली शासक हो गया और उसे भण्डासुर कहा जाने लगा । सैकड़ों और हजारों दैत्यों ने उसे अपना राजा मान लिया । दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य ने उसको अपना शिष्य बना लिया । उनकी प्रेरणा से उसने माया का आवाहन किया तथा अनेक दैत्य वास्तुकलाकारों को बुलाकर

शोणितपुर में जहाँ पहले भी दैत्यों की महान् नगरी थी, पुनः नगर निर्माण करने का आदेश दिया। कुछ ही समय में नगर का निर्माण हो गया। यह अत्यन्त वैभवशाली एवं मनोरम था। भण्डासुर स्वयं भी वहाँ गया। वहाँ पर उसने एक दिन बाँसुरी वादन सुना और साथ ही उसे एक अत्यन्त सुन्दर नारी के भी दर्शन हुए। उसके साथ उसकी सखियाँ थीं। दैत्यराज भण्डासुर और अन्य दैत्य सेनापति उनके साथ आमोद-प्रमोद में फँसकर वेदों और उमापति को पूरी तरह भूल गये। इन्होंने यज्ञ तथा अन्य शुभ कर्मों का परित्याग कर दिया। अब वे धीरे-धीरे अपने गुरु शुक्राचार्य का भी अपमान करने लगे। इस प्रकार रागरंग में फँसकर दस हजार वर्ष पूरे हो गये। देवताओं ने चैन की साँस ली। दैत्य निरन्तर अत्याचारी होते गये।

इस बीच एक दिन नारद ऋषि इन्द्र की सभा में पधारे। स्वागत-सत्कार के पश्चात् नारद ने इन्द्र से कहा कि दैत्यों का अधिपति भण्डासुर विष्णु की माया के प्रति अत्यन्त आसक्त हो गया है। यदि वह इस मोहिनी आकर्षण से मुक्त हो जाये तो वह तीनों लोकों को भस्मीभूत करने की क्षमता रखता है। वह तुमसे भी अधिक मायावी और शक्तिशाली है। अतः उस दैत्य का तेज नष्ट करना आवश्यक है। इसके लिए तुम पराशक्ति की आराधना करो, अन्यथा करोड़ों कल्पों में भी उसका नाश नहीं हो सकता। निश्चय ही देवी त्रिपुरसुन्दरी तुम्हारा कल्याण करेंगी। नारद की इस चेतावनी को सुनकर इन्द्र तथा अन्य देवता घबरा गये। उन्होंने देवी की आराधना करने का निश्चय किया और हिमालय की ओर जाने की तैयारी में लग गये। भागीरथी के तट पर पहुँचकर देवताओं ने इन्द्र सहित पराशक्ति की पूजा आरम्भ कर दी। इस प्रकार आराधना करते हुए दस हजार वर्ष हो गये।

देवताओं की इस तपस्या के समाचार से दैत्य हतप्रभ हो गये। तब उनके गुरु शुक्राचार्य भण्डासुर के पास जाकर बोले, "दैत्यराज ! तुम्हारी शक्ति के बल पर ही दैत्य निर्भय होकर तीनों लोकों में विचरण करते हैं। हरि सदैव तुम्हारी जाति के प्रति शत्रुता रखते आये हैं। उन्होंने ही इस माया का निर्माण कर तुम्हें भ्रमित कर दिया है। तुम्हें इस प्रकार राग-रंग में फँसा देखकर तुम्हें पराजित करने के उद्देश्य से इन्द्र ने देवताओं सहित कठिन तपस्या आरम्भ कर दी है। यदि पराशक्ति जगज्जननी महात्रिपुरसुन्दरी इससे प्रसन्न हो गयीं तो युद्ध में देवताओं

की विजय निश्चित है । अतः तुम माया द्वारा निर्मित इस मोहिनी नारी का परित्याग कर दो तथा मंत्रियों सहित हिमालय में जाकर देवताओं की तपस्या में विघ्न पैदा कर दो ।" दैत्यराज के मंत्री श्रुतवर्मा ने भी यही परामर्श दिया । भण्डासुर इन वचनों को मानकर अपने मंत्रियों सहित देवताओं की तपस्या को खण्डित करने के लिए चल दिया । मार्ग में देवी ने उनका मार्ग अवरुद्ध करने के लिए एक दुर्भेद्य दीवार खड़ी कर दी । दैत्यों ने एक शक्तिशाली यंत्र चलाकर दीवार को नष्ट कर दिया । इस प्रकार कई बार नयी प्राचीर बनी और कई बार नष्ट हुई । अन्त में दैत्य थक कर और निराश होकर अपने नगर को वापस चले गये ।

देवताओं की तपस्या धीरे-धीरे बढ़ती ही गई और अन्त में उन्होंने अग्निकुण्ड में अपने शरीर के मांस की आहुति देना प्रारम्भ कर दिया । शरीर का मांस समाप्त हो जाने पर उन्होंने अपने शरीर को ही अर्पित कर देने का निर्णय किया । उन्होंने यह निर्णय किया ही था कि अग्नि की ज्वाला तीव्र हो गयी और अग्नि के मध्य एक देदीप्यमान चक्र का आविर्भाव हुआ । देवताओं और इन्द्र ने इस चक्र के मध्य में महादेवी को देखा । बालरवि के समान वर्ण , रूप अतुलनीय और हाथों में पाश, अंकुश, कोदण्ड और पाँच बाण चमक रहे थे । देवता आनन्दमग्न हो गये और देवी के चरणों में नमन कर उनकी स्तुति करने लगे । देवी अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में थी और उन्होंने देवताओं से वर माँगने को कहा । इस पर इन्द्र ने देवी से निवेदन किया कि "हे अम्ब ! हमारी रक्षा करो । हम आपकी शरण में हैं । दैत्यराज भण्डासुर के कारण हमारा जीवन संकट में है और हम महान् विपत्तियों से घिरे हुए हैं । देवताओं की आर्तवाणी को सुनकर देवी बोलीं- मैं स्वयं दैत्यराज भण्ड को युद्ध में पराजित कर उसका वध करूँगी तथा तुम्हें तीनों लोकों का राज्य प्रदान करूँगी" । इस वरदान को प्राप्त कर देवराज इन्द्र तथा देवता आनन्द से अभिभूत हो गये और अपने स्थानों को चले गये । समय आने पर देव-दानवों का भयंकर संग्राम हुआ, माँ ने अवतार लेकर भण्डवध कर देवताओं को दिया वरदान पूर्ण किया । उन्हीं माँ भगवती के कुछ प्रमुख स्तोत्रों का वचन-पुष्पों के रूप में संकलन कर रहा हूँ ।

॥ रुचिरवचनपुष्पैरर्चनं सञ्चिनोमि ॥

— सदानन्द ब्रह्मचारी

॥इति शम्॥

सदानन्दब्रह्मचारिसङ्कलितानि

राजराजेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी-नित्याराधनस्तोत्राणि

स्तोत्रपाठात्मको भागः

पुस्तके लिखितान् मन्त्रान् दृष्ट्वा पठति यो नरः ।
जीवन्नेव स चाण्डालो मृतः श्वा चैव जायते ॥

विशेष

प्रस्तुत ग्रन्थ में मुद्रित स्तोत्र सर्वसाधारण के लिए हैं परन्तु इन स्तोत्रों या पूजनविधि का फल तब ही प्राप्त होगा जब इनको दीक्षा के रूप में गुरुमुख से लिया जाय । साथ ही गुरु भी इन परम्पराओं और मन्त्रों से विधिवत् परिनिष्ठ होना चाहिए ।

— सङ्कलयिता

॥श्रीः ॥

॥श्रीगुरुभ्यो नमः — श्रीमहागणपतये नमः ॥

॥सच्चिदानन्दस्वरूपिणि श्रीललितामहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः ॥

श्रीललितापञ्चरत्नम्

[श्रीमदादि जगद्गुरु शंकराचार्य भगवत्पाद रचित इस ललिता-पञ्चरत्न स्तोत्र का प्रतिदिन प्रातः शय्यात्याग कर मुख-प्रक्षालन के अनन्तर पाठ करना चाहिए। इस स्तोत्र में भगवती के मुख, भुजाओं, चरणयुग्मों का वर्णन, उनकी स्तुति तथा उनके नामों का पाँच श्लोकों में वर्णन किया गया है। इसके पाठ से भगवती सद्यः प्रसन्न होकर भक्तों को विद्या, श्री, निश्छल-मित्र, अनन्त कीर्ति और सौभाग्य, यह पाँच वस्तुएँ देती हैं। कहीं-कहीं यह 'देवीपञ्चरत्नम्' नाम से भी प्राप्त होता है।]

प्रातः प्रभृति सायान्तं सायादि प्रातरन्ततः
यत्करोमि जगद्योनें तदस्तु तव पूजनम्।
मञ्जुसिञ्जितमंजीरं वाममर्धं महेशितुः
आश्रयामि जगन्मूलं यन्मूलं सचराचरम् ॥१ ॥

प्रातः स्मरामि ललितावदनारविन्दं
बिम्बाधरं पृथुलमौक्तिकशोभिनासम्।
आकर्णदीर्घनयनं मणिकुण्डलाढ्यं
मन्दस्मितं मृगमदोज्ज्वल-भालदेशम् ॥२।

प्रातर्भजामि ललिताभुजकल्पवल्लीं
रक्ताङ्गुलीयलसदङ्गुलिपल्लवाढ्याम्।
माणिक्यहेमवलयाङ्गदशोभमानां
पुण्ड्रेक्षुचापकुसुमेषु सृणीर्दधानाम् ॥३ ॥

प्रातर्नमामि ललिताचरणारविन्दं
भक्तेष्टदाननिरतं भवसिन्धुपोतम् ।
पद्मासनादिसुरनायकपूजनीयं
पद्माङ्कुशध्वजसुदर्शनलाञ्छनाढ्यम् ॥४ ॥

प्रातः स्तुवे परशिवां ललितां भवानीं
त्रय्यन्तवेद्यविभवां करुणानवद्याम् ।
विश्वस्य सृष्टिविलयस्थितिहेतुभूतां
विद्येश्वरीं निगमवाङ्मनसातिदूराम् ॥५ ॥

प्रातर्वदामि ललिते तव पुण्यनाम
कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति ।
श्रीशाम्भवीति जगतां जननी परेति
वाग्देवतेति वचसा त्रिपुरेश्वरीति ॥६ ॥

यः श्लोकपञ्चकमिदं ललिताम्बिकायाः
सौभाग्यदं सुललितं पठति प्रभाते ।
तस्मै ददाति ललिता झटिति प्रसन्ना
विद्यां श्रियं विमलसौख्यमनन्तकीर्तिम् ॥७ ॥

■

श्रीराजराजेश्वरी-प्रातःस्मरणम्

[नाम से स्पष्ट है कि ये श्लोक प्रातः काल उठकर पाठ करने के हैं। इनमें तीनों लोकों की जननी और राज्ञी, लोगों की आश्रयभूता, भण्ड और महिषासुर को मारने वाली भगवती का स्मरण किया गया है। इसके प्रतिदिन पाठ करने वाले की रक्षा भगवती स्वतः करती हैं।]

प्रातः स्मरामि सुसुधाम्बुधिमध्यभागे
कल्पाटवीपरिवृते मणिनिर्मितेऽस्मिन्।
चिन्तामणीयसुमहासदने निविष्टां
राजेश्वरीं त्रिजगतां जननीं च राज्ञीम् ॥१॥

प्रातर्नमामि सकलागमनित्यवेद्यं
संक्रन्दनादिसुरवृन्दनिषेव्यमाणम्।
लाक्षारुणं कमलशङ्खसुरेखिकं च
राजेश्वरीपदयुगं जगतां शरण्यम् ॥२॥

प्रातर्वदामि सकलेष्टसुदानदक्षं
दक्षञ्च भक्तभयरोगसमूलनाशे।
भाग्यप्रदञ्च भवरोगनिवारकञ्च
राजेश्वरीमहितनामसहस्रमेव ॥३॥

प्रातः पठामि दुरितौघविनाशहेतुं
वन्दारुवाञ्छितफलप्रदमाशु नित्यं
मोक्षप्रदं मुनिनुतं सुमहत्त्वपूर्णं
माहात्म्यमेव महितं वरषोडशेश्याः ॥४॥

प्रातश्शृणोमि शठमाहिषभण्डमुख्य-
सर्वासुरक्षपणदीक्षितमाहवेषु ।
वीरायितं च वरदानविचक्षणं च
विस्मापनीयचरितं जगदम्बिकायाः ॥५ ॥

यः श्लोकपञ्चकमिदं पठति प्रभाते
सिंहासनस्थितमनोहरचक्रराज्ञ्याः ।
राजेश्वरी च रजनीकरचारुचूडा
रक्षां करोति सततं तदिदं हि सत्यम् ॥६ ॥

॥ इति श्रीमहाराज्ञी-श्रीराजराजेश्वरी-प्रातःस्मरणम् ॥

श्रीबालात्रिपुरसुन्दरीमानस-पूजास्तोत्रम्

[भगवान् श्रीमदादिशङ्कराचार्य-कृत मानसपूजा-स्तोत्र में भगवती राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी की कन्या बाला-त्रिपुरसुन्दरी की आराधनापरक स्तुति है। प्रत्येक श्लोक से भगवती बाला-त्रिपुरसुन्दरी की सपर्या सम्पादित की जा सकती है। प्रस्तुत स्तोत्र का पाठ करने से बिना श्रीयन्त्र-पूजन के भी साधक को यन्त्रराज के अर्चन का फल प्राप्त होता है।]

ओं उषसि मागधमङ्गलगायनैर्झटिति जागृहि जागृहि जागृहि।
अतिकृपार्द्रकटाक्षनिरीक्षणैर्जगदिदं जगदम्ब सुखीकुरु ॥१॥

कनकमयवितर्दिं शोभमानं दिशि-दिशि पूर्णसुवर्णकुम्भयुक्तम्।
मणिमयमण्डपमध्यमेहि मातर्मयि कृपया हि समर्चनं गृहीतुम् ॥२॥

कनककलशशोभमानशीर्षं जलधरचुम्बितसमुल्लसत्पताकम्।
भगवति तव सन्निवासहेतोर्मणिमयमन्दिरमेतदर्पयामि ॥३॥

तपनीयमयी सतूलिका कमनीया मृदुलोत्तरच्छदा।
नवरत्नविभूषिता मया शिविकेयं जगदम्ब तेऽर्पिता ॥४॥

कनकमयवितर्दिस्थापिते तूलिकाढ्ये
विविधकुसुमकीर्णे कोटिबालार्कवर्णे।
भगवति रमणीये रत्नसिंहासनेऽस्मिन्
उपविश पदयुग्मं हेमपीठे निधेहि ॥५॥

मणिमयमौक्तिकनिर्मितं महान्तं कनकस्तम्भचतुष्टयेन युक्तम्।
कमनीयतमं भवानि तुभ्यं नवमुल्लोचमहं समर्पयामि ॥६॥

दूर्वया सरसिजान्वितविष्णुक्रान्तया च सहितं कुसुमाढ्यम्।
पद्मयुग्मसदृशे पदयुग्मे पाद्यमेतदुररीकुरु मातः! ॥७॥

गन्धपुष्पयवसर्षपदूर्वासम्मितं तिलकुशाक्षतमिश्रम् ।
हेमपात्रनिहितं सह रत्नैरर्घ्यमेतदुररीकुरु मातः ! ॥८ ॥

जलजद्युतिनाकरेण जातीफलकङ्कोललवङ्गगन्धयुक्तैः ।
अमृतैरमृतैरिवाहतैर्भगवत्याचमनं विधीयताम् ॥९ ॥

निहितः कनकस्य सम्पुटे पिहितो रत्नपिधानकेन सः ।
तदयं भवतीकरेऽर्पितो मधुपर्को भवति प्रगृह्यताम् ॥१० ॥

एतच्चम्पकतैलमेव विविधैः पुष्पैर्मुहुर्वासितं
न्यस्तं रत्नमये सुवर्णचषके भृङ्गैर्भ्रमद्भिर्वृतम् ।
सानन्दं सुरसुन्दरीभिरभितो हस्तैर्धृतं यन्मया
केशेषु भ्रमरप्रभेषु सकलेष्वङ्गेषु चालिप्यताम् ॥११ ॥

मातः कुङ्कुमपङ्कनिर्मितमिदं देहे तवोद्वर्तनं
भक्त्याऽहङ्कलयामि हेमरजसा सम्मिश्रितं केसरम् ।
केशानामलकैर्विशोध्य विशदान् कस्तूरिकाद्यन्वितं
स्नानं ते नवरत्नकुम्भसहितैः संवासितोष्णोदकैः ॥१२ ॥

दधिदुग्धघृतैः समाक्षिकैः सितया शर्करया समन्वितैः ।
स्नपयामि तवाहमादृतो जननि ! त्वां पुनरुष्णवारिभिः ॥१३ ॥

एलोशीरसुवासितैः सुकुसुमैर्गङ्गादितीर्थोदकै-
र्माणिक्यामलमौक्तिकामृतयुतैः स्वच्छैः सुवर्णोदकैः ।
मत्रान् वैदिकतान्त्रिकान् परिपठन् सानन्दमत्यादरात्
स्नानं ते परिकल्पयामि जननि स्नेहात्त्वमङ्गीकुरु ॥१४ ॥

बालार्कद्युतिदाडिमीयकुसुमप्रस्पर्धिसर्वोत्तमं
मातस्त्वं परिधेहि दिव्यवसनं भक्त्या मया कल्पितम् ।
मुक्ताभिर्ग्रथितं सकञ्चुकमिदं स्वीकृत्य पीतप्रभं
तप्तस्वर्णसमानवर्णबहुलं प्रावर्णमङ्गीकुरु ॥१५ ॥

नवरत्नयुते मयार्पिते कमनीये तपनीयपादुके ।
सविलासमिदं पदद्वयं कृपया देवि ! तयोर्निधीयताम् ॥१६ ॥

बहुभिरगरुधूपैः सादरं धूपयित्वा ।
भगवति ! तव केशान् कङ्कतैर्मार्जयित्वा ।
सुरभिररविन्दैश्चम्पकैश्चार्चयित्वा
झटिति कनकसूत्रैर्जूटमावेष्टयामि ॥१७ ॥

सौवीराञ्जनमिदमम्ब ! चक्षुषोस्ते विन्यस्तं कनकशलाकया मया यत् ।
तन्नूनं मलिनमपि त्वदक्षिसङ्गाद् ब्रह्मेन्द्राद्यभिलषणीयतामियाय ॥१८ ॥

मञ्जीरे पदयोर्निधाय रुचिरे विन्यस्य काञ्चीं कटौ
मुक्ताहारमुरोजयोरनुपमां नक्षत्रमालां गले ।
केयूराणि भुजेषु रत्नवलयश्रेणीः करेषु क्रमात्
ताटङ्के तव कर्णयोर्विनिदधे शीर्षे च चूडामणिम् ॥१९ ॥

धम्मिल्ले तव देवि हेमकुसुमान्याधाय भालस्थले
मुक्ताराजिविराजिहेमतिलकं नासापुटे मौक्तिकम् ।
मातर्मौक्तिकजालिकाञ्च कुचयोः सर्वाङ्गुलीषूर्मिकाः
कट्यां काञ्चनकिङ्किणीर्विनिदधे रत्नावतंसं श्रुतौ ॥२० ॥

मातर्भालतले तवातिविमले काश्मीरकस्तूरिका
कर्पूरागरुभिः करोमि तिलकं देहेऽङ्गरागं ततः ।
वक्षोजादिषु यक्षकर्दमरसैः सित्कांचपुष्पद्रवैः
पादौ कुङ्कुमलेपनादिभिरहं सम्पूजयामि क्रमात् ॥२१ ॥

रत्नाक्षतैस्त्वां परिपूजयामि मुक्ताफलैश्चारुरुचैर्विचित्रैः ।
अखण्डितैर्देवि ! यवादिभिर्वा काश्मीरपङ्काङ्कितताण्डुलैर्वा ॥२२ ॥

जननि चम्पकतैलमिदं पुरो मृगमदोऽयमयं पटवासकः ॥
सुरभिगन्धमिदं च चतुःसमं सपदि सर्वमिदं प्रतिगृह्यताम् ॥२३ ॥

सीमन्ते ते भगवति मया सादरं न्यस्तमेतत्
सिन्दूरं मे हृदयकमले देवि हर्षं तनोतु ।
बालादित्यद्युतिरिव सदा लोहिता यस्य कान्ति-
रन्तर्ध्वान्तं हरतु सकलं चेतसा चिन्तयामि ॥२४॥

मन्दारकुन्दकरवीरलवङ्गपुष्पै-
स्त्वां देवि सन्ततमहं परिपूजयामि ।
जातीजपाबकुलचम्पककेतकादि-
नानाविधानि कुसुमानि च तेऽर्पयामि ॥२५॥

मालतीबकुलहेमपुष्पिकाकाञ्चनारकरवीरचम्पकैः ।
कर्णिकारगिरिकर्णिकादिभिः पूजयामि जगदम्ब ते वपुः ॥२६॥
पारिजातशतपत्रपाटलैर्मल्लिकाबकुलचम्पकादिभिः ।
अम्बुजैश्च कुसुमैश्च सादरं पूजयामि जगदम्ब ! ते वपुः ॥२७॥

लाक्षासम्मिलितैः शिलारसयुतैः श्रीवासमिश्रितैः
कर्पूराकलितैः सितामधुद्युतैर्गोसर्पिषालोडितैः ।
श्रीखण्डागरुगुग्गुलप्रभृतिभिर्नानाविधैर्वस्तुभिः
धूपं ते परिकल्पयामि जननि ! त्वं धूपमङ्गीकुरु ॥२८॥

रत्नालङ्कृतहेमपात्रनिहितैर्गोसर्पिषोद्दीपितैः
दीपैर्दीर्घतरान्धकारविधुरैर्बालार्ककोटिप्रभैः ।
आताम्रज्वलदुज्वलज्वलनवद्रत्नप्रदीपैः सदा
मातस्त्वामहमादरादनुदिनं नीराजयाम्युच्चकैः ॥२९॥

महति कनकपात्रे स्थापयित्वा विशालान्
डमरुसदृशरूपान् पक्वगोधूमदीपान् ॥
बहुघृतमथ तेषु न्यस्य दीपैरकम्पै-
र्भुवनजननि कुर्वे नित्यमारार्तिकन्ते ॥३०॥

सविनयमथ दत्त्वा जानुयुग्मं धरायां
सपदि शिरसि धृत्वा पात्रमारार्तिकस्य ।
मुखकमलसमीपे तेऽम्ब सार्धत्रिवारं
भ्रमयति मयि भूयात् ते कृपार्द्रः कटाक्षः ॥३१ ॥

मातस्त्वां दधिदुग्धपायसमहाशाल्यन्नसन्तानकान्
सूपापूपसिताघृतैः सवटकैः सक्षौद्ररम्भाफलैः ।
एलाजीरकहिंगुनागरनिशाकौस्तुम्बरीसंयुतैः
शाकैः साकमहं सुधाधिकरसैः सन्तर्पयाम्यर्पयन् ॥३२ ॥

सापूपसूपदधिदुग्धसिताघृतानि
सुस्वादुभक्ष्यपरमान्नपुरःसराणि ।
साकोल्लसन्मरिचजीरकवल्लिकानि
भक्ष्याणि भुङ्क्ष्व जगदम्ब मयार्पितानि ॥३३ ॥

क्षीरमेतदिदमुत्तमोत्तमं प्राज्यमाज्यमिदमुज्वलं मधु
मातरेतदमृतोपमं त्वया संभ्रमेण परिपीयतां मुहुः ॥३४ ॥

उष्णोदकैः पाणियुगं मुखञ्च प्रक्षाल्य मातः कलधौतपात्रम् ।
कर्पूरमिश्रेण सकुङ्कुमेन हस्तौ समुद्वर्तय चन्दनेन ॥३५ ॥

अतिशीरमुशीरवासितं तव पाणौ च मया निवेदितम् ।
पटपूतमिदं जितामृतं शुचि गङ्गामृतमम्ब पीयताम् ॥३६ ॥

आताम्ररम्भाफलसंयुतानि द्राक्षाफलाक्षोटसमन्वितानि ।
सनारिकेलानि सदाडिमानि फलानि ते देवि ! समर्पयामि ॥३७ ॥

कलिङ्गकोशातकसंयुतानि जम्बीरनारङ्गसमन्वितानि ।
सबीजपूराणि सदाडिमानि फलानि ते देवि समर्पयामि ॥३८ ॥

कर्पूरेण युतैर्लवङ्गसहितैः कङ्कोलचूर्णान्वितैः
सुस्वादुक्रमुकैः सगौरखदिरैः सुस्निग्धजातीफलैः ।
मातः ! केतकिपत्रपाण्डुरुचिरैस्ताम्बूलवल्लीदलैः
सानन्दं मुखमण्डनार्थमतुलं ताम्बूलमङ्गीकुरु ॥३९ ॥

एलालवङ्गादिसमन्वितानि कङ्कोलकर्पूरविमिश्रितानि ।
ताम्बूलवल्लीदलसंयुतानि फलानि ते देवि समर्पितानि ॥४० ॥
ताम्बूलवल्लीदलनिर्जितहेमवर्णस्वर्णाक्तपूगफलमौक्तिकचूर्णयुक्तम् ।
रत्नस्थलीस्थितमिदं खदिरेण सार्धंताम्बूलमम्ब वदनाम्बुरुहे ! गृहाण ॥४१ ॥
अथ बहुमणिमिश्रैर्मौक्तिकैस्त्वां विकीर्य
त्रिभुवनकमनीयैः पूजयित्वा च वस्त्रैः ।
मिलितविविधमुक्तां दिव्यमाणिक्ययुक्तां
जननि कनकवृष्टिं दक्षिणां तेऽर्पयामि ॥४२ ॥
मातः काञ्चनदण्डमण्डितमिदं पूर्णेन्दुबिम्बप्रभं
नानारत्नविशोभिहेमकलशं लोकत्रयाह्लादकम् ।
भास्वन्मौक्तिकजालिकापरिवृतं प्रीत्यात्महस्ते
छत्रन्ते परिकल्पयामि शिरसि त्वष्ट्रा स्वयं निर्मितम् ॥४३ ॥
शरदिन्दुमरीचिगौरवर्णैर्मणियुक्तैर्विलसत्सुवर्णदण्डैः ॥
जगदम्ब विचित्रचामरैस्त्वामहमानन्दभरेण बीजयामि ॥४४ ॥
मार्त्तण्डमण्डलनिभो जगदम्ब ! योऽयं
भक्त्या मया मणिमयो मुकुरोऽर्पितस्ते ।
पूर्णेन्दुबिम्बरुचिरं वदनं स्वकीय
मस्मिन् विलोकय विलोलविलोचने त्वम् ॥४५ ॥
इन्द्रादयो नतिनतैर्मुकुटप्रदीपै-
र्नीराजयन्ति सततं तव पादपीठम् ।
तस्मादहं तव शरीरमशेषमेतन्-
नीराजयामि जगदम्ब सहस्रदीपैः ॥४६ ॥
प्रियगतिरतितुङ्गो रत्नपल्लाणयुक्तः
कनकमयविभूषः स्निग्धगम्भीरघोषः ।
भगवति कलितोऽयं वाहनार्थं मया ते
तुरगशतसमेतो वायुवेगस्तुरङ्गः ॥४७ ॥

मधुकरवृतकुम्भो न्यस्तसिन्दूररेणुः
कनकलितघण्टःकिङ्किणीशोभिकण्ठः ।
श्रवणयुगलचञ्चच्चामरो मेघतुल्यो
जननि तव मुदे स्यान्मत्तमातङ्ग एषः ॥४८ ॥

द्रुततरतुरगैर्विराजमानं मणिमयचक्रचतुष्टयेन युक्तम् ।
कनकमयमहं वितानवन्तं भगवति ते हि रथं समर्पयामि ॥४९ ॥

हयगजरथपत्तिशोभमानं दिशि दिशि दुन्दुभिमेघनादयुक्तम् ।
अभिनवचतुरङ्गसैन्यमेतद् भगवति भक्तिभरेण तेऽर्पयामि ॥५० ॥

परिधिकृतसप्तसागरं बहुसम्पत्सहितं मयाऽम्ब ते ।
विपुलं धरणीतलाभिधं प्रबलं दुर्गमिदं समर्पितम् ॥५१ ॥

शतपत्रयुतैः स्वभावशीतैरतिसौरभ्ययुतैः परापगीतैः ।
भ्रमरीमुखरीकृतैरनेकैर्व्यजनैस्त्वां जगदम्ब बीजयामि ॥५२ ॥

भ्रमविलुलितलोलकुन्तलालिर्विगलितमाल्यविकीर्णरङ्गभूमिः ।
इयमतिचतुरा नटी नटन्ती तव हृदये मुदमातनोतु मातः ! ॥५३ ॥

मुखचलनविलासलोलवेणीविलसितनिर्णितलोलभृङ्गमालाः ।
युवजनसुखकारिचारुलीला भगवति ! ते पुरतो नटन्ति बालाः ॥५४ ॥

रुचिरकुचतटीनां नाट्यकाले नटीनां
प्रतिगृहमथ तत्र प्रत्यहं प्रादुरासीत् ।
धिमिकि धिमिकि धिद्धी धिद्धि धिद्धेति धिद्ध-
धिकिति धिकिति तत्थै त्थै तथेथेति शब्दः ॥५५ ॥
भ्रमदलिकुलतुल्या लोलधम्मिल्लभारा
स्मितमुखकमलोद्यद्दिव्यलावण्यपूरा ।
अभिनवनववेषा वारयोषा नटन्ती
परभृतकलकण्ठी देवि मोदन्तनोतु ॥५६ ॥

डमरुडिण्डिमझर्झरझल्लरी मृदुरवार्द्रघटार्द्रघटादयः ।
झटितिझङ्कृतिभिर्जगदम्बिके बहुदयं हृदयं सुखयन्तु ते ॥५७ ॥

विपञ्चीषु सप्तस्वरान् वादयन्त्य-
स्तव द्वारि गायन्ति गन्धर्वकन्याः ।
क्षणं सावधानेन चित्तेन मातः
समाकर्णय त्वं मया प्रार्थिताऽसि ॥५८ ॥

अतिशयकमनीयैर्नर्त्तनैर्नर्त्तकीनां
झटिति च रमयित्त्वा चेत एवं त्वदीयम् ।
स्वयमहमपि चित्रैर्नृत्यवादित्रगीतै-
र्भगवति भवदीयं मानसं रञ्जयामि ॥५९ ॥

तव देवि गुणानुवर्णने चतुरा नो चतुराननादयः ।
तदिहैकमुखेषु जन्तुषु स्तवनं कस्तव कर्त्तुमीश्वरः ॥६० ॥
पदे पदे या परिपूजकेभ्यः सद्योऽश्वमेधादिफलन्ददाति ।
तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ॥६१ ॥
रक्तोत्पलारक्ततलप्रभाभ्यां ध्वजोर्ध्वरेखाकुलिशाङ्किताभ्याम् ।
अशेषवृन्दारकवन्दिताभ्यां नमो भवानीपदपङ्कजाभ्याम् ॥६२ ॥
चरणनलिनयुग्मं पङ्कजैः पूजयित्वा
कनककमलमालां कण्ठदेशेऽर्पयित्वा ।
शिरसि विनिहितोऽयं रत्नपुष्पाञ्जलिस्ते
हृदयकमलमध्ये देवि हर्षन्तनोतु ॥६३ ॥
अथ मणिमयमञ्चकाभिरामे द्युतिमति पुष्पवितानराजमाने ।
प्रसरदगरुधूपैर्धूपितेऽस्मिन् भगवति वासगृहेऽस्तु ते निवासः ॥६४ ॥
एतस्मिन् मणिखचिते सुवर्णपीठे त्रैलोक्याभयवरदौ निधाय पादौ ।
विस्तीर्णे मृदुलतरच्छदेऽस्मिन् पर्यङ्के कनकमये निषीद मातः ॥६५ ॥

तव देवि सरोजचिह्नयोः पदयोर्निर्जितपद्मरागयोः ।
अतिरक्ततरैरलक्तकैः पुनरुक्तां रचयामि रक्तताम् ॥६६ ॥
अथ मातरुशीरवासितं निजताम्बूलरसेन राजितम् ।
तपनीयमये हि पात्रके मुखगण्डूषजलं विधीयताम् ॥६७ ॥
क्षणमथ जगदम्ब मञ्चकेऽस्मिन् मृदुतरतूलिकया विराजमाने ।
अतिमहति मुदा निजेच्छया त्वं सुखशयनं कुरु मां हृदि स्मरन्ती ॥६८ ॥
मुक्ताकुन्देन्दुगौरां मणिमयमुकुटां रत्नताटङ्कयुक्ता-
मक्षस्रक्पुष्पहस्तामभयवरकरां चन्द्रचूडां त्रिनेत्राम् ।
नानालङ्कारयुक्तां सुरमुकुटलसद्द्योतितस्वर्णपीठां
सानन्दां सुप्रसन्नां त्रिभुवनजननीं चेतसा चिन्तयामि ॥६९ ॥
एषा भक्त्या तव विरचिता या मया देवि पूजा
स्वीकृत्यैनां सपदि सकलान् मेऽपराधान् क्षमस्व ।
न्यूनं यत्तत्तव करुणया पूर्णतामेतु सद्यः
सानन्दम्मे हृदयकमले तेऽस्तु नित्यं निवासः ॥७० ॥
पूजामिमां पठेत् प्राज्ञः पूजाकर्तुमनीश्वरः ।
पूजाफलमवाप्नोति वाञ्छितार्थांश्च विन्दति ॥७१ ॥
प्रत्यहं भक्तियुक्तो यो देवीपूजामिमां पठेत् ।
वाग्वादिन्याः प्रसादेन वत्सरात्स कविर्भवेत् ॥७२ ॥

॥ सम्पूर्णम् ॥

■

श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीमानसपूजास्तोत्रम्

[यह भगवान् भाष्यकार श्रीमच्छङ्कराचार्य प्रणीत परान्न का बृहद् मानस- पूजा-स्तोत्र है। बाह्य सपर्या-संसाधनों के अभाव में मानस-पूजा का विधान है। प्रस्तुत स्तोत्र में भगवती के समस्त राजोपचार वर्णित हैं। इस स्तोत्र के पाठ से भगवती की सपर्या पूर्ण हो जाती है तथा कुछ भी अवशिष्ट नहीं रह जाता है।]

मम न भजनशक्तिः पादयोस्ते न भक्ति-
र्न च विषयविरक्तिर्ध्यानयोगे न सक्तिः।
इति मनसि सदाऽहं चिन्तयन्नाद्यशक्ते
रुचिरवचनपुष्पैरर्चनं सञ्चिनोमि ॥१॥

व्याप्तं हाटकविग्रहैर्जलधरैरारूढदेवव्रजैः
पोतैराकुलितान्तरं मणिधरैर्भूमीधरैर्भूषितम्।
आरक्तामृतसिन्धुमुद्धुरचलद्वीचीजलव्याकुल-
व्योमानं परिचिन्त्य सन्ततमहो चेतः कृतार्थीभव ॥२॥

तस्मिन्नुज्ज्वलरत्नजालविलसत्कान्तिच्छटाभिः स्फुटं
कुर्वाणं वियदिन्द्रचापनिचयैराच्छादितं सर्वतः।
उच्चैः शृङ्गनिषण्णदिव्यवनितावृन्दाननप्रोल्लसद्-
गीताकर्णननिश्चलाखिलमृगं द्वीपं नमस्कुर्महे ॥३॥

जातीचम्पकपाटलादिसुमनस्सौरभ्यसम्भावितं
ह्रींकारध्वनिकण्ठकोकिलकुहूप्रोल्लासिचूतद्रुमम्।
आविर्भूतसुगन्धिचन्दनवनं दृष्टिप्रियं नन्दनं
चञ्चच्चञ्चलचञ्चरीकचटुलं चेतश्चिरं चिन्तये ॥४॥

परिपतितपरागैः पाटलक्षोणिभागो
विकसितकुसुमोच्चैः पीतचन्द्रार्करश्मिः ।
अलिशुकपिकराजीकूजितैः श्रोत्रहारी
स्फुरतु हृदि मदीये नूनमुद्यानराजः ॥५ ॥

रम्यद्वारपुरप्रचारतमसां संहारकारिप्रभ-
स्फूर्जत्तोरणभारहारकमहाविस्तारहारद्युते ।
क्षोणीमण्डलहेमहारविलसत्संसारपारप्रद-
प्रोद्यद्भक्तमनोविहारकनकप्राकार तुभ्यं नमः ॥६ ॥

उद्यत्कान्तिकलापकल्पितनभः स्फूर्जद्वितानप्रभः
सत्कृष्णागरुधूपवासितवियत्काष्ठान्तरे विद्युतः ।
सेवायातसमस्तदैवतगणैरासेव्यमानोऽनिशं
सोऽयं श्रीमणिमण्डपोऽनवरतं मच्चेतसि द्योतताम् ॥७ ॥

क्वाऽपि प्रोद्भटपद्मरागकिरणव्रातेन सन्ध्यायितं
कुत्राऽपि स्फुटविस्फुरन्मरकतद्युत्या तमिस्रायितम् ।
मध्यालम्बिविशालमौक्तिकरुचा ज्योत्स्नायितं कुत्रचि-
न्मातः श्रीमणिमन्दिरं तव सदा वन्दामहे सुन्दरम् ॥८ ॥

उत्तुङ्गालयविस्फुरन्मरकतप्रोद्यत्प्रभामण्डला-
न्यालोक्यांङ्कुरितोत्सवैर्नवतृणाकीर्णस्थलीशङ्कया ।
नीतो वाजिभिरुत्पथं बत रथस्सूतेन तिग्मद्युते-
र्वल्गावल्गितहस्तमस्तशिखरं कष्टैरितः प्राप्यते ॥९ ॥

मणिसदनसमुद्यत्कान्तिधारानुरक्ते
वियति चरमसंध्याशंकिनो भानुरश्वाः ।
शिथिलितगतकुप्यत्सूतहुंकारनादैः
कथमपि मणिगेहादुच्चकैरुच्चलन्ति ॥१० ॥

भक्त्या किन्नु समर्पितानि बहुधा रत्नानि पाथोधिना
किं वा रोहणपर्वतेन सदनं यैर्विश्वकर्माऽकरोत् ।
आज्ञातं गिरिजे कटाक्षकलया नूनं त्वया तोषिते
शम्भौ नृत्यति नागराजफणिना कीर्णा मणिश्रेणयः ॥११॥

विदूरमुक्तबाहनैर्विनम्रमौलिमण्डलै-
र्निबद्धहस्तसम्पुटैः प्रयत्नसंयतेन्द्रियैः ।
विरिञ्चिविष्णुशङ्करादिभिर्मुदा तवाऽम्बिके
प्रतीक्ष्यमाणनिर्गमो विभाति रत्नमण्डपः ॥१२॥

ध्वनन्मृदङ्गकाहलः प्रगीतकिन्नरीगणः
प्रनृत्तदिव्यकन्यकः प्रवृत्तमङ्गलक्रमः ।
प्रकृष्टसेवकव्रजः प्रहृष्टभक्तमण्डलो
मुदे ममाऽस्तु सन्ततं त्वदीयरत्नमण्डपः ॥१३॥

प्रवेशनिर्गमाकुलैः स्वकृत्यरत्नमानसै
र्बहिःस्थितामरावलीविधीयमानभक्तिभिः ।
विचित्रवस्त्रभूषणैरुपेतमङ्गनाजनैः
सदा करोतु मङ्गलं ममेह रत्नमण्डपः ॥१४॥

सुवर्णरत्नभूषितैर्विचित्रवस्त्रधारिभिः
गृहीतहेमयष्टिभिर्निरुद्धसर्वदैवतैः ।
असंख्यसुन्दरीजनैः पुरःस्थितैरधिष्ठितो
मदीयमेतु मानसं त्वदीयतुङ्गतोरणः ॥१५॥

इन्द्रादींश्च दिगन्तरान्सहपरावारानथो सायुधान्
योषिद्रूपधरान्स्वदिक्षु निहितान्सञ्चिन्त्य हृत्पङ्कजे ।
शंखे श्रीवसुधारया वसुमतीयुक्तश्च पद्मं स्मरन्
कामं नौमि रतिप्रियं सहचरं प्रीत्यां वसन्तं भजे ॥१६॥

गायन्तीः केलवीणयाऽतिमधुरं हुंकारमातन्वती-
र्द्वाराभ्यासकृतस्थितीरिह सरस्वत्यादिकाः पूजयन् ।
द्वारे नौमि मदोन्मदं सुरगणाधीशं मदेनोन्मदां
मातङ्गीमसिताम्बरां परिलसन्मुक्ताविभूषां भजे ॥१७॥

कस्तूरिकाश्यामलकोमलाङ्गीं कादम्बरीपानमदालसाङ्गीम् ।
वामस्तनालिङ्गितरत्नवीणां मातङ्गकन्यां मनसा स्मरामि ॥१८॥

विकीर्णचिकुरोत्करे विगलिताम्बराडम्बरे
मदाकुलितलोचने विमलभूषणोद्भासिनी ।
तिरस्करिणि ! तावकं चरणपङ्कजं चिन्तयन्
करोमि पशुमण्डलीमलिकमोहदुग्धाशयाम् ॥१९॥

प्रमत्तवारुणीरसैर्विघूर्णमानलोचनाः
प्रचण्डदैत्यसूदनाः प्रविष्टभक्तमानसाः ।
उपोढकज्जलच्छविच्छटाविराजिविग्रहाः
कपालशूलधारिणीः स्तुवे त्वदीयदूतिकाः ॥२०॥

स्फूर्जन्नव्ययवाङ्कुरोपलसिताभौगैः पुरःस्थापितैः
दीपोद्भासिशरावशोभितमुखैः कुम्भैर्नवैः शोभिता ।
स्वर्णाबद्धविचित्ररत्नपटलीचञ्चत्कपाटश्रिया
युक्तं द्वारचतुष्टयेन गिरिजे वन्दे मणीमन्दिरम् ॥२१॥

आस्तीर्णारुणकम्बलासनयुतं पुष्पोपहारान्वितं
दीप्तानेकमणिप्रदीपसुभगं राजद्वितानोत्तमम् ।
धूपोद्गारिसुगन्धिसम्भ्रममिलद्भृङ्गावलीगुञ्जितं
कल्याणं वितनोतु मेऽनवरतं श्रीमण्डपाभ्यन्तरम् ॥२२॥

कनकरचिते पञ्चप्रेतासनेन विराजिते
मणिगणचिते रक्तश्वेताम्बरास्तरणोत्तमे ।
कुसुमसुरभौ तल्पे दिव्योपधानसुखावहे
हृदयकमले प्रादुर्भूतां भजे परदेवताम् ॥२३ ॥

सर्वाङ्गस्थितिरम्यरूपरुचिरां प्रातः समभ्युत्थितां
जृम्भामञ्जुमुखाम्बुजां मधुमदव्याघूर्णदक्षत्रयाम् ।
सेवायातसमस्तसन्निधिसखीस्सम्मानयन्तीं दृशा
सम्पश्यन् परदेवतां परमहो मन्ये कृतार्थं जनुः ॥२४ ॥

उच्चैस्तोरणवर्तिवाद्यनिवहध्वाने समुज्जृम्भिते
भक्तैर्भूमिविलग्नमौलिभिरलं दण्डप्रणामे कृते ।
नानारत्नसमूहनद्धकथनस्थालीसमुद्भासितां
प्रातस्ते परिकल्पयामि गिरिजे नीराजनामुज्ज्वलाम् ॥२५ ॥

पाद्यं ते परिकल्पयामि पदयोरर्घ्यं तथा हस्तयोः
सौधीभिर्मधुपर्कमम्ब मधुरं धाराभिरास्वादय ।
तोयेनाचमनं विधेहि शुचिना गाङ्गेन मत्कल्पितं
साष्टाङ्गप्रणिपातमीशदयिते दृष्ट्या कृतार्थीकुरु ॥२६ ॥

मातः पश्य मुखाम्बुजं सुविमले दत्ते मया दर्पणे
देवि स्वीकुरु दन्तधावनमिदं गङ्गाजलेनान्वितम् ।
सुप्रक्षालितमाननं विरचयन्स्निग्धाम्बरप्रोञ्छनं
द्रागङ्गीकुरु तत्त्वमम्ब मधुरं ताम्बूलमास्वादय ॥२७ ॥

निधेहि मणिपादुकोपरि पदाम्बुजं मज्जना-
लयं व्रज शनैः सखीकृतकराम्बुजालम्बनम् ।
महेशि करुणानिधे तव दृगन्तपातोत्सुकान्
विलोकय मनागमूनुभयसंस्थितान्दैवतान् ॥२८ ॥

. हेमरत्नवरणेन वेष्टितं विस्तृतारुणवितानशोभितम् ।
सज्जसर्वपरिचारिकाजनं पश्य मज्जनगृहं मनो मम ॥२९ ॥

कनककलशजालस्फाटिकस्नानपाना-
द्युपकरणविशालं गन्धमत्तालिमालम् ।
स्फुरदरुणवितानं मञ्जुगन्धर्वगानं
परमशिवमहेले मज्जनागारमेहि ॥३० ॥

पीनोत्तुङ्गपयोधराः परिलसत्सम्पूर्णचन्द्रानना
रत्नस्वर्णविनिर्मिताः परिलसत्सूक्ष्माम्बरप्रावृताः ।
हेमस्नानघटीस्तथा मृदुपटीरुद्वर्तनं कौसुमं
तैलं कङ्कतिकां करेषु दधतीर्वन्देऽम्ब ते दासिकाः ॥३१ ॥

तत्र स्फाटिकपीठमेत्य शनकैरुत्तारितालङ्कृति—
र्नीचैरुज्झितकञ्चुकोपरिहिता रक्तोत्तरीयाम्बरा ।
वेणीबन्धमपास्य कङ्कतिकया केशप्रसादं मना-
क्कुर्वाणा परदेवता भगवती चित्ते मम द्योतताम् ॥३२ ॥

अभ्यङ्गं गिरिजे गृहाण मृदुना तैलेन सम्पादितं
काश्मीरैरगरुद्रवैर्मलयजैरुद्वर्तनं कारय ।
गीते किन्नरकामिनीभिरभितो वाद्ये मुदा वादिते
नृत्यन्तीमिह पश्य देवि पुरतो दिव्याङ्गनामण्डलीम् ॥३३ ॥

कृतपरिकरबन्धास्तुङ्गपीनस्तनाढ्या
मणिनिवहनिबद्धा हेमकुम्भीर्दधानाः ।
सुरभिसलिलनिर्यद्गन्धलुब्धालिमालाः
सविनयमुपतस्थुस्सर्वतः स्नानदास्य ॥३४ ॥

उद्गन्धैरगरुद्रवैस्सुरभिणा कस्तूरिकावारिणा
स्फूर्जत्सौरभयक्षकर्दमजलैः काश्मीरनीरैरपि ।
पुष्पाम्भोभिरशेषतीर्थसलिलैः कर्पूरपाथोभरैः
स्नानं ते परिकल्पयामि गिरिजे भक्त्या तदङ्गीकुरु ॥३५ ॥

प्रत्यङ्गं परिमार्जयामि शुचिना वस्त्रेण संप्रोञ्छनं
कुर्वे केशकलापमाययततरं धूपोत्तमैर्धूपितम् ।
आलीवृन्दविनिर्मितां यवनिकामास्थाय रत्नप्रभं
भक्तत्राणपरे महेशगृहिणि स्नानाम्बरं मुच्यताम् ॥३६ ॥

पीतं ते परिकल्पयामि निबिडं चण्डातकं चण्डिके
सूक्ष्मं स्निग्धमुरीकुरुष्व वसनं सिन्दूरपूरप्रभम् ।
मुक्तारत्नविचित्रहेमरचनाचारुप्रभाभास्वरं
नीलं कञ्चकमर्पयामि गिरिशप्राणप्रिये सुन्दरि ॥३७ ॥

विलुलितचिकुरेणच्छादितांसप्रदेशे
मणिनिकरविराजत्पादुकान्यस्तपादे ।
सुललितमवलम्ब्य द्राक्सखीमंसदेशे
गिरिशगृहिणि भूषामण्डपाय प्रयाहि ॥३८ ॥

लसत्कनककुट्टिमस्फुरदमन्दमुक्तावली
समुल्लसितकान्तिभिः कलितशक्रचापव्रजे ।
महाभरणमण्डपे निहितहेमसिंहासनं
सखीजनसमावृतं समधितिष्ठ कात्यायनि ॥३९ ॥

स्निग्धं कङ्कतिकामुखेन शनकैस्संशोध्य केशोत्करं
सीमन्तं विरचय्य चारु विमलं सिन्दूररेखान्वितम् ।
मुक्ताभिर्ग्रथितालकां मणिचितैस्सौवर्णसूत्रैः स्फुटं
प्रान्ते मौक्तिकगुच्छकोपलतिकां ग्रथ्नामि वेणीमिमाम् ॥४० ॥

विलम्बिवेणीभुजगोत्तमाङ्गस्फुरन्मणिश्रान्तमुपानयन्तम् ।
स्वरोचिषोल्लासितकेशपाशं महेशि चूडामणिमर्पयामि ॥४१ ॥

त्वामाश्रयद्भिः कबरीतमिस्रैर्बन्दीकृतं द्रागिव भानुबिम्बम् ।
मृडानि ! चूडामणिमादधानं वन्दामहे तावकमुत्तमाङ्गम् ॥४२ ॥

स्वमध्यनद्धहाटकस्फुरन्मणिप्रभाकुलं
विलम्बिमौक्तिकच्छटाविराजितं समन्ततः ।
निबद्धलक्षचक्षुषा भवेन भूरि भावितं
समर्पयामि भास्वरं भवानि फालभूषणम् ॥४३ ॥

मीनाम्भोरुहखञ्जरीटसुषमा विस्तारविस्मारके
कुर्वाणे किल कामवैरिमनसः कन्दर्पबाणप्रभाम् ।
माध्वीपानमदारुणेऽतिचपले दीर्घे दृगम्भोरुहे
देवि ! स्वर्णशलाकयोर्जितमिदं दिव्याञ्जनं दीयताम् ॥४४ ॥

मध्यस्थारुणरत्नकान्तिरुचिरां मुक्तामुखोद्भासितां
दैवाद्भार्गवजीवमध्यगरवेर्लक्ष्मीमधः कुर्वतीम् ।
उत्सिक्ताधरबिम्बकान्तिविसरैर्भौमीभवन्मौक्तिकां
मद्दत्तामुररीकुरुष्व गिरिजे नासाविभूषामिमाम् ॥४५ ॥

उडुकृतपरिवेषस्पर्द्धया शीतभानो
रिवविरचितदेहद्वन्द्वमादित्यबिम्बम् ।
अरुणमणिसमुद्यत्प्रान्तविभ्राजिमुक्तं
श्रवसि परिनिधेहि स्वर्णताटङ्कयुग्मम् ॥४६ ॥

मरकतवरपद्मरागहीरोत्थितगुलिकात्रितयावनद्धमध्यम् ।
विततविमलमौक्तिकञ्च कण्ठाभरणमिदं गिरिजे समर्पयामि ॥४७ ॥

नानादेशसमुत्थितैर्मणिगणप्रोद्यत्प्रभामण्डल-
व्याप्तैराभरणैर्विराजितगलां मुक्ताच्छटालङ्कृताम् ।
मध्यस्थारुणरत्नकान्तिरुचिरां प्रान्तस्थमुक्ताफल-
व्रातामम्ब चतुष्किकां परशिवे वक्षःस्थले स्थापय ॥४८ ॥

अन्योन्यं प्लावयन्ती सततपरिचलत्कान्तिकल्लोलजालैः
कुर्वाणा मज्जदन्तःकरणविमलतां शोभितेव त्रिवेणी ।
मुक्ताभिः पद्मरागैर्मरकतमणिभिर्निर्मिता दीप्यमानै-
र्नित्यं हारत्रयी ते परशिवरसिके चेतसि द्योततां नः ॥४९ ॥

करसरसिजनाले विस्फुरत्कान्तिजाले
विलसदमलशोभे चञ्चदीशाक्षिलोभे ।
विविधमणिमयूखोद्भासितं देवि दुर्गे
कनककटकयुग्मं बाहुयुग्मे निधेहि ॥५० ॥

व्यालम्बमानसितपट्टकगुच्छशोभि स्फूर्जन्मणीघटितहारविरोचमानम् ।
मातर्महेशमहिले तव बाहुमूले केयूरकद्वयमिदं विनिवेदयामि ॥५१ ॥

विततनिजमयूखैर्निर्मितामिन्द्रनीलैः
विजितकमलनालालीनमत्तालिमालाम् ।
मणिगणखचिताभ्यां कङ्कणाभ्यामुपेतां
कलय वलयराजीं हस्तमूले महेशि ॥५२ ॥

नीलपट्टमृदुगुच्छशोभितां बद्धनैकमणिजालमञ्जुलाम् ।
अर्पयामि वलयात्पुरःसरे विस्फुरत्कनकतैतृपालिकाम् ॥५३ ॥

आलवालमिव पुष्पधन्वना बालविद्रुमलतासु निर्मितम् ।
अङ्गुलीषु विनिधीयतां शनैरङ्गुलीयकमिदं मदर्पितम् ॥५४ ॥

विजितहरमनोभूमत्तमातङ्गकुम्भ-
स्थलविलुलितकूजत्किङ्किणीजालतुल्याम् ।
अविरतकलनादैरीशचेतो हरन्तीं
विविधमणिनिबद्धां मेखलामर्पयामि ॥५५ ॥

व्यालम्बमानवरमौक्तिकगुच्छशोभि
विभ्राजिहाटकपुटद्वयरोचमानम् ।
हेम्ना विनिर्मितमनेकमणिप्रबन्धं
नीवीनिबन्धनगुणं विनिवेदयामि ॥५६ ॥

विनिहतनवलाक्षापङ्कबालातपौघे
मरकतमणिराजीमञ्जुमञ्जीरघोषे ।
अरुणमणिसमुद्यत्कान्तिधाराविचित्र
स्तव चरणसरोजे हंसकः प्रीतिमेतु ॥५७ ॥

निबद्धशितिपट्टकप्रवरगुच्छसंशोभितां
कलक्वणितमञ्जुलां गिरिशचित्तसंमोहिनीम् ।
अमन्दमणिमण्डलीविमलकान्तिकिम्मीरितां
निधेहि पदपङ्कजे कनकघुङ्घुरूनम्बिके ! ॥५८ ॥

विस्फुरत्सहजरागरञ्जिते शिञ्जितेन कलितां सखीजनैः ।
पद्मरागमणिनूपुरद्वयीमर्पयामि तव पादपङ्कजे ॥५९ ॥

पादाम्बुजमुपासितं परिगतेन शीतांशुना
कृतां तनुपरस्परामिव दिनान्तरागारुणाम् ।
महेशि नवयावकद्रवभरेण शोणीकृतां
नमामि नखमण्डलीं चरणपङ्कजस्थां तव ॥६० ॥

आरक्तश्वेतपीतस्फुरदुरुकुसुमैश्चित्रितां पट्टसूत्रै-
र्देवस्त्रीभिः प्रयत्नागरुसमुदितैर्धूपितां दिव्यधूपैः ।
उद्यद्गन्धान्धपुष्पन्धयनिवहसमारब्धझङ्कारगीतां
चञ्चत्कह्लारमालां परिपरशिवरसिके कण्ठपीठेऽर्पयामि ॥६१ ॥

गृहाण परमामृतं कनकपात्रसंस्थापितं
समर्पय मुखाम्बुजे विमलवीटिकामम्बिके ।
विलोकय मुखाम्बुजं मुकुरमण्डले निर्मले
निधेहि मणिपादुकोपरि पदाम्बुजं सुन्दरि ॥६२ ॥

आलम्ब्य स्वसखीं करेण शनकैस्सिंहासनादुत्थिता
कूजन्मन्दमरालमञ्जुलगतिप्रोल्लासिभूषाम्बरा ।
आनन्दप्रतिपादकैरुपनिषद्वाक्यैः स्तुता वेधसा
मच्चित्ते स्थिरतामुपैतु गिरिजा यान्ती सभामण्डपम् ॥६३ ॥

चलन्त्यामम्बायां प्रचलति समस्ते परिजने
सवेगं संयाते कनकलतिकालङ्कृतिभरे ।
समन्तादुत्तालस्फुरितपदसम्पातजनितै-
र्झणत्कारैस्तारैर्झणितमासीन्मणिगृहम् ॥६४ ॥

चञ्चद्वेत्रकराभिरङ्गविलसद्भूषाम्बराभिः पुरो
यान्तीभिः परिचारिकाभिरमरव्राते समुत्सारिते ।
रुद्धे निर्जरसुन्दरीभिरभितः कक्षान्तरे निर्गतं
वन्दे नन्दितशम्भुनिर्मलचिदानन्दैकरूपं महः ॥६५ ॥

वेधाः पादतले पतत्ययमसौ विष्णुर्नमत्यग्रतः
शम्भुर्देहि दृगञ्चलं सुपरितं दूरस्थमालोकय ।
इत्येवं परिचारिकाभिरुदिते सम्माननां कुर्वती
दृग्द्वन्द्वेन यथोचितं भगवती भूयाद्विभूत्यै मम ॥६६ ॥

मन्दं चारणसुन्दरीभिरभितो यान्तीभिरुत्कण्ठया
नामोच्चारणपूर्वकं प्रतिदिशं प्रत्येकमावेदितान् ।
वेगादक्षिपथं गतान् सुरगणानालोकयन्ती शनै-
र्दित्सन्ती चरणाम्बुजं पथि जगत्पायान्महेशप्रिया ॥६७ ॥

अग्रे केचन पार्श्वयोः कतिपये पृष्ठे परे प्रस्थिता
आकाशे समवस्थिताः कतिपये दिक्षु स्थिताश्चाऽपरे ।
सम्मर्दं शनकैरपास्य पुरतो दण्डप्रणामान्मुहुः
कुर्वाणाः कतिचित्सुराः गिरिसुते दृक्पातमिच्छन्ति ते ॥६८ ॥

अग्रे गायति किन्नरी कलपदं गन्धर्वकान्ताश्शनै-
रातोद्यानि च वादयन्ति मधुरं सव्यापसव्यस्थिताः ।
कूजन्नूपुरवादमञ्जु पुरतो नृत्यन्ति दिव्याङ्गना
गच्छन्तः परितः स्तुवन्ति निगमस्तुत्यां विरिञ्च्यादयः ॥६९ ॥

कस्मैचित्सुचिरादुपासितमहामन्त्रौघसिद्धिं क्रमा-
देकस्मै भवनिःस्पृहाय परमानन्दस्वरूपां गतिम् ।
अन्यस्मै विषयानुरक्तमनसे दीनाय दुःखापहं
द्रव्यं द्वारसमाश्रिताय ददतीं वन्दामहे सुन्दरम् ॥७० ॥

नम्रीभूय कृताञ्जलिप्रकटितप्रेमप्रसन्नानने
मन्दं गच्छति सन्निधौ सविनयात्सोत्कण्ठमोघत्रये ।
नानामन्त्रगणं तदर्थमखिलं तत्साधनं तत्फलं
व्याचक्षाणमुदग्रकान्ति कलये यत्किञ्चिदाद्यं महः ॥७१ ॥

तव दहनसदृक्षैरीक्षणैरेव चक्षु-
र्निखिलपशुजनानां भीषयद्भीषणास्यम् ।
कृतवसति परेशप्रेयसि द्वारि नित्यं
शरभमिथुनमुच्चैर्भक्तियुक्तो नतोऽस्मि ॥७२ ॥

कल्पान्ते सरसैकदासमुदितानेकार्कतुल्यप्रभां
रत्नस्तम्भनिबद्धकाञ्चनगुणस्फूर्जद्वितानोत्तमाम् ।

कर्पूरागरुगर्भवर्तिकलिकाप्राप्तप्रदीपावलीं
श्रीचक्राकृतिमुल्लसन्मणिगणां वन्दामहे वेदिकाम् ।।७३ ।।

स्वस्थानस्थितदेवतागणवृते बिन्दौ मुदा स्थापितं
नानारत्नविराजिहेमविलसत्कान्तिच्छटादुर्दिनम् ।
चञ्चत्कौसुमतूलिकासनयुतं कामेश्वराधिष्ठितं
नित्यानन्दनिदानमम्ब ! सततं वन्दे च सिंहासनम् ।।७४ ।।

वदद्भिरभितो मुदा जय जयेति वृन्दारकैः
कृताञ्जलिपरम्परा विदधती कृतार्था दृशा ।
अमन्दमणिमण्डलीखचितहेमसिंहासनं
सखीजनसमावृतं समधितिष्ठ दाक्षायणि ! ।।७५ ।।

कर्पूरादिकवस्तुजातमखिलं सौवर्णभृङ्गारकं
ताम्बूलस्य करण्डकं मणिमयं चैलाञ्चलं दर्पणम् ।
विस्फूर्जन्मणिपादुके च दधतीः सिंहासनस्याभित-
स्तिष्ठन्तीः परिचारिकास्तव सदा वन्दामहे सुन्दरि ।।७६ ।।

त्वदमलवपुरुद्यत्कान्तिकल्लोलजालैः
स्फुटमिव दधतीभिर्बाहुविक्षेपलीलाम् ।
मुहुरपि च विधूते चामरग्राहिणीभिः
सितकरकरशुभ्रे चामरे चालयामि ।।७७ ।।

प्रान्तस्फुरद्विमलमौक्तिकगुच्छजालं
चञ्चन्महामणिविचित्रितहेमदण्डम् ।
उद्यत्सहस्रकरमण्डलचारुहेम-
च्छत्रं महेशमहिले विनिवेशयामि ।।७८ ।।

उद्यत्तावकदेहकान्तिपटलीसिन्दूरपूरप्रभा-
शोणीभूतमुदग्रलोहितमणिच्छेदानुकारिच्छवि ।
दूरादादरनिर्मिताञ्जलिपुटैरालोक्यमानं सुर-
व्यूहैः काञ्चनमातपत्रमतुलं वन्दामहे सुन्दरम् ॥७९ ॥

सन्तुष्टां परमामृतेन विलसत्कामेश्वराङ्कस्थितां
पुष्पौघैरभिपूजितां भगवतीं त्वां वन्दमाना मुदा ।
स्फूर्जत्तावकदेहरश्मिकलनाप्राप्तस्वरूपाभिदाः
श्रीचक्रावरणस्थितास्सविनयं वन्दामहे देवताः ॥८० ॥

आधारशक्त्यादिकमाकलय्य मध्ये समस्ताधिकयोगिनीं च ।
मित्रेशनाथादिकमत्र नाथ-चतुष्टयं शैलसुते नतोऽस्मि ॥८१ ॥
त्रिपुरासुधार्णवासनमारभ्य त्रिपुरमालिनीं यावत् ।
आवरणाष्टकसंस्थितमासनषट्कं नमामि परमेशि ! ॥८२ ॥

ईशाने गणपं स्मरामि विचरद्विघ्नान्धकारच्छिदं
वायव्ये बटुकञ्च कज्जलरुचिं व्यालोपवीतान्वितम् ।
नैर्ऋत्ये महिषासुरप्रमथिनीं दुर्गाञ्च सम्पूजय-
न्नाग्नेयेऽखिलभक्तरक्षणपरं क्षेत्राधिनाथं भजे ॥८३ ॥

उड्डयाणजालन्धरकामरूपपीठानिमान्पूर्णगिरिप्रसक्तान् ।
त्रिकोणदक्षाग्रिमसव्यभागमध्यस्थितान् सिद्धिकरान्नमामि ॥८४ ॥
लोकेशः पृथिवीपतिर्निगदितो विष्णुर्जलानां प्रभु-
स्तेजोनाथ उमापतिश्च मरुतामीशस्तथा चेश्वरः ।
आकाशाधिपतिस्सदाशिव इति प्रेताभिधामागता-
नेतांश्चक्रबहिःस्थितान्सुरगणान्वन्दामहे सादरम् ॥८५ ॥

तारानाथकलाप्रवेशनिगमव्याजाद्गतासुप्रथं
त्रैलोक्ये तिथिषु प्रवर्तितकलाकाष्ठादिकालक्रमम् ।
रत्नालङ्कृतिचित्रवस्त्रललितं कामेश्वरीपूर्वकं
नित्याषोडशकं नमामि लसितं चक्रात्मनोरन्तरे ॥८६ ॥

हृदि भावितदैवतं प्रयत्नाभ्युपदेशानुगृहीतभक्तसङ्गम् ।
स्वगुरुक्रमसंज्ञचक्रराजस्थितमोघत्रयमानतोऽस्मि मूर्ध्ना ॥८७ ॥

हृदयमथ शिरःशिखाखिलाद्ये कवचमयो नयनत्रयञ्च देवि !
मुनिजनपरिचिन्तितं तथाऽस्त्रं स्फुरतु सदा हृदये षडङ्गमेतत् ॥८८ ॥

त्रैलोक्यमोहनमिति प्रथिते तु चक्रे
चञ्चद्विभूषणगणत्रिपुराधिवासे ।
रेखात्रये स्थितवतीरणिमादिसिद्धी-
र्मुद्रा नमामि सततं प्रकटाभिधास्ताः ॥८९ ॥

सर्वाशापरिपूरके वसुदलद्वन्द्वेन विभ्राजिते
विस्फूर्जत्त्रिपुरेश्वरीनिवसतौ चक्रे स्थिता नित्यशः ।
कामाकर्षणिकादयो मणिगणभ्राजिष्णुदिव्याम्बरा
योगिन्यः प्रदिशन्तु कांक्षितफलं विख्यातगुप्ताभिधाः ॥९० ॥

महेशि ! वसुभिर्दलैर्लसति सर्वसंक्षोभणे
विभूषणगणस्फुरत्त्रिपुरसुन्दरीसद्मनि ।
अनङ्गकुसुमादयो विविधभूषणोद्भासिता
दिशन्तु मम कांक्षितं तनुतराश्च गुप्ताभिधाः ॥९१ ॥

लसद्युगदशारके स्फुरति सर्वसौभाग्यदे
शुभाभरणभूषितत्रिपुरवासिनीमन्दिरे ।
स्थिता दधतु मङ्गलं सुभगसर्वसंक्षोभिणी-
मुखास्सकलसिद्धयो विदितसम्प्रदायाभिधाः ॥९२ ॥

बहिर्दशारे सर्वार्थसाधके त्रिपुराश्रयाः ।
कुलकौलाभिधाः पान्तु सर्वसिद्धिप्रदायिकाः ॥९३ ॥

अन्तःशोभिदशारकेऽतिललिते सर्वादिरक्षाकरे
मालिन्या त्रिपुराद्यया विरचितावासे स्थितं नित्यशः ।
नानारत्नविभूषणं मणिगणभ्राजिष्णु दिव्याम्बरं
सर्वज्ञादिकशक्तिवृन्दमनिशं वन्दे निगर्भाभिधम् ॥९४ ॥

सर्वरोगहरेऽष्टारे त्रिपुरासिद्ध्यान्विते ।
रहस्ययोगिनीर्नित्यं वशिन्याद्या नमाम्यहम् ॥९५ ॥

चूताशोकविकासिकेतकरजःप्रोद्भासिनीलाम्बुज-
प्रस्फूर्जन्नवमल्लिकासमुदितैः पुष्पैः शरन्निर्मितान् ।
रम्यं पुष्पशरासनं सुललितं पाशं तथा चाङ्कुशं
वन्दे तावकमायुधं परशिवे चक्रान्तराले स्थितम् ॥९६ ॥

त्रिकोण उदितप्रभे जगति सर्वसिद्धिप्रदे
युते त्रिपुरयाम्बया स्थितवती च कामेश्वरी ।
तनोतु मम मङ्गलं सकलशर्म वज्रेश्वरी
करोतु भगमालिनी स्फुरतु मामके चेतसि ॥९७ ॥

सर्वानन्दमये समस्तजगतामाकाङ्क्षिते बैन्दवे
भैरव्या त्रिपुराद्यया विरचितावासे स्थिता सुन्दरी ।
आनन्दोल्लसितेक्षणा मणिगणभ्राजिष्णु भूषाम्बरा
विस्फूर्जद्वदना परापररहः सा पातु मां योगिनी ॥९८ ॥

उल्लसत्कनककान्तिभासुरं सौरभस्फुरणवासिताम्बरम् ।
दूरतः परिहतं मधुव्रतैरर्पयामि तव देवि चम्पकम् ॥९९ ॥
वैरमुद्धतमपास्य शम्भुना मस्तके विनिहितं कलाच्छलात् ।
गन्धलुब्धमधुपाश्रितं सदा केतकीकुसुममर्पयामि ते ॥१०० ॥

चूर्णीकृतं द्रागिव पद्मजेन त्वदाननस्पर्धि सुधांशुबिम्बम् ।
समर्पयामि स्फुरमञ्जलिस्थं विकासिजातीकुसुमोत्करं ते ॥१०१ ॥

अगरुबहलधूपाजस्रसौरभ्यरम्यां
मरकतमणिराजीराजिहारिस्रगाभाम् ।
दिशि विदिशि विसर्पद्गन्धलुब्धालिमालां
वकुलकुसुममालां कण्ठपीठेऽर्पयामि ॥१०२ ॥

ईकारोद्‌र्ध्वगबिन्दुराननमधो बिन्दुद्वयञ्च स्तनौ
त्रैलोक्ये गुरुगम्यमेतदखिलं हार्दञ्च रेखात्मकम्।
इत्थं कामकलात्मिकां भगवतीमन्तस्समाराधय-
न्नानन्दाम्बुधिमज्जने प्रलभतामानन्दथुं सज्जनः ॥१०३॥

धूपं तेऽगरुसम्भवं भगवति ! प्रोल्लासिगन्धोद्धुरं
दीपं चैव निवेदयामि महसा हार्दान्धकारच्छिदम्।
रत्नस्वर्णविनिर्मितेषु परितः पात्रेषु संस्थापितं
नैवेद्यं विनिवेदयामि परमानन्दात्मिके सुन्दरि ॥१०४॥

जातीकोरकतुल्यमोदनमिदं सौवर्णपात्रे स्थितं
शुद्धान्नं शुचि मुद्‌गमाषचणकोद्‌भूतास्तथा सूपकाः।
प्राज्यं माहिषमाज्यमुत्तममिदं हैयङ्गवीनं पृथक्-
पात्रेषु प्रतिपादितं परशिवे तत्सर्वमङ्गीकुरु ॥१०५॥

शिम्बीसूरणशाकबिम्बबृहतीकूष्माण्डकोशातकी-
वृन्ताकानि पटोलकानि मृदुना संसाधितान्यग्निना।
सम्पन्नानि च वेसवारविसरैर्दिव्यानि भक्त्या कृता-
न्यग्रे ते विनिवेदयामि गिरिजे सौवर्णपात्रव्रजे ॥१०६॥

निम्बूकार्द्रकचूतकन्दकदली कौशातकीकर्कटी-
धात्रीबिल्वकरीरकैर्विरचितान्यानन्दचिद्विग्रहे।
राजीभिः कटुतैलसैन्धवहरिद्राभिः स्थितान्यातये
सन्धानानि निवेदयामि गिरिजे भूरिप्रकाराणि ते ॥१०७॥

सितयाज्यितलडुकव्रजान्मृदुपूपान्मृदुलाश्च पूरिकाः।
परमान्नमिदं च पार्वति ! प्रणयेन प्रतिपादयामि ते ॥१०८॥
दुग्धमेतदनले सुसाधितं चन्द्रमण्डलनिभं तथा दधि।
फाणितं शिखरिणीं सितासितां सर्वमम्ब विनिवेदयामि ते ॥१०९॥

अग्रे ते विनिवेद्य सर्वममितं नैवेद्यमङ्गीकृतं
ज्ञात्वा तत्त्वचतुष्टयं प्रथमतो मन्ये सुतृप्तां ततः ।
देवीं त्वां परिशिष्टमम्ब कनकामत्रेषु संस्थापितं
शक्तिभ्यः समुपाहरामि सकलं देवेशि शम्भुप्रिये ॥११० ॥

वामेन स्वर्णपात्रीमनुपमपरमान्नेन पूर्णां दधाना-
मन्येन स्वर्णदर्वीं निजजनहृदयाभीष्टदां धारयन्तीम् ।
सिन्दूरारक्तवस्त्रां विविधमणिलसद्भूषणां मेचकाङ्गीं
तिष्ठन्तीमग्रतस्ते मधुमदमुदितामन्नपूर्णां नमामि ॥१११ ॥

पङ्क्त्योपविष्टान्परितस्तु चक्रे शक्त्या स्वया लिङ्गितवामभागान् ।
सर्वोपचारैः परिपूज्य भक्त्या तवाम्बिके पारिषदान्नमामि ॥११२ ॥
परमामृतमत्तसुन्दरीगणमध्यस्थितमर्कभासुरम् ।
परमामृतघूर्णितेक्षणं किमपि ज्योतिरुपास्महे परम् ॥११३ ॥

दृश्यते तव मुखाम्बुजं शिवे श्रूयते स्फुटमनाहतध्वनिः ।
अर्चने तव गिरामगोचरे न प्रयाति विषयान्तरं मनः ॥११४ ॥
त्वन्मुखाम्बुजविलोकनोल्लसत्प्रेमनिश्चलविलोचनद्वयीम् ।
उन्मनीमुपगतां सभामिमां भावयामि परमेशि तावकीम् ॥११५ ॥
चक्षुः पश्यतु नेह किञ्चन परं घ्राणं न वा जिघ्रतु
श्रोत्रं हन्त शृणोतु न त्वगपि न स्पर्शं समालम्बताम् ।
जिह्वा वेत्तु न वा रसं मम परं युष्मत्स्वरूपामृते
नित्यानन्दविघूर्णमाननयने नित्यं मनो मज्जतु ॥११६ ॥

यस्त्वां पश्यति पार्वति प्रतिदिनं ध्यानेन तेजोमयीं
मन्ये सुन्दरि तत्त्वमेतदखिलं वेदेषु निष्ठां गतम् ।
यस्तस्मिन्समये तवार्चनविधावानन्दसान्द्राशयो
यातोऽहं तदभिन्नतां परशिवे सोऽयं प्रसादस्तव ॥११७ ॥

गणाधिनाथं बटुकञ्च योगिनीः क्षेत्राधिनाथञ्च विदिक्चतुष्टये ।
सर्वोपचारैः परिपूज्य भक्तितो निवेदयामो बलिमुक्तयुक्तिभिः ॥११८ ॥

वीणामुपान्ते खलु वादयत्यै निवेद्य शेषं खलु शेषिकायै ।
सौवर्णभृङ्गारविनिर्गतेन जलेन शुद्धाचमनं विधेहि ॥११९ ॥

ताम्बूलं विनिवेदयामि विलसत्कर्पूरकस्तूरिका-
जातीपूगलवङ्गचूर्णखदिरैर्भक्त्या समुल्लासितम् ।
स्फूर्जद्रत्नसमुद्गकप्रणिहितं सौवर्णपात्रे स्थितै-
र्दीपैरुज्ज्वलमन्नचूर्णरचितैरारार्तिकं गृह्यताम् ॥१२० ॥

काचिद्गायति किन्नरी कलपदं वाद्यं दधानोर्वशी
रम्भा नृत्यति केलिमञ्जुलपदं मातः पुरस्तात्तव ।
कृत्यं प्रोज्झ्य सुरस्त्रियो मधुमदव्याघूर्णमानेक्षणं
नित्यानन्दसुधाम्बुधिं तव मुखं पश्यन्ति हृष्यन्ति च ॥१२१ ॥

ताम्बूलोद्भासिवक्त्रैस्त्वदमलवदनालोकनोल्लासिनेत्रै-
श्चक्रस्थैः शक्तिसङ्घैः परिहतविषयासङ्गमाकर्ण्यमानम् ।
गीतज्ञाभिः प्रकामं मधुरसमधुरं वादितं किन्नरीभि-
र्वीणाझङ्कारनादं कलय परशिवानन्दसन्धानहेतोः ॥१२२ ॥

अर्चाविधौ ज्ञानलवोऽपि दूरे दूरे तदापादकवस्तुजातम् ।
प्रदक्षिणीकृत्य ततोऽर्चनं ते पञ्चोपचारात्मकमर्पयामि ॥१२३ ॥

यथेप्सितमनोगतप्रकटितोपचारार्चितां
निजावरणदेवतागणवृतां सुरेशस्थिताम् ।
कृताञ्जलिपुटो मुहुः कलितभूमिरष्टाङ्गकै-
र्नमामि भगवत्यहं त्रिपुरसुन्दरि त्राहि माम् ॥१२४ ॥

विज्ञप्तीरवधेहि मे सुमहता यत्नेन ते सन्निधिं
प्राप्तं मामिह कान्दिशीकमधुना मातर्न दूरीकुरु ।
चित्तं त्वत्पदभावने व्यभिचरेद्दृग्वाक्च मे जातु चे-
त्तत्सौम्ये स्वगुणैर्बधान न यथा भूयो विनिर्गच्छति ॥१२५ ॥

क्वाहं मन्दमतिः क्व चेदमखिलैरेकान्तभक्तैः स्तुतं
ध्यातं देवि तथापि ते स्वमनसा श्रीपादुकापूजनम् ।
कादाचित्कमदीयचिन्तनविधौ सन्तुष्टया शर्मदं
स्तोत्रं देवतया तया प्रकटितं मन्ये मदीयानने ॥१२६ ॥

नित्यार्चनमिदं चित्ते भाव्यमानं सदा मया ।
निबद्धं विविधैः पद्यैरनुगृह्णातु सुन्दरी ॥१२७ ॥

॥ इति त्रिपुरसुन्दरीमानसपूजास्तोत्रं समाप्तम् ॥

■

त्रिपुरसुन्दरी-स्तोत्रम्

[प्रस्तुत अष्टश्लोकी स्तोत्र श्रीमदादिशङ्कराचार्य भगवत्पाद द्वारा विरचित है। इसमें भगवती के विभिन्न स्वरूपों का निदर्शन कराया गया है। इसके नित्यपाठ से साधक का कल्याण-पथ प्रशस्त होता है तथा निर्वाण के अनन्तर सायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है।]

कदम्बवनचारिणीं मनुकदम्ब-कादम्बिनीं
नितम्बजितभूधरां सुरनितम्बिनीसेविताम्।
नवाम्बुरुह-लोचनामभिनवाम्बुद-श्यामलां
त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥१॥

कदम्बवनवासिनीं कनक-वल्लकी-धारिणीं
महार्हमणिहारिणीं मुखसमुल्लसद्वारुणीम्।
दयाविभवकारिणीं विशदलोचनीं चारिणीं
त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥२॥

कदम्बवनशालया कुचभरोल्लसन्मालया
कुचोपमितशैलया गुरुकृपालसद्वेलया।
मदारुणकपोलया मधुरगीतवाचालया
कयाऽपि घननीलया कवचिता वयं लीलया ॥३॥

कदम्बवनमध्यगां कनकमण्डलोपस्थितां
षडम्बुरुहवासिनीं सततसिद्धसौदामिनीम्।
विडम्बितजपारुचिं विकचचन्द्रचूडामणिं
त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥४॥

कुचाञ्चितविपञ्चिकां कुटिलकुन्तलाऽलङ्कृतां
कुशेशयनिवासिनीं कुटिलचित्तविद्वेषिणीम्।
मदारुणविलोचनां मनसिजारिसम्मोहिनीं
मतङ्गमुनिकन्यकां मधुरभाषिणीमाश्रये ॥५॥

स्मेरप्रथमपुष्पिणीं रुधिर-बिन्दु-नीलाम्बरां
गृहीतमधुपात्रिकां मधुविघूर्णनेत्राञ्चलाम् ।
घनस्तन-भरोन्नतां गलितचूलिकां श्यामलां
त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥६ ॥

सकुङ्कुम-विलेपनामलक-चुम्बिकस्तूरिकां
समन्दहसितेक्षणां स-शरचाप-पाशाङ्कुशाम् ।
अशेषजन-मोहिनीमरुणमाल्य-भूषाम्बरां
जपाकुसुम-भासुरां जपविधौ स्मराम्यम्बिकाम् ॥७ ॥

पुरन्दर-पुरन्ध्रिका-चिकुरबन्ध-सैरन्ध्रिकां
पितामहपतिव्रतां पटुपाटीर-चर्चारताम् ।
मुकुन्दरमणीं मणिलसदलङ्क्रियाकारिणीं
भजामि भुवनाम्बिकां सुरवधूटिकाचेटिकाम् ॥८ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं त्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥१३६ ॥

■

मूलमन्त्रात्मक-श्रीचक्रराजस्तवः

[यह सर्वेष्टसिद्धिप्रद स्तव षोडशाक्षरी मूलमन्त्र से प्रथमान्वित है । इस स्तव में समस्त श्रीयन्त्र का निदर्शन किया गया है, साथ ही तत्तदावरणों, चक्रों तथा देवियों का भी विन्यास किया गया है । इस स्तोत्र का पाठ करने से मूलमन्त्र का अपने आप पाठ हो जाता हैं और विशेषपूजा का फल भी मिलता है । इसके श्लोकों का पहला अक्षर मिलाने से लघुषोडशाक्षरी मन्त्र हो जाता है ।]

॥ श्रीः ॥

ध्यानम्

सौन्दर्यैकनिधे सदार्द्रहृदये सौभाग्यसंवर्धिनि
सौशील्यादिगुणप्रदे च नमतां सत्सौमनस्यप्रदे ।
सिन्दूरारुणविग्रहे सुमुकुटे सम्पत्करीसेविते
श्रीसाम्राज्ञि सुरेश्वरेश्वरि शिवे मां पाहि राजेश्वरि ॥

* * *

कर्तुं देवि जगत् विलासविधिना सृष्टेन ते मायया
सर्वानन्दमयेन मध्यविलसत् श्रीबिन्दुनालङ्कृतम् ।
श्रीमत् सद्गुरुपूज्यपादकरुणासंवेद्यतत्त्वात्मकं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥१ ॥

एकस्मिन् अणिमादिभिः विलसितं भूमीगृहे सिद्धिभिः
ब्रह्माद्याभिरुपासितं च दशभिः मुद्राभिरुद्भासितम् ।
चक्रेश्या प्रकटेङ्यया त्रिपुरया त्रैलोक्यसम्मोहनं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥२ ॥

ईड्याभिर्नवविद्रुमच्छविसमाभिख्याभिरङ्गीकृतं
कामाकर्षणिकादिभिः स्वरदले गुप्ताभिधाभिः सदा ।
सर्वाशापरिपूरके परिलसद्देव्या पुरेश्या युतं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥३ ॥

लब्धप्रोज्वलयौवनाभिरभितोऽनङ्गप्रसूनादिभिः
सेव्यां गुप्ततराभिरष्टकमले संक्षोभकाख्ये सदा।
चक्रेश्या पुरसुन्दरीति जगति प्रख्यातया सङ्गतं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥४॥

ह्रींकाराङ्कितमन्त्रराजनिलयं श्रीसर्वसंक्षोभिणी
मुख्याभिः चलकुन्तलाभिरुचितं मन्वस्त्रचक्रे शुभे।
यत्र श्रीपुरमालिनी विजयते श्रीसर्वसौभाग्यदे
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥५॥

हस्ते पाशगदादिशस्त्रनिचयं दीप्तं वहन्तीभिरु-
त्तीर्णाख्याभिरुपास्ययाऽतिशुभदे सर्वार्थसिद्धिप्रदे।
चक्रे ब्राह्मदशारके विलसितं देव्या पुरेश्याख्यया
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥६॥

सर्वज्ञादिभिरिन्दुकान्तधवलाकाराभिरारक्षिते
चक्रेऽन्तर्दशकोणकेऽतिविमले नाम्ना च रक्षाकरे।
यत्र श्रीपुरमालिनी विजयते नित्यं निगर्भास्तुता
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥७॥

कर्तुं मूकमनर्गलस्रुवदतिद्राक्षातिवाग्वैभवं
दक्षाभिर्वशिनीमुखाभिरभितोवाग्देवताभिर्युतम्।
अष्टारे पुरसिद्धया विलसितं रोगप्रणाशे शुभं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥८॥

हन्तुं दानवसङ्घमाहवभुवि स्वेच्छासमाकल्पितैः
शस्त्रैरस्त्रचयैश्च चापनिवहैरत्युग्रतेजोभरैः।
आर्तत्राणपरायणैररिकुलप्रध्वंसिभिः संवृतं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥९॥

लक्ष्मीवागगजात्मभिः करलसत्पाशासिघण्टादिभिः
कामेश्यादिभिरावृतं शुभकरं श्रीसर्वसिद्धिप्रदम् ।
चक्रेशी च पुराम्बिका विजयते यत्र त्रिकोणे मुदा
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥१० ॥

ह्रींकारं परमं जपद्भिरनिशं मित्रेशनाथादिभिः
दिव्यौघैर्मनुजौघसिद्धनिवहैः सारूप्यमुक्तिंगतैः ।
नानामन्त्ररहस्यविद्भिरखिलैरन्वासितं योगिभिः
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥११ ॥

सर्वोत्कृष्टवपुर्धराभिरभितो देवीसमाभिर्जगत्
संरक्षार्थमुपागताभिरसकृन्नित्याभिधाभिर्मुदा ।
कामेश्यादिभिराज्ञयैव ललितादेव्याः समुद्भासितं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥१२ ॥

कर्तुं श्रीललिताङ्गरक्षणविधिं लावण्यपूर्णां तनुं
आस्थायास्त्रवरोल्लसत्करपयोजाताभिरध्यासितम् ।
देवीभिर्हृदयादिभिश्च परितः विन्दुं सदानन्ददं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥१३ ॥

लक्ष्मीशादिपदैर्युतेन महतामञ्चेन संशोभितं
षट्त्रिंशद्भिरनर्घरत्नखचितैः सोपानकैः भूषितम् ।
चिन्तारत्नविनिर्मितेन महता सिंहासनेनोज्वलां
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥१४ ॥

ह्रींकारैकमहामनुं प्रजपतां कामेश्वरेणार्पितां
तस्यांके च निषण्णया त्रिजगतां मात्रा चिदाकारया ।
कामेश्या करुणारसैकनिधिना कल्याणदात्र्या युतां
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥१५ ॥

श्रीमत्पञ्चदशाक्षरैकनिलयं श्रीषोडशीमन्दिरं
श्रीनाथादिभिरर्चितं च बहुधा देवैः समाराधितम् ।
श्रीकामेशरहःसखीनिलयनं श्रीमद्गुहाराधितं
श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥१६ ॥

॥ सम्पूर्णः ॥

■

घट-स्तवः

[भगवती की अपरिमित महिमा का वर्णन कुछ ही श्लोकों में किये जाने के कारण इस स्तव को घट-स्तव कहा गया है, मानों सागर को गागर में समेटा गया हो।

ललिता महात्रिपुरसुन्दरी की उपासना करने वाला भक्त स्वयं महाराज बन जाता है, जैसा कि इसी स्तव के एक श्लोक से स्पष्ट है, जिसका अर्थ है—

न तो मैं किसी से कुछ माँगता हूँ, न किसी को ठगता हूँ, न ही किसी की सेवा करता हूँ। फिर भी उत्तम भवनों में रहता हूँ, मधुर भोजन करता हूँ तथा उत्तम स्त्रियों का भोग करता हूँ; क्योंकि मेरे हृदय में कुलकामधेनु देवी ललिता का स्फुरण होता है।]

आनन्दमन्थरपुरन्दरमुक्तमाल्यं
मौलौ हठेन निहितं महिषासुरस्य।
पादाम्बुजं भवतु मे विजयाय मञ्जु-
मञ्जीरशिञ्जितमनोहरमम्बिकायाः ॥१॥

देवि! त्र्यम्बकपत्नि! पार्वति! सति! त्रैलोक्यमातश्शिवे!
शर्वाणि! त्रिपुरे! मृडानि! वरदे! रुद्राणि! कात्यायनि।
भीमे! भैरवि! चण्डि! शर्वरिकले! कालक्षये! शूलिनि!
त्वत्पादप्रणयाननन्यमनसः पर्याकुलान्पाहि नः ॥२॥

देवि! त्वां सकृदेव यः प्रणमति क्षोणीभृतस्तं नम-
न्त्याजन्मस्फुरदङ्घ्रिपीठविलुठत्कोटीरकोटिच्छटाः।
यस्त्वामर्चति सोऽर्च्यते सुरगणैर्यस्तौति स स्तूयते
यस्त्वां ध्यायति तं स्मरार्तिविधुरा ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥३॥

उन्मत्ता इव सग्रहा इव विषव्यासक्तमूर्छा इव
प्राप्तप्रौढमदा इवार्तिविरहग्रस्ता इवार्ता इव ।
ये ध्यायन्ति हि शैलराजतनयां धन्यास्त एवाग्रत-
स्त्यक्तोपाधिविवृद्धरागमनसो ध्यायन्ति तान् सुभ्रुवः ॥४॥

ध्यायन्ति ये क्षणमपि त्रिपुरे ! हृदि त्वां
लावण्ययौवनघनैरपि विप्रयुक्ताः ।
ते विस्फुरन्ति ललितायतलोचनानां
चित्तैकभित्तिलिखितप्रतिमाः पुमांसः ॥५॥

एतं किं नु दृशा पिबाम्युत विशाम्यस्याङ्गमङ्गैर्निजैः
किं वाऽमुं निगराम्यनेन सहसा किं वैकतामाश्रये ।
यस्येत्थं विवशो विकल्पललिताकूतेन योषिज्जनः
किं तद्यन्न करोति देवि ! हृदये यस्य त्वमावर्तसे ॥६॥

विश्वव्यापिनि यद्वदीश्वर इति स्थाणावनन्याश्रयः
शब्दे शक्तिरिति त्रिलोकजननि ! त्वय्येव तथ्यस्थितिः ।
इत्थं सत्यपि शक्नुवन्ति यदिमाः क्षुद्रा रुजो बाधितुं
त्वद्भक्तानपि न क्षिणोषि च रुषा तद्देवि ! चित्रं महत् ॥७॥

इन्दोर्मध्यगतां मृगाङ्कसदृशच्छायां मनोहारिणीं
पाण्डूत्फुल्लसरोरुहासनगतां स्निग्धप्रदीपच्छविम् ।
वर्षन्तीममृतं भवानि ! भवतीं ध्यायन्ति ये देहित-
स्ते निर्मुक्तरुजो भवन्ति रिपवः प्रोज्झन्ति तान् दूरतः ॥८॥

पूर्णेन्दोश्शकलैरिवातिबहलैः पीयूषपूरैरिव
क्षीराब्धेर्लहरीभरैरिव सुधापङ्कस्य पिण्डैरिव ।
प्रालेयैरिव निर्मितं तव वपुर्ध्यायन्ति ये श्रद्धया
चित्तान्तर्निहितार्तितापविपदस्ते सम्पदं बिभ्रति ॥९॥

ये संस्मरन्ति तरलां सहसोल्लसन्तीं
त्वां ग्रन्थिपञ्चकभिदं तरुणार्कशोणाम् ।
रागार्णवे बहलरागिणि मज्जयन्तीं
कृत्स्नं जगद्दधति चेतसि तान् मृगाक्ष्यः ॥१० ॥

लाक्षारसस्नपितपङ्कजतन्तुतन्वीं
अन्तः स्मरत्यनुदिनं भवतीं भवानि !
यस्तं स्मरप्रतिममप्रतिमस्वरूपा
नेत्रोत्पलैर्मृगदृशो भृशमर्चयन्ति ॥११ ॥

स्तुमस्त्वां वाचमव्यक्तां हिमकुन्देन्दुरोचिषम् ।
कदम्बमालां बिभ्राणामापादतललम्बिनीम् ॥१२ ॥

मूर्ध्नीन्दोस्सितपङ्कजासनगतां प्रालेयपाण्डुत्विषं
वर्षन्तीममृतं सरोरुहभुवो वक्त्रेऽपि रन्ध्रेऽपि च ।
अच्छिन्ना च मनोहरा च ललिता चातिप्रसन्नापि च
त्वामेवं स्मरतस्स्मरारिदयिते वाक्सर्वतो वल्गति ॥१३ ॥

ददातीष्टान् भोगान् क्षपयति रिपून् हन्ति विपदो
दहत्याधीन् व्याधीन् शमयति सुखानि प्रतनुते ।
हठादन्तर्दुःखं दलयति पिनष्टीष्टविरहं
सकृद्ध्याता देवी किमिव निरवद्यं न कुरुते ॥१४ ॥

यस्त्वां ध्यायति वेत्ति विन्दति जपत्यालोकते चिन्तय-
त्यन्वेति प्रतिपद्यते कलयति स्तौत्याश्रयत्यर्चति ।
यश्च त्र्यम्बकवल्लभे ! तव गुणानाकर्णयत्यादरात्
तस्य श्रीर्न गृहादपैति विजयस्तस्याग्रतो धावति ॥१५ ॥

किं किं दुःखं दनुजदलिनि ! क्षीयते न स्मृतायां
का का कीर्तिः कुलकमलिनि ! ख्याप्यते न स्तुतायाम् ।
का का सिद्धिस्सुरवरनुते ! प्राप्यते नार्चितायां
कं कं योगं त्वयि न चिनुते चित्तमालम्बितायाम् ॥१६ ॥

ये देवि ! दुर्धरकृतान्तमुखान्तरस्थाः
ये कालि ! कालघनपाशनितान्तबद्धाः ।
ये चण्डि ! चण्डगुरुकल्मषसिन्धुमग्नाः
तान् पासि मोचयसि तारयसि स्मृतैव ॥१७॥

लक्ष्मीवशीकरणचूर्णसहोदराणि
त्वत्पादपङ्कजरजांसि चिरं जयन्ति ।
यानि प्रणाममिलितानि नृणां ललाटे
लुम्पन्ति दैवलिखितानि दुरक्षराणि ॥१८॥

रे मूढाः ! किमयं वृथैव तपसा कायः परिक्लिश्यते
यज्ञैर्वा बहुदक्षिणैः किमितरे रिक्तीक्रियन्ते गृहाः ।
भक्तिश्चेदविनाशिनी भगवतीपादद्वयी सेव्यतां
उन्निद्राम्बुरुहातपत्रसुभगा लक्ष्मीः पुरो धावति ॥१९॥

याचे न कञ्चन न कञ्चन वञ्चयामि
सेवे न कञ्चन निरस्तसमस्तदैन्यः ।
श्लक्ष्णं वसे मधुरमद्मि भजे वरस्त्री-
र्देवी हृदि स्फुरति मे कुलकामधेनुः ॥२०॥

नमामि यामिनीनाथलेखालङ्कृतकुन्तलाम् ।
भवानीं भवसन्तापनिर्वापणसुधानदीम् ॥२१॥

॥ इति घटस्तवः ॥

■

चर्चा-स्तवः

[चर्च धातु से अङ् और टाप् प्रत्यय करने से चर्चा शब्द निष्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है, आवृत्ति करना = बार-बार पढ़ना। नाम से ही प्रतीत होता है कि यह स्तव नित्यपाठ के लिए है। इसका नित्यप्रति पाठ करने या सुनने से समस्त मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।]

सौन्दर्यविभ्रमभुवो भुवनाधिपत्य-
सङ्कल्पकल्पतरवस्त्रिपुरे ! जयन्ति।
एते कवित्वकुमुदप्रकरावबोध-
पूर्णेन्दवस्त्वयि जगज्जननि ! प्रणामाः ॥१॥

देवि ! स्तुतिव्यतिकरे कृतबुद्धयस्ते
वाचस्पतिप्रभृतयोऽपि जडीभवन्ति।
तस्मान्निसर्गजडिमा कतमोऽहमत्र
स्तोत्रं तव त्रिपुरतापनपत्नि ! कर्तुम् ॥२॥

मातस्तथापि भवतीं भवतीप्रताप-
विच्छित्तये स्तवमहार्णवकर्णधारः।
स्तोतुं भवानि ! स भवच्चरणारविन्द-
भक्तिग्रहः किमपि मां मुखरीकरोति ॥३॥

सूते जगन्ति भवती भवती बिभर्ति
जागर्ति तत्क्षयकृते भवती भवानि !।
मोहं भिनत्ति भवती भवती रुणद्धि
लीलायितं जयति चित्रमिदं भवत्याः ॥४॥

यस्मिन्मनागपि नवाम्बुजपत्रगौरीं
गौरीं प्रसादमधुरां दृशमादधासि।
तस्मिन्निरन्तरमनङ्गशरावकीर्ण-
सीमन्तिनीनयनसन्ततयः पतन्ति ॥५॥

पृथ्वीभुजोऽप्युदयनप्रभवस्य तस्य
विद्याधरप्रणतिचुम्बितपादपीठः ।
तच्चक्रवर्तिपदवीप्रणयस्स एषः
त्वत्पादपङ्कजरजःकणजः प्रसादः ॥६ ॥

त्वत्पादपङ्कजरज प्रणिपातपूर्वैः
पुण्यैरनल्पमतिभिः कृतिभिः कवीन्द्रैः ।
क्षीरक्षपाकरदुकूलहिमावदातां
कैरप्यवापि भुवनत्रितयेऽपि कीर्तिः ॥७ ॥

कल्पद्रुमप्रसवकल्पितचित्रपूजा-
मुद्दीपितप्रियतमामदरक्तगीतिम् ।
नित्यं भवानि ! भवतीमुपवीणयन्ति
विद्याधराः कनकशैलगुहागृहेषु ॥८ ॥

लक्ष्मीवशीकरणकर्मणि कामिनीनां
आकर्षणव्यतिकरेषु च सिद्धमन्त्रः ।
नीरन्ध्रमोहतिमिरच्छिदुरप्रदीपो
देवि ! त्वदङ्घ्रिजनितो जयति प्रसादः ॥९ ॥

देवि ! त्वदङ्घ्रिनखरत्नभुवो मयूखाः
प्रत्यग्रमौक्तिकरुचो मुदमुद्वहन्ति ।
सेवानतिव्यतिकरे सुरसुन्दरीणां
सीमन्तसीम्निकुसुमस्तबकायितं यैः ॥१० ॥

मूर्ध्नि स्फुरत्तुहिनदीधितिदीप्तिदीप्तं
मध्येललाटममरायुधरश्मिचित्रम् ।
हच्चक्रचुम्बि हुतभुक्कणिकानुकारि
ज्योतिर्यदेतदिदमम्ब ! तव स्वरूपम् ॥११ ॥

रूपं तव स्फुरितचन्द्रमरीचिगौरं
आलोकते शिरसि वागधिदैवतं यः ।
निस्सीमसूक्तिरचनामृतनिर्झरस्य
तस्य प्रसादमधुराः प्रसरन्ति वाचः ॥१२॥

सिन्दूरपांसुपटलच्छुरितामिव द्यां
त्वत्तेजसा जतुरसस्नपितामिवोर्वीम् ।
यः पश्यति क्षणमपि त्रिपुरे विहाय
व्रीडां मृडानि ! सुदृशस्तमनुद्रवन्ति ॥१३॥

मातर्मुहूर्त्तमपि यः स्मरति स्वरूपं
लाक्षारसप्रसरतन्तुनिभं भवत्याः ।
ध्यायन्त्यनन्यमनसस्तमनङ्गतप्ताः
प्रद्युम्नसीम्नि सुभगत्वगुणं तरुण्यः ॥१४॥

योऽयं चकास्ति गगनार्णवरत्नमिन्दुः
योऽयं सुरासुरगुरुः पुरुषः पुराणः ।
यद्भागमर्धमिदमन्धकसूदनस्य
देवि ! त्वमेव तदिति प्रतिपादयन्ति ॥१५॥

इच्छानुरूपमनुरूपगुणप्रकर्ष-
सङ्कर्षिणि ! त्वमभिमृश्य यदा विभर्षि ।
जायेत स त्रिभुवनैकगुरुस्तदानीं
देवश्शिवोऽपि भुवनत्रयसूत्रधारः ॥१६॥

ध्यातासि हेमवति ! येन हिमांशुरश्मि-
मालामलद्युतिरकल्मषमानसेन ।
तस्याविलम्बमनवद्यमनन्तकल्पं
अल्पैर्दिनैस्सृजसि सुन्दरि ! वाग्विलासम् ॥१७॥

आधारमारुतनिरोधवशेन येषां
सिन्दूररञ्जितसरोजगुणानुकारि ।
दीप्तं हृदि स्फुरति देवि वपुस्त्वदीयं
ध्यायन्ति तानिह समीहितसिद्धिसार्थाः ॥१८॥

ये चिन्तयन्त्यरुणमण्डलमध्यवर्ति
रूपं तवाम्ब ! नवयावकपङ्कपिङ्गम् ।
तेषां सदैव कुसुमायुधबाणभिन्न-
वक्षःस्थला मृगदृशो वशगा भवन्ति ॥१९॥

त्वामैन्दवीमिव कलामनुफालदेश-
मुद्भासिताम्बरतलामवलोकयन्तः ।
सद्यो भवानि ! सुधियः कवयो भवन्ति
त्वं भावनाहितधियां कुलकामधेनुः ॥२०॥

शर्वाणि ! सर्वजनवन्दितपादपद्मे !
पद्मच्छदद्युतिविडम्बितनेत्रलक्ष्मि !
निष्पापमूर्तिजनमानसराजहंसि !
हंसि त्वमापदमनेकविधां जनस्य ॥२१॥

उत्तप्तहेमरुचिरे ! त्रिपुरे ! पुनीहि
चेतश्चिरन्तनमघौघवनं लुनीहि ।
कारागृहे निगलबन्धनयन्त्रितस्य
त्वत्संस्मृतौ झटिति मे निगलास्त्रुटन्ति ॥२२॥

त्वां व्यापिनीति सुमना इति कुण्डलीति
त्वां कामिनीति कमलेति कलावतीति ।
त्वां मालिनीति ललितेत्यपराजितेति
देवि ! स्तुवन्ति विजयेति जयेत्युमेति ॥२३॥

उद्दामकामपरमार्थसरोजखण्ड-
चण्डद्युतिद्युतिमपासितषड्विकाराम् ।
मोहद्विपेन्द्रकदनोद्यतबोधसिंह-
लीलागुहां भगवतीं त्रिपुरां नमामि ॥२४॥

गणेशवटुकस्तुता रतिसहायकामान्विता
स्मरारिवरविष्टरा कुसुमबाणबाणैर्युता ।
अनङ्गकुसुमादिभिः परिवृता च सिद्धैस्त्रिभिः
कदम्बवनमध्यगा त्रिपुरसुन्दरी पातु नः ॥२५॥

रुद्राणि ! विद्रुममयीं प्रतिमामिव त्वां
ये चिन्तयन्त्यरुणकान्तिमनन्यरूपाम् ।
तानेत्य पक्ष्मलदृशः प्रसभं भजन्ते
कण्ठावसक्तमृदुबाहुलतांस्तरुण्यः ॥२६॥

त्वद्रूपैकनिरूपणप्रणयिताबन्धो दृशोस्त्वद्गुण-
ग्रामाकर्णनरागिता श्रवणयोस्त्वत्संस्मृतिश्चेतसि ।
त्वत्पादार्चनचातुरी करयुगे त्वत्कीर्तितं वाचि मे
कुत्रापि त्वदुपासनव्यसनिता मे देवि मा शाम्यतु ॥२७॥

त्वद्रूपमुल्लसितदाडिमपुष्परक्त-
मुद्भावयेन्मदनदैवतमक्षरं यः ।
तं रूपहीनमपि मन्मथनिर्विशेषं
आलोकयन्त्युरुनितम्बतटास्तरुण्यः ॥२८॥

ब्रह्मेन्द्ररुद्रहरिचन्द्रसहस्ररश्मि-
स्कन्दद्विपाननहुताशनवन्दितायै ।
वाग्वीश्वरि ! त्रिभुवनेश्वरि ! विश्वमातः !
अन्तर्बहिश्च कृतसंस्थितये नमस्ते ॥२९॥

यः स्तोत्रमेतदनुवासरमीश्वरायाः
श्रेयस्करं पठति वा यदि वा शृणोति ।
तस्येप्सितं फलति राजभिरीड्यतेऽसौ
जायेत स प्रियतमो मदिरेक्षणानाम् ॥३० ॥

॥ इति चर्चास्तवः ॥

अम्बा-स्तवः

[प्रस्तुत स्तव भगवती ललिता महाभट्टारिका पराम्बा की स्तुति है । इसमें माता से प्रार्थना की गई है कि वे निरन्तर भक्त को सान्निध्य प्रदान करें; क्योंकि जब तक आपके पदसरोज भक्त के हृदय में नहीं आ जाते, तब तक हे जगत् की आश्रयभूता ! संसार की बाधाएँ दूर नहीं होतीं ।]

यामामनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं
विद्येति यां श्रुतिरहस्यविदो वदन्ति ।
तामर्धपल्लवितशङ्कररूपमुद्रां
देवीमनन्यशरणश्शरणं प्रपद्ये ॥१ ॥

अम्ब स्तवेषु तव तावदकर्तृकाणि
कुण्ठीभवन्ति वचसामपि गुम्भनानि ।
डिम्भस्य मे स्तुतिरसावसमञ्जसापि
वात्सल्यनिघ्नहृदयां भवतीं धिनोतु ॥२ ॥

व्योमेति बिन्दुरिति नाद इतीन्दुलेखा-
रूपेति वाग्भवतनूरिति मातृकेति ।
निस्स्यन्दमानसुखबोध सुधास्वरूपा
विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम् ॥३ ॥

आविर्भवत्पुलकसन्ततिभिश्शरीरैः
निस्स्यन्दमानसलिलैर्नयनैश्च नित्यम् ।
वाग्भिश्च गद्गदपदाभिरुपासते ये
पादौ तवाम्ब ! भुवनेषु त एव धन्याः ॥४ ॥

वक्त्रं यदुद्यतमभिष्टुतये भवत्याः
तुभ्यं नमो यदपि देवि ! शिरः करोति ।
चेतश्च यत्त्वयि परायणमम्ब ! तानि
कस्यापि कैरपि भवन्ति तपोविशेषैः ॥५ ॥

मूलालबालकुहरादुदिता भवानि !
निर्भिद्य षट्सरसिजानि तटिल्लतेव ।
भूयोऽपि तत्र विशसि ध्रुवमण्डलेन्दु-
र्निस्स्यन्दमानपरमामृततोयरूपा ॥६ ॥

दग्धं यदा मदनमेकमनेकधा ते
मुग्धः कटाक्षविधिरङ्कुरयाञ्चकार ।
धत्ते तदाप्रभृति देवि ललाटनेत्रं
सत्यं ह्रियैव मुकुलीकृतमिन्दुमौलेः ॥७ ॥

अज्ञातसम्भवमनाकलितान्ववायं
भिक्षुं कपालिनमवाससमद्वितीयम् ।
पूर्वं करग्रहणमङ्गलतो भवत्याः
शम्भुं क एव बुबुधे गिरिराजकन्ये ॥८ ॥

चर्माम्बरं च शवभस्मविलेपनं च
भिक्षाटनं च नटनं न परेतभूमौ ।
वेतालसंहतिपरिग्रहता च शम्भोः
शोभां बिभर्ति गिरिजे ! तव साहचर्यात् ॥९ ॥

कल्पोपसंहरणकेलिषु पण्डितानि
चण्डानि खण्डपरशोरपि ताण्डवानि ।
आलोकनेन तव कोमलितानि मातः !
लास्यात्मना परिणमन्ति जगद्विभूत्यै ॥१० ॥

जन्तोरपश्चिमतनोस्सति कर्मसाम्ये
निश्शेषपाशपटलच्छिदुरा निमेषात् ।
कल्याणि ! देशिककटाक्षसमाश्रयेण
कारुण्यतो भवति शम्भववेधदीक्षा ॥११ ॥

मुक्ताविभूषणवती नवविद्रुमाभा
यच्चेतसि स्फुरसि तारकितेव सन्ध्या ।
एकस्स एव भुवनत्रयसुन्दरीणां
कन्दर्पतां व्रजति पञ्चशरीं विनापि ॥१२ ॥

ये भावयन्त्यमृतवाहिभिरंशुजालैः
आप्यायमानभुवनाममृतेश्वरीं त्वाम् ।
ते लङ्घयन्ति ननु मातरलङ्घनीयां
ब्रह्मादिभिस्सुरवरैरपि कालकक्षाम् ॥१३ ॥

यस्स्फाटिकाक्षगुणपुस्तककुण्डिकाढ्यां
व्याख्यासमुद्यतकरां शरदिन्दुशुभ्राम् ।
पद्मासनां च हृदये भवतीमुपास्ते
मातः ! स विश्वकवितार्किकचक्रवर्ती ॥१४ ॥

बर्हावतंसयुतबर्बरकेशपाशां
गुञ्जावलीकृतघनस्तनहारशोभाम् ।
श्यामां प्रवालवदनां सुकुमारहस्तां
त्वामेव नौमि शबरीं शबरस्य जायाम् ॥१५ ॥

अर्धेन किं नवलताललितेन मुग्धे
क्रीतं विभोः परुषमर्धमिदं त्वयेति ।
आलीजनस्य परिहासवचांसि मन्ये
मन्दस्मितेन तव देवि ! जडीभवन्ति ॥१६ ॥

ब्रह्माण्डबुद्बुदकदम्बकसङ्कुलोऽयं
मायोदधिर्विविधतत्त्वतरङ्गमालाः ।
आश्चर्यमम्ब ! झटिति प्रलयं प्रयाति
त्वद्ध्यानसन्ततिमहाबडवामुखाग्नौ ॥१७ ॥

दाक्षायणीति कुटिलेति कुहारिणीति
कात्यायनीति कमलेति कलावतीति ।
एका सती भगवती परमार्थतोऽपि
संदृश्यसे बहुविधा ननु नर्तकीव ॥१८ ॥

आनन्दलक्षणमनाहतनाम्नि देशे
नादात्मना परिणतं तव रूपमीशे ।
प्रत्यङ्मुखेन मनसा परिचीयमानं
शंसन्ति नेत्रसलिलैः पुलकैश्च धन्याः ॥१९ ॥

त्वं चन्द्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रुचिस्त्वं
त्वं चेतनासि पुरुषे पवने बलं त्वम् ।
त्वं स्वादुतासि सलिले शिखिनि त्वमूष्मा
निस्सारमेव निखिलं त्वदृते यदि स्यात् ॥२० ॥

ज्योतींषि यद्दिवि चरन्ति यदन्तरिक्षं
सूते पयांसि यदहिर्धरणीं च धत्ते ।
यद्वाति वायुरनलो यदुदर्चिरास्ते
तत्सर्वमम्ब ! तव केवलमाज्ञयैव ॥२१ ॥

सङ्कोचमिच्छसि यदा गिरिजे ! तदानीं
वाक्तर्कयोस्त्वमसि भूमिरनामरूपा ।
यद्वा विकासमुपयासि यदा तदानीं
त्वन्नामरूपगणनास्सुकरा भवन्ति ॥२२ ॥

भोगाय देवि ! भवतीं कृतिनः प्रणम्य
भ्रूकिङ्करीकृतसरोजगृहास्सहस्रम् ।
चिन्तामणिप्रचयकल्पितकेलिशैले
कल्पद्रुमोपवन एव चिरं रमन्ते ॥२३ ॥

हर्तुं त्वमेव भवसि त्वदधीनमीशे
संसारतापमखिलं दयया पशूनाम् ।
वैकर्तनी किरणसंहतिरेव शक्ता
धर्मं निजं शमयितुं निजयैव वृष्ट्या ॥२४॥

शक्तिश्शरीरमधिदैवतमन्तरात्मा
ज्ञानं क्रिया करणमानसजालमिच्छा ।
ऐश्वर्यमायतनमावरणानि च त्वं
किं तन्न यद्भवसि देवि शशाङ्कमौलेः ॥२५॥

भूमौ निवृत्तिरुदिता पयसि प्रतिष्ठा
विद्याऽनले मरुति शान्तिरतीव कान्तिः ।
व्योम्नीति याः किल कलाः कलयन्ति विश्वं
तासां हि दूरतरमम्ब ! पदं त्वदीयम् ॥२६॥

यावत्पदं पदसरोजयुगं त्वदीयं
नाङ्गीकरोति हृदयेषु जगच्छरण्ये !
तावद्विकल्पजटिलाः कुटिलप्रकाराः
तर्कग्रहास्समयिनां प्रलयं न यान्ति ॥२७॥

निर्देवयानपितृयानविहारमेके
कृत्वा मनः करणमण्डलसार्वभौमम् ।
ध्याने निवेश्य तव कारणपञ्चकस्य
पर्वाणि पार्वति ! नयन्ति निजासनत्वम् ॥२८॥

स्थूलासु मूर्तिषु महीप्रमुखासु मूर्तेः
कस्याश्चनापि तव वैभवमम्ब ! यस्याः ।
पत्या गिरामपि न शक्यत एव वक्तुं
सापि स्तुता किल मयेति तितिक्षितव्यम् ॥२९॥

कालाग्निकोटिरुचिमम्ब षडध्वशुद्धौ
आप्लावनेषु भवतीममृतौघवृष्टिम् ।
श्यामां घनस्तनतटां शकलीकृताघां
ध्यायन्त एव जगतां गुरवो भवन्ति ॥३० ॥

विद्यां परां कतिचिदम्बरमम्ब ! केचिद्
आनन्दमेव कतिचित्कतिचिच्च मायाम् ।
त्वां विश्वमाहुरपरे वयमामनामः
साक्षादपारकरुणां गुरुमूर्तिमेव ॥३१ ॥

कुवलयदलनीलं बर्बरस्निग्धकेशं
पृथुतरकुचभाराक्रान्तकान्तावलग्नम् ।
किमिह बहुभिरुक्तैस्त्वत्स्वरूपं परं नः
सकलजननि ! मातः सन्ततं सन्निधत्ताम् ॥३२ ॥

॥ इत्यम्बास्तवः ॥

■

श्रीललिताम्बिकास्तवः

[उपजाति छन्द में निबद्ध श्रीललिताम्बिका-स्तव अपने नाम को सार्थक करता है । सकलेप्सितप्रदात्री भगवती के चरणवन्दन वाक्यों से युक्त इस स्तोत्र का जो प्रतिदिन प्रसन्नतापूर्वक पाठ करते हैं वे चिरायु, दृढ शरीर, सुन्दर भवन, सती पत्नी, आज्ञाकारी पुत्र तथा समस्त अभिलषित समृद्धि प्राप्त करते हैं ।]

सारोग्यमुख्याशयमालिनीकृद्-
योषालिदुष्टात्मसुदुर्लभाङ्घ्रिकाम् ।
वैराग्यमुख्यामलसद्गुणाली-
प्राप्यस्वपादां ललिताम्बिकां भजे ॥१ ॥

स्वर्गाधिपात्माश्रयभुग्दिनेशभू-
र्निर्ऋत्यमीशान[नि]लमुख्यपूजिताम् ।
जरापमृत्युज्वरमुख्यरुक्ततेः
र्निराकरिष्णुं ललिताम्बिकां भजे ॥२ ॥

गिरा स्वया निर्जरदेशिकं श्रिया
धनाधिपं ह्रीभरितौ प्रकुर्वते ।
यदङ्घ्रिपाथोजसकृत्प्रणामकृ-
द्दरिद्रमूका ललिताम्बिकां भजे ॥३ ॥

धराधरोत्तंसशरीरसम्भवा-
चिदग्निकुण्डोद्भवमूर्त्तिधारिणीम् ।
दीनानतव्रातकृपासुधाम्बुधि-
स्वीयान्तरङ्गां ललिताम्बिकां भजे ॥४ ॥

करीन्द्रवक्त्राश्रयभुग्जनुःसुवं
करीन्द्रवाजिप्रमुखप्रदाचनाम् ।
नम्रव्रजांहोवनदावहव्यवाट्
कटाक्षलेशां ललिताम्बिकां भजे ॥५ ॥

सरीसृपेशानमहाकलेवर-
स्वकीयतल्पानुजनिस्वरूपिणीम् ।
शरीरराजद्रुचिलेशलज्जितो[त-]
सहस्ररश्मिं ललिताम्बिकां भजे ॥६ ॥

लोपादिमुद्राघटजातविग्रह-
मुखर्षिजायापतिवर्यसंस्तुताम् ।
निजाक्षराकारविबोधदानकृन्-
मन्त्राक्षरालीं ललिताम्बिकां भजे ॥७ ॥

सकाममैजाङ्घ्रिविनम्रपङ्क्तये
प्रकाममिष्टव्रजदानतत्पराम् ।
चकासतीं भीषणशस्त्रपूगधृड्-
दोर्दण्डराजीं ललिताम्बिकां भजे ॥८ ॥

अञ्चित्तमिस्रावृतहत्सरोजनु-
र्विकासकार्कायुतभाविभास्वराम् ।
नम्रालिहृद्यात्मरहस्यकाशनो-
द्युक्तौ यदङ्घ्री ललिताम्बिकां भजे ॥९ ॥

धात्रीभुवस्वर्मुखलोकसन्ततौ
सञ्चालितस्वीयनिरङ्कुशेशताम् ।
धात्रीमुखेशीकृतनैजपाद्भवाः
प्रजातभक्तां ललिताम्बिकां भजे ॥१० ॥

भूपालयक्ष्मज्वरकुष्ठमूर्च्छिता-
पस्मारमुख्याखिलरोगहृत्स्मृतिम् ।
भण्डादिचण्डासुरखण्डनस्फुट-
प्रचण्डशक्तिं ललिताम्बिकां भजे ॥११ ॥

अष्टादशस्वीयकरालदोस्तति-
भ्राजत्सुरारिव्रजभीषणायुधाम् ।
विकारशून्याशययोगसन्तति-
ध्याताङ्घ्रिपद्मां ललिताम्बिकां भजे ॥१२ ॥

वचःप्रसूब्रह्मरमारमापति-
स्वकीयकान्तप्रमुखामृताशिभिः ।
पुंनागफुल्लामृतजातमल्लिका-
मुख्यार्चिताङ्घ्रि ललिताम्बिकां भजे ॥१३ ॥

चित्तप्रशान्तीन्द्रियदान्तिमुख्यसद्-
गुणावतंसस्पृशिसक्तचेतसम् ।
संसारनैसर्गिकसर्वखेदहृत्-
स्वापाङ्गपातां ललिताम्बिकां भजे ॥१४ ॥

यमादिनैजाङ्गसमेतयोगदां
यमादिभीतिव्रजमूलकृन्तनीम् ।
पादाब्जनम्रावलिसर्वपातक-
क्षमानिधिं श्रीललिताम्बिकां भजे ॥१५ ॥

सर्वेष्टदाम्बापदवन्दनान्वितं
तत्स्तोत्रमेतत् पठतां मुदा द्रुतम् ।
भवेच्चिरायुस्तनुदार्ढ्यहर्म्यमा-
न्विद्यासतीपुत्रमुखाखिलश्रीः ॥१६ ॥

॥ इति श्रीललिताम्बिकास्तवः ॥

■

श्रीमन्त्रमातृकापुष्पमाला-स्तवः

[यह स्तव अत्यन्त गुह्य पंचदशाक्षरी महामन्त्र के अक्षरपुष्पों को श्लोकाद्य बनाकर माला के रूप में गुम्फित है । इस श्रीमन्त्राक्षर-माला के नित्य प्रातः नियमित पाठकर्ता का मन निर्मल हो जाता है, उसके चित्तरूपी कमल-मण्डप में भगवती नृत्य करती हैं, वाणी में सरस्वती, घर में लक्ष्मी तथा सर्वत्र मंगल होता है ।]

कल्लोलोल्लसितामृताब्धि-लहरी-मध्ये विराजन्मणि-
द्वीपे कल्पक-वाटिका-परिवृते कादम्बवाट्युज्ज्वले ।
रत्नस्तम्भ-सहस्र-निर्मित-सभामध्ये विमानोत्तमे
चिन्तारत्न-विनिर्मितं जननि ते सिंहासनं भावये ॥१ ॥
एणांकानल-भानुमण्डल-लसच्छ्रीचक्र-मध्ये स्थितां
बालार्क-द्युति-भासुरां करतलैः पाशांकुशौ बिभ्रतीम् ।
चापं बाणमपि प्रसन्नवदनां कौसुम्भ-वस्त्रान्वितां
तां त्वां चन्द्रकलावतंस-मुकुटां चारुस्मितां भावये ॥२ ॥
ईशानादिपदं शिवैक-फलकं रत्नासनं ते शुभं
पाद्यं कुंकुम-चन्दनादि-भरितै-रर्घ्यं स-रत्नाक्षतैः ।
शुद्धैराचमनीयकं तव जलैर्भक्त्या मया कल्पितं
कारुण्यामृत-वारिधे तदखिलं सन्तुष्टये कल्पताम् ॥३ ॥
लक्ष्ये योगिजनस्य रक्षितजगज्जाले विशालेक्षणे
प्रालेयाम्बु-पटीर-कुंकुम-लसत्-कर्पूर-मिश्रोदकैः ।
गोक्षीरैरपि नालिकेर-सलिलैः शुद्धोदकैर्मन्त्रितैः
स्नानं देवि धिया मयैतदखिलं सन्तुष्टये कल्पताम् ॥४ ॥
ह्रीङ्काराङ्कित-मन्त्र-लक्षित-तनो हेमाचलात् संचितै
रत्नैरुज्ज्वलमुत्तरीयसहितं कौसुम्भ-वर्णांशुकम् ।
मुक्ता-सन्तति-यज्ञसूत्र-समलं सौवर्ण-तन्तूद्भवं
दत्तं देवि धिया मयैत-दखिलं सन्तुष्टये कल्पताम् ॥५ ॥

हंसैरप्यतिलोभनीयगमने हारावलीमुज्ज्वलां
हिन्दोलद्युतिहीरपूरिततरे हेमाङ्गदे कङ्कणे ।
मंजीरौ मणिकुण्डले मुकुटमप्यर्धेन्दु-चूडामणिं
नासा-मौक्तिकमंगुलीय-कटकौ कांचीमपि स्वीकुरु ॥६ ॥

सर्वांगे घनसार-कुंकुम-घन-श्रीगन्ध-पंकांकितं
कस्तूरी-तिलकं च फालफलके गोरोचनापत्रकम् ।
गण्डादर्शन-मण्डले नयनयोर्दिव्यांजनं तेऽञ्चितं
कण्ठाब्जे मृगनाभिपंकममलं त्वत्प्रीतये कल्पताम् ॥७ ॥

कह्लारोत्पल-मल्लिका-मरुवकैः सौवर्ण-पंकेरुहैः
जाती-चंपक-मालती-वकुलकैर्मन्दार-कुन्दादिभिः ।
केतक्या करवीरकैर्बहुविधैः क्लृप्ताः स्रजो मालिकाः
संकल्पेन समर्पयामि वरदे सन्तुष्टये गृह्यताम् ॥८ ॥

हन्तारं मदनस्य नन्दयसि यैरंगैरनंगोज्ज्वलै-
र्यैर्भृङ्गावलि-नीलकुन्तल-भरैर्बध्नासि तस्याशयम् ।
तानीमानि तवाम्ब कोमलतराण्यामोद-लीलागृहा-
ण्यामोदाय दशांग-गुग्गुलु-घृतैर्धूपैरहं धूपये ॥९ ॥

लक्ष्मीमुज्ज्वलयामि रत्न-निवहोद्भास्वत्तरे मन्दिरे
मालारूप-विलम्बितैर्मणिमय-स्तम्भेषु संभावितैः ।
चित्रैर्हाटक-पुत्रिकाकरधृतैर्गव्यैः-घृतैर्वर्धितै-
र्दिव्यैर्दीपगणैर्धिया गिरिसुते सन्तुष्टये कल्पताम् ॥१० ॥

ह्रींकारेश्वरि तप्तहाटक-कृतैः स्थाली-सहस्रैर्भृतं
दिव्यान्नं घृतसूप-शाक-भरितं चित्रान्नभेदं तथा ।
दुग्धान्नं मधुशर्करा-दधियुतं माणिक्य-पात्रे स्थितं
माषापूप-सहस्रमम्ब सफलं नैवेद्यमावेदये ॥११ ॥

सच्छायैर्वरकेतकीदल-रुचा तांबूलवल्लीदलैः
पूगैर्भूरिगुणैः सुगन्धि-मधुरैः कर्पूरखण्डोज्ज्वलैः ।
मुक्ताचूर्ण-विराजितैर्बहुविधैर्वक्त्रांबुजामोदितैः
पूर्णा रत्नकलाचिका तव मुदे न्यस्ता पुरस्तादुमे ॥१२ ॥

कन्याभिः कमनीय-कान्तिभिरलंकारामलारात्रिका-
पात्रे मौक्तिक-चित्र-पङ्क्ति-विलसत्-कर्पूरदीपालिभिः ।
तत्तत्-ताल-मृदंग-गीत-सहितं नृत्यत्-पदांभोरुहं
मन्त्राराधन-पूर्वकं सुनिहितं नीराजनं गृह्यताम् ॥१३ ॥

लक्ष्मीर्मौक्तिक-लक्ष-कल्पित-सितच्छत्रं तु धत्ते रसात्
इन्द्राणी च रतिश्च चामरवरे धत्ते स्वयं भारती ।
वीणा-मेण-विलोचनाः सुमनसां नृत्यन्ति तद्रागवद्-
भावैरांगिक-सात्त्विकैः स्फुटरसं मातस्तदालोक्यताम् ॥१४ ॥

ह्रींकार-त्रयसंपुटेन मनुनोपास्ये त्रयीमौलिभि
र्वाक्यैर्लक्ष्यतनो तव स्तुतिविधौ को वा क्षमेतांबिके ।
सल्लापाः स्तुतयः प्रदक्षिण-शतं संचार एवास्तु ते
संवेशो मनसः समाधिरखिलं त्वत्प्रीतये कल्पताम् ॥१५ ॥

श्रीमन्त्राक्षर-मालया गिरिसुतां यः पूजयेच्चेतसा
सन्ध्यासु प्रतिवासरं सुनियतस्तस्यामलं स्यान्मनः ।
चित्तांभोरुह-मण्डपे गिरिसुता नृत्तं विधत्ते रसा-
द्वाणी वक्त्रसरोरुहे जलधिजा गेहे जगन्मंगला ॥१६ ॥

इति गिरिवरपुत्रीपादराजीवभूषा
भुवनममलयन्ती सूक्ति-सौरभ्य-सारैः ।
शिवपद-मकरन्द-स्यन्दिनीयं निबद्धा
मदयतु कविभृंगान् मातृका-पुष्पमाला ॥१७ ॥

॥ इति श्रीमन्त्रमातृका-पुष्पमालास्तवः समाप्तः ॥

■

श्रीललितेन्दुशेखरस्तवः

[रुचिरा वृत्त में रचित प्रस्तुत स्तव गोवर्धन पीठ, पुरी के पूर्व शंकराचार्य स्वामी श्री भारतीकृष्ण तीर्थ जी महाराज की रचना है । इसमें उन्होंने बालचन्द्रमा को मस्तक पर धारण करने वाले भगवान् इन्दुशेखर महेश्वर तथा श्रीचक्रनगर-साम्राज्ञी कामेश्वराङ्कनिलया भगवती ललिता की स्तुति की है । इसके नित्यपाठ, श्रवण तथा स्मरण से अभीष्ट सिद्धि होती है ।]

भजत्सुरक्षितिजनुषौ भवापहौ
भुजङ्गमच्छविचिकुरौ वरप्रदौ ।
तिरस्कृताम्बुजचरणौ महेश्वरौ
भजेऽनिशं हृदि ललितेन्दुशेखरौ ॥१ ॥

शरद्घनच्छविवसनौ समस्तदौ
सुरावलीनुतचरणौ मनोहरौ ।
पया[योा] ब्धिजाधवसहजन्मभावकौ
भजेऽनिशं हृदि ललितेन्दुशेखरौ ॥२ ॥

कृतान्तभीशमनकृतौ कृपाम्बुधी
सुराङ्गनावितातिनुतौ मुनीडितौ ।
कलानिधिद्युतिवपुषौ कलेड्धरौ
भजेऽनिशं हृदि ललितेन्दुशेखरौ ॥३ ॥

पदानतेप्सितवरदौ भवान्तकौ
घनच्छविस्वकचभरौ नताघहौ ।
निजानतप्रियविनताजवाडवौ
भजेऽनिशं हृदि ललितेन्दुशेखरौ ॥४ ॥

पराकृताम्बुभवकरौ नयालिदौ
शशाङ्कधृन्निजशिरसावनिष्टहौ ।
अभीष्टदस्तुतिपठनस्मृतादिकौ
भजेऽनिशं हृदि ललितेन्दुशेखरौ ॥५ ॥

॥ इति श्रीललितेन्दुशेखरस्तवः ॥

श्रीत्रिपुरास्तवराजः

श्रीनाथादिगुरुत्रयं गणपतिं पीठत्रयं भैरवं
सिद्धौघं बटुकत्रयं पदयुगं दूतीक्रमं मण्डलम् ।
वीरान्द्व्यष्टचतुष्कषष्टिनवकं वीरावलीपञ्चकं
श्रीमन्मालिनिमन्त्रराजसहितं वन्दे गुरोर्मण्डलम् ॥१ ॥

सेवे सिन्दूरसंदोहसुन्दरस्वाङ्गभासुराम् ।
करुणापूरपीयूषकटाक्षां कुलनायिकाम् ॥२ ॥

द्विनेत्रं द्विभुजं शान्तं गुरुं पद्मासनस्थितम् ।
योगपीठे समासीनं नमामि शिरसि स्थितम् ॥३ ॥

नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षशिवरूपिणम् ।
शिरसा योगपीठस्थं मुक्तिकामार्थसिद्धये ॥४ ॥

या नित्या परमा शक्तिर्जगच्चैतन्यरूपिणी ।
तां नमामि महादेवीं पञ्चमीं मातृरूपिणीम् ॥५ ॥

यस्याः सर्वं समुत्पन्नं यस्यामद्यापि तिष्ठति ।
लयमेष्यति यस्यां तां पञ्चमीं प्रणमाम्यहम् ॥६ ॥

श्रीमत्कल्पतरोर्मूले भवान्या रत्नमन्दिरे ।
रत्नसिंहासने देव्याः श्रीचक्रं प्रणमाम्यहम् ॥७ ॥

भूगृहं गुणरेखाढ्यं वेदद्वारोपशोभितम् ।
त्रिवृत्तं षोडशदलं तथाष्टदलकर्णिकम् ॥८ ॥

मनुकोणं द्विदिक्कोणं वसुकोणं त्रिकोणकम् ।
मध्ये बिन्दुमहाचक्रं नित्यं श्रीत्रिपुरामयम् ॥९ ॥

ब्रह्माण्डाधारशक्तिश्च कलास्मरपुरन्दराः ।
एताः संयोज्य पुरत ईश्वरीं योजयेच्छिवे ॥१० ॥

चन्द्रबीजं बिन्दुसंस्थं शिवबीजं नियोजयेत् ।
मादनं शक्रबीजस्थं योजयेद्भुवनेश्वरीम् ॥११ ॥

शिवबीजं मादनस्थं शक्रषष्टिसमन्वितम् ।
सप्तमं तच्च शक्ररस्थं मायाबीजं समुद्धरेत् ॥१२ ॥

तुङ्गाक्षरं शिवादिस्थं मरुदिन्द्रसमन्वितम् ।
धरन्धरसुताबीजमेकत्रापि नियोजयेत् ॥१३ ॥

बगलातुरीयबीजाद्यः षोडशं च नियोजयेत् ।
वाक्स्थं तुरीयकं बीजं शाक्रबीजं नियोजयेत् ॥१४ ॥

पिनाकेशं चन्द्रसंस्थमाकाशं रससंस्थितम् ।
चतुर्थस्वरसंयुक्तं नादबिन्दुसमन्वितम् ॥१५ ॥

सर्वमेकत्र संयोज्य पञ्चपञ्चाक्षरी भवेत् ।
पञ्चकूटात्मिका विद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥१६ ॥

विद्याचूडामणिर्देवी प्रोक्ता सर्वोत्तमोत्तमा ।
तव स्नेहान्मयाख्याता नाख्येया यस्य कस्यचित् ॥१७ ॥

इन्द्रो मां रक्षयेत्प्राच्यामाग्नेय्यामग्निदेवता ।
याम्ये यमः सदा पातु नैर्ऋते निर्ऋतिश्च माम् ॥१८ ॥

पश्चिमे वरुणः पातु वायव्ये वायुदेवता ।
धनदश्चोत्तरे पातु ऐशान्यामीश्वरोऽवतु ॥१९ ॥

ऊर्ध्वं प्रजापतिः पायादधश्चानन्तदेवता ।
एवं दश दिशो रक्षां कुर्वन्त्वाशाधिदेवताः ॥२० ॥

गणेशः सर्वदा पातु क्षेत्रेशो रक्षयेत्सदा ।
द्वारश्रीः सर्वदा पातु देहली पातु सर्वदा ॥२१ ॥

गणनाथः सदा पातु दुर्गा मां परिरक्षतु ।
बटुको भैरवश्चान्ते क्षेत्रपालोऽभिरक्षतु ॥२२ ॥

सह रत्या स्वपत्न्या च कामदेवश्च सर्वदा ।
प्रीत्या सह वसन्तोऽपि पातु मां नन्दने वने ॥२३ ॥

चक्रस्य पश्चिमद्वारे भवान्या रत्नमन्दिरे ।
शङ्खपद्मनिधी रक्षां कुरुतां कामसिद्धये ॥२४ ॥

पातु मां रत्नसोपानं परमैश्वर्यशोभितम् ।
रक्षयेत्पश्चिमद्वारे भवान्या रत्नमन्दिरे ॥२५ ॥

सरस्वती महालक्ष्मीर्माया दुर्गा विभूतये ।
भद्रकाली तथा स्वस्ती स्वाहा चैव शुभंकरी ॥२६ ॥

गौरी च लोकधारी च वागीश्वर्यादयो मम ।
एताश्चात्र स्थिताः सर्वा रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥२७ ॥

पाषण्डाचारिणो भूता भूमौ ये चान्तरिक्षगाः ।
दिविलोके स्थिता ये च ते गच्छन्तु शिवाज्ञया ॥२८ ॥

वास्तूनामधिपो ब्रह्मा स्रष्टा रक्षतु सर्वदा ।
कुलनाथः सदा पातु द्वीपनाथोऽपि सर्वदा ।
शिवं कुर्वन्तु ताः सर्वा आसने पञ्चदेवताः ॥२९ ॥

पृथ्वि त्वया धृता लोका देवित्वां विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥३० ॥

चक्रस्य दक्षिणे भागे श्रीमत्पात्रस्य मण्डले ।
पञ्चरत्नानि मे पान्तु पूजकानां च सिद्धये ॥३१ ॥

तत्र पात्रासने पुण्ये सर्वदा वह्निमण्डले ।
वह्नेश्च मण्डलं पातु कुलदेव्याश्च पूजने ॥३२ ॥

धूम्रार्चिरूष्मा ज्वलिनी ज्वालिनी विस्फुलिङ्गिनी ।
सुश्रीः सुरूपा कपिला हव्यकव्यवहे दश ॥३३ ॥

वह्नेर्दशकला ज्ञेयाः सर्वधर्मफलप्रदाः ।
एताभिः सहितो रक्षां कुर्याद्वैश्वानरो मम ॥३४ ॥

तत्र पात्रवरे दिव्ये श्रीमदादित्यमण्डले ।
सूर्यस्य मण्डलं पातु मम सर्वार्थसिद्धये ॥३५ ॥

तपिनी तापिनी धूम्रा मरीचिर्ज्वालिनी रुचिः ।
सुषुम्ना भोगदा विश्वा बोधिनी धारिणी क्षमा ॥३६ ॥
कभाद्यर्णयुता भानोष्ठडान्ता द्वादशेरिताः ।
एताः कलास्तु सूर्यस्य सूर्यमण्डलसंस्थिताः ।
एताभिः सहितो रक्षामादित्यः प्रकरोतु मे ॥३७ ॥
तत्र पात्रामृते दिव्ये सोमस्यामृतमण्डले ।
अमृतं सर्वदा पातु भैरवानन्दहेतुकम् ॥३८ ॥
अमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टी रतिर्धृतिः ।
शशिनी चन्द्रिकाकान्तिर्ज्योत्स्ना श्रीः प्रीतिरङ्गदा ॥३९ ॥
पूर्णा पूर्णामृता कामदायिन्यः स्वरजाः कलाः ।
सोममण्डलमध्यस्था रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥४० ॥
रविवेदकलापूर्णे सुधासंपूर्णमण्डले ।
नक्षत्राधिपती रक्षां करोतु मम भूतये ॥४१ ॥
सूर्याग्निमण्डले दिव्ये संपूर्णे शशिमण्डले ।
पातु मां खेचरीबीजं दोषैकादशनाशकृत् ॥४२ ॥
शक्तियुक्ते सुरानन्दे भैरवाद्यैः सशक्तिभिः ।
आनन्दभैरवो रक्षां करोतु मम सर्वदा ॥४३ ॥
तत्र पूर्णामृते पुण्ये शक्तिर्या वारुणी कला ।
आनन्दरूपिणी रक्षां करोतु मम सर्वदा ॥४४ ॥
सृष्टिर्बुद्धिः स्मृतिर्मेधा कान्तिर्लक्ष्मीर्द्युतिः स्थिरा ।
स्थितिः सिद्धिरिति ख्याताः कचवर्गकला दश ॥४५ ॥
अकाराद् ब्रह्मणोत्पन्नाः सृष्टिकर्मणि तत्पराः ।
एताभिः सहितः पायाद्ब्रह्मा मां वाक्प्रदः सदा ॥४६ ॥
जरा च पालिनी शान्तिरीश्वरी रतिकामिके ।
वरदा ह्लादिनी प्रीतिर्दीर्घा च टतवर्गगाः ॥४७ ॥

उकाराद्विष्णुसंभूताः स्थितिकर्मणि तत्पराः ।
एताभिः सहितः पायान्मां विष्णुः पुष्टिदायकः ॥४८ ॥

तीक्ष्णा रौद्री भया निद्रा तन्द्री क्षुत् क्रोधिनीक्रिया ।
उन्नारा मृत्युरूपा च पयवर्गकला दश ॥४९ ॥

मकाराद्रुद्रसंभूताः संहारनिरताः सदा ।
एताभिः सहितो रुद्रो मां पायान्मृत्युनाशकः ॥५० ॥

तिरस्करिण्यः पशुहृत्पञ्चेन्द्रियविमोहना ।
अनन्तान्तास्तु ताः पञ्च पीता श्वेतारुणासिता ॥५१ ॥

बिन्दोरीश्वरसंभूताः पलवर्गकलास्तथा ।
तिरोधानपराभिर्मां पायादेताभिरीश्वरः ॥५२ ॥

निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्याशान्तिस्तथैव च ।
इन्धिका दीपिका चेति रोचिका मोचिका परा ॥५३ ॥

सूक्ष्मा सूक्ष्मामृता क्षानामृता आप्यायिनी तथा ।
व्यापिनी व्योमरूपा च अनन्ता चेति षोडश ॥५४ ॥

एताः स्वरकलानादात्सदाशिवसमुद्भवाः ॥५५ ॥

अनुग्रहप्रदा नित्यं सर्वसिद्धिप्रदायिकाः ।
एताभिः सहितः पायात्सदापूर्वः शिवस्तु माम् ॥५६ ॥

मातृका पातु मां नित्यं सर्वमन्त्रस्वरूपिणी ।
अखण्डैकरसानन्दकरी मां पातु सर्वदा ॥५७ ॥

अमृतेशी सदा पातु दापिनी पातु सर्वदा ।
मूलविद्या च मां पातु श्रीम त्रिपुरसुन्दरी ॥
कामेश्वर्यादिभिर्युक्ता नित्याभिः पातुः मां सदा ॥५८ ॥

सर्वाधोमण्डुकाकारे रुद्रः कालानलो विभुः ॥५९ ॥

रक्षां करोतु मे नित्यं या मूलप्रकृतिः सदा ।
तत्क्षाधारशक्तिर्या मम रक्षां करोतु सा ॥६० ॥

कूर्मस्तु सततं पायादनन्तो रक्षयेत्सदा ।
तस्य मूर्ध्नि स्थितः श्वेतवराहः परिरक्षतु ॥६१ ॥
दन्ते तस्य स्थिता पृथ्वी पातु नित्यं वसुन्धरा ।
समुद्रः सर्वदा पातु सुरत्नैरमृतैर्जलैः ॥६२ ॥
रत्नदीपं च मे रक्षां करोतु स्वर्णपर्वतः ।
पातु मां नन्दनोद्यानं पान्तु मां कल्पभूरुहः ॥६३ ॥
अधस्तेषां सदा पातु विचित्रा रत्नभूमिका ।
वालुकाः पञ्च मां पान्तु पान्तु देवमहीरुहः ॥६४ ॥
नवरत्नमयास्तत्र प्राकाराः पान्तु मां नव ।
श्रीरत्नमन्दिरं दिव्यं चिन्तामणिविभूषितम् ॥६५ ॥
तत्र पद्मे महादिव्ये प्रभामण्डलवेदिका ।
श्वेतच्छत्रं सदा पातु रत्नमुक्तामणिप्रभम् ॥६६ ॥
प्रभामध्यस्थितं पातु रत्नसिंहासनं च माम् ।
सिंहासनस्य पार्श्वस्थं धर्मं ज्ञानं च रक्षतु ॥६७ ॥
वैराग्यं रक्षयेन्नित्यमैश्वर्यं रक्षयेत्सदा ।
अधर्मो रक्षयेन्नित्यमज्ञानं परिरक्षतु ॥६८ ॥
अवैराग्यं तु मां पायादनैश्वर्यं तु सर्वदा ।
सिंहासनस्य मध्यस्था दुर्गा मां परिरक्षतु ॥६९ ॥
माया मां पातु तत्रैव विद्या मां परिरक्षतु ।
श्रीविद्या शुद्धविद्या च मातङ्गी भुवनेश्वरी ॥७० ॥
वाराही च समाख्याताः पञ्चविद्याश्च पान्तु माम् ।
अन्तो रक्षयेन्नित्यं फणपञ्चदशान्वितः ॥७१ ॥
तन्मध्यफणमध्यस्थं महापद्मं च रक्षतु ।
पातु चानन्दकन्दं मां ज्ञाननालं च सर्वदा ॥७२ ॥
दला प्रकृतिरूपा मां प्रकृत्याकारकेसरैः ।
पातु मां पातु नित्यं सा तत्त्वरूपा च कर्णिका ॥७३ ॥

सूर्यस्य मण्डलं पातु पातु मां सोममण्डलम् ।
वह्नेश्च मण्डलं पातु सत्त्वं रक्षतु सर्वदा ॥
रजश्च पातु मां नित्यं पातु नित्यं तमोगुणः ॥७४ ॥
आत्मा चैवान्तरात्मा च परमात्मा च रक्षतु ।
ज्ञानात्मा च तथा रक्षां करोतु मम सर्वदा ॥७५ ॥
आत्मतत्त्वं शक्तितत्त्वं विद्यातत्त्वं तथैव च ।
सदाशिवस्य यत्तत्त्वं तत्सर्वं पातु मां सदा ॥७६ ॥
ज्ञानं माया कलाविद्या तत्त्वात्मानो विभूतयः ।
रत्नसिंहासने देव्या रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥७७ ॥
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।
एते पञ्च महाप्रेता रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥७८ ॥
सुधार्णवासनं पातु पातु पोताम्बुजासनम् ।
देव्यासनं सदा पातु पातु चक्रासनं च माम् ॥७९ ॥
सर्वमन्त्रासनं पातु साध्यसिद्धासनं तथा ।
नवयोन्यासनं पातु सर्वदा मम रक्षणम् ॥८० ॥
करोतु कुलसुन्दर्याः कामरूपं शिवासनम् ।
तत्रैव संस्थिता देव्यो रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥८१ ॥
त्रिपुरा त्रिपुरेशी च त्रिपुराद्या च सुन्दरी ।
त्रिपुरवासिनी पश्चात् त्रिपुराश्रीश्च मालिनी ॥८२ ॥
सिद्धाम्बा भैरवीत्येतास्त्रिपुराद्याश्च पान्तु माम् ।
गुरवो दिव्यसिद्धौघमानवौघास्त्रिधा स्थिताः ॥८३ ॥
मुनिवेदनागसंख्या रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ।
समस्तप्रकटा गुप्तावस्था गुप्ततराश्च याः ॥८४ ॥
संप्रदायाः कुलोत्तीर्णा निगर्भाश्च रहस्यकाः ।
तथैवातिरहस्याश्च परापररहस्यकाः ॥८५ ॥

नवधा पूजनं तत्र योगिनीनां विधीयते ।
एतास्तु सततं रक्षां कुर्वतां योगिनीगणाः ॥८६ ॥
त्रैलोक्यमोहनं चक्रं प्रथमं परिरक्षतु ।
अणिमा पश्चिमे पातु लघिमा चोत्तरे तथा ॥८७ ॥
पूर्वद्वारे च महिमा ईशिता पातु दक्षिणे ।
वशिता मारुते पातु प्राकाम्या त्वीशके तथा ॥८८ ॥
भुक्तिसिद्धिस्तथाग्नेय्यामिच्छा रक्षतु नैर्ऋते ।
अधः पातु सदा प्राप्तिः सर्वकामप्रदायिनी ॥८९ ॥
सर्वकामा सदा पातु ऊर्ध्वे चोर्ध्वनिवासिनी ।
एताः प्रथमरेखायां सर्वाः प्रकटपूरिताः ॥९० ॥
भैरवश्चासिताङ्गो यः कामरूपस्य पीठके ।
ब्रह्माणीसहितः पूर्वे द्वारे मां परिरक्षतु ॥९१ ॥
मलये चाग्निदिग्भागे संस्थितो रुरुभैरवः ।
माहेशीसहितः पातु कुलाचारस्य सिद्धये ॥९२ ॥
चण्डः कोलगिरौ रक्षां कौमारीसहितो यमे ।
करोतु भैरवो नित्यं पूजकानां च सिद्धये ॥९३ ॥
वैष्णवीसहितः क्रोधः कुलान्ते पीठराजके ।
नैर्ऋते सर्वदा पातु भोगमोक्षार्थसिद्धये ॥९४ ॥
चौहार्ये पश्चिमे पीठे वाराहीसहितः सदा ।
उन्मत्तभैरवो रक्षां करोतु मम सिद्धये ॥९५ ॥
जालन्धरे महापीठे कपालीभैरवः सदा ।
इन्द्राणीसहितो रक्षां वायव्ये प्रकरोतु मे ॥९६ ॥
ओड्याणे चोत्तरे पीठे चामुण्डासहितः सदा ।
भीषणो भैरवः पातु साधकानां च सिद्धये ॥९७ ॥

संहारश्चण्डिकायुक्तो देवीकोष्ठे च पीठके ।
ऐशान्यां रक्षयेन्नित्यं कुलाचारस्य सिद्धये ॥९८ ॥
एते द्वितीयरेखायां संस्थिताश्चतुरस्रगाः ।
सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा पश्चिमे पातु सर्वदा ॥९९ ॥
द्राविणी चोत्तरे पातु पूर्वे चाकर्षणी सदा ।
याम्ये वश्या सदा पातु उन्मादा मारुते सदा ॥१०० ॥
ईशे महाङ्कुशा पातु त्रिखण्डा पातु चानले ।
नैर्ऋते बीजमुद्रा च ऊर्ध्वे रक्षतु खेचरी ॥१०१ ॥
महामुद्रा त्वधः पातु योगिनी योनिरूपिणी ।
सुसिद्धयो मुद्रिकाश्च भैरवाः सह मातृभिः ॥१०२ ॥
एताश्चक्रस्थिता नित्यं सर्वकामफलप्रदाः ।
चतुरस्रे त्रिरेखासु रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥१०३ ॥
सर्वाशापूरकं चक्रं द्वितीयं परिरक्षतु ।
कामाकर्षणरूपा च बुद्ध्याकर्षणरूपिणी ॥१०४ ॥
अहंकाराकर्षणी च शब्दाकर्षणरूपिणी ।
स्पर्शाकर्षणरूपा च रूपाकर्षणरूपिणी ॥१०५ ॥
रसाकर्षणरूपा च गन्धाकर्षणरूपिणी ।
चित्ताकर्षणरूपा च धैर्याकर्षणरूपिणी ॥१०६ ॥
स्मृत्याकर्षणरूपा च नामाकर्षणरूपिणी ।
बीजाकर्षणरूपा च आत्माकर्षणरूपिणी ॥१०७ ॥
अमृताकर्षणी देवी शरीराकर्षणी तथा ।
एताश्चक्रस्थिता नित्यं स्वरार्णा षोडशे दले ॥१०८ ॥
सर्वाभीष्टप्रदा देव्यो रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ।
सर्वसंक्षोभणं चक्रं तृतीयं परिरक्षतु ॥१०९ ॥

अनङ्गकुसुमा पूर्वे दक्षिणेऽनङ्गमेखला ।
पश्चिमेऽनङ्गमदना उत्तरे मदनातुरा ॥११० ॥
अनङ्गरेखा चाग्नेय्यां नैर्ऋतेऽनङ्गवेगिनी ।
वातेऽनङ्गाङ्कुशा चैव ईशे चानङ्गमालिनी ॥१११ ॥
कवर्गाद्यष्टवर्गस्था अष्टौ चानङ्गशक्तयः ।
रक्षां कुर्वन्तु ताः सर्वा देव्याश्चाष्टदले स्थिताः ॥११२ ॥
सर्वासौभाग्यदं चक्रं चतुर्थं परिरक्षतु ।
सर्वसंक्षोभिणी शक्तिः सर्वविद्राविणी तथा ॥११३ ॥
सर्वाकर्षणशक्तिश्च सर्वाह्लादस्वरूपिणी ।
सर्वसमम्मोहिनी शक्तिः सर्वस्तम्भनरूपिणी ॥११४ ॥
सर्वजृम्भणशक्तिश्च सर्वतोवश्यरूपिणी ।
सर्वरञ्जनशक्तिश्च सर्वोन्मादस्वरूपिणी ॥११५ ॥
सर्वार्थसाधिनी शक्तिः सर्वसंपत्तिपूरणी ।
सर्वमन्त्रमयी शक्तिः सर्वद्वन्द्वक्षयंकरी ॥११६ ॥
चतुर्दशारचक्रस्था रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ।
सर्वार्थसाधकं चक्रं पञ्चमं परिरक्षतु ॥११७ ॥
सर्वसिद्धिप्रदा देवी सर्वसंपत्प्रदायिनी ।
सर्वप्रियंकरी शक्तिः सर्वमङ्गलकारिणी ॥११८ ॥
सर्वकामप्रदा देवी सर्वदुःखविमोचिनी ।
सर्वमृत्युप्रशमनी सर्वविघ्ननिवारिणी ॥११९ ॥
सर्वाङ्गसुन्दरी देवी सर्वसौभाग्यदायिनी ।
बहिर्दशारचक्रस्था रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥१२० ॥
सर्वरक्षाकरं चक्रं षष्ठं रक्षतु सर्वदा ।
सर्वज्ञा सर्वशक्तिश्च सर्वैश्वर्यफलप्रदा ॥१२१ ॥

सर्वज्ञानमयी देवी सर्वव्याधिविनाशिनी ।
सर्वाधारस्वरुपा च सर्वपापहरा तथा ॥१२२ ॥
सर्वानन्दमयी देवी सर्वरक्षास्वरूपिणी ।
तथैव हि महादेवी सर्वेप्सितफलप्रदा ॥१२३ ॥
अन्तर्दशारचक्रस्था रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ।
सर्वरोगहरं चक्रं सप्तमं परिरक्षतु ॥१२४ ॥
वाग्देवी वशिनी पातु पातु कामेश्वरी च माम् ।
मोदिनी विमला पातु अरुणा जयिनी च माम् ॥१२५ ॥
सर्वेश्वरी च मे रक्षां कुरुतां कौलिनी तथा ।
वाग्देव्यो वरदाः सन्तु सर्वास्तुष्यन्तु पूजिताः ॥१२६ ॥
अष्टकोणान्तरे वाण्यो रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ।
सर्वसिद्धिप्रदं चक्रमष्टमं परिरक्षतु ॥१२७ ॥
अष्टकोणान्तरस्थाने त्रिकोणे बहिरायुधाः ।
श्रीमत्पाशाङ्कुशधनुर्बाणाश्चायुधदेवताः ॥१२८ ॥
षडङ्गदेवताः पान्तु अङ्गस्थाश्चाङ्गदेवताः ।
महादेव्याश्चक्रसंस्था रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥१२९ ॥
श्रीमत्त्रिकोणमध्ये तु तत्र कोणत्रयेषु च ।
मध्ये च सर्वदा पान्तु चतस्रः पीठदेवताः ॥१३० ॥
कामे कामेश्वरी पातु पूर्णे वज्रेश्वरी तथा ।
जालन्धरे महापीठे पातु मां भगमालिनी ॥१३१ ॥
ओड्याणके महापीठे महात्रिपुरसुन्दरी ।
सर्वानन्दमयं चक्रं नवमं परिरक्षतु ॥१३२ ॥
सूर्येन्दुवह्निपीठे तु बिन्दुचक्रनिवासिनी ।
ब्रह्मस्वरूपिणी पातु श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥१३३ ॥

योनिमध्ये तु परितो नित्याषोडशशक्तयः ।
देव्याः श्रीचक्रमध्यस्था रक्षां कुर्वन्तु सर्वदा ॥१३४॥

त्रैलोक्यमोहने चक्रे चतुरस्रे सुशोभने ।
पातु मामनिशं देवी त्रिपुरा परमेश्वरी ॥१३५॥

सर्वाशापूरके चक्रे षोडशारे मनोहरे ।
तत्र चक्रेश्वरी नित्यं पातु मां त्रिपुरेश्वरी ॥१३६॥

तथाष्टदलचक्रे तु सर्वसंक्षोभकारके ।
तत्र चक्रेश्वरी नित्यं पायात्त्रिपुरसुन्दरी ॥१३७॥

चतुर्दशारचक्रे तु शुभे सौभाग्यदायके ।
तत्र चक्रेश्वरी नित्यं पायात्त्रिपुरवासिनी ॥१३८॥

सर्वार्थसाधके बाह्ये दशारे चक्रराजके ।
त्रिपुराश्रीः सदा पातु मम कल्याणहेतवे ॥१३९॥

अन्तर्दशारचक्रे तु सर्वरक्षाकरे परे ।
नित्यं चक्रेश्वरी देवी पायात्त्रिपुरमालिनी ॥१४०॥

अथाष्टकोणचक्रे तु सर्वरोगहरे परे ।
पातु मां त्रिपुरा सिद्धा देवी चक्रेश्वरी सदा ॥१४१॥

सर्वसिद्धिप्रदे चक्रे गुणकोणे मनोहरे ।
चक्रेश्वरी च मे रक्षां करोतु त्रिपुराम्बिका ॥१४२॥

सर्वानन्दमये चक्रे मध्ये बिन्दौ सुशोभने ।
महाचक्रेश्वरी पातु श्रीमत्त्रिपुरभैरवी ॥१४३॥

नित्या कामेश्वरी पातु पातु मां भगमालिनी ।
नित्यक्लिन्ना च मां पातु भेरुण्डा पातु सर्वदा ॥१४४॥

मां वह्निवासिनी पातु महावज्रेश्वरी तथा ।
पातु मां शिवदूती च त्वरिता रक्षयेत्सदा ॥१४५॥

कुलसुन्दरी मां पातु नित्यानित्या च पातु माम् ।
नित्या नीलपताका च विजया पातु सर्वदा ॥१४६॥
श्रीसर्वमङ्गला पातु नित्या ज्वालांशुमालिनी ।
विचित्रा सर्वदा पातु षोडशी पातु सुन्दरी ॥१४७॥
षोडशी प्रथमा नित्या त्रिपञ्चतिथिगामिनी ।
अनुलोमविलोमेन श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥१४८॥
महाविद्या तुरीया तु पातु मां बहुरूपिणी ।
महासप्तदशी नित्या नित्यमानन्दरूपिणी ॥१४९॥
पूर्वं दक्षिणपश्चाच्च उत्तरोर्ध्वमनुत्तमम् ।
बौद्धवैदिकशैवाश्च सौरवैष्णवशाक्तकाः ॥१५०॥
सृष्टिस्थितिलयाख्यानां वासो रक्षतु सर्वदा ।
चतस्रः समयादेव्यो योगिन्यः पान्तु सर्वदा ॥१५१॥
चतुरस्रे महाचक्रे तारा मां परिरक्षतु ।
डाकिनी राकिणी पातु कालिनी काकिनी तथा ॥
साकिनी हाकिनी पातु याकिनी सर्वरूपिणी ॥१५२॥
वर्णस्था मातृकाः सर्वा देहस्था मातृकाश्च याः ।
रक्षां कुर्वन्तु ताः सर्वाश्चक्रराजे तु पूजिताः ॥१५३॥
श्रीचक्रे पूजिता या याः पूजिता या न पूजिताः ।
सर्वास्ताः पूजिताः सन्तु श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥१५४॥
चतुरस्रे महाचक्रे बुद्धो मां परिरक्षतु ।
पातु मामनिशं देवः षोडशारे प्रजापतिः ॥१५५॥
तथाष्टदलचक्रे तु शिवो मां परिरक्षतु ।
चतुर्दशारचक्रे तु भास्करो रक्षयेत्सदा ॥१५६॥
द्विदशारे तथा पातु प्रभुर्नारायणो हरिः ।
अष्टारे मध्यचक्रे तु पातु मां भुवनेश्वरी ॥१५७॥

अष्टारान्तस्त्रिकोणे तु कालिका पातु सर्वदा ।
त्रिकोणान्तरचक्रे तु पातु कात्यायनी च माम् ॥१५८ ॥

नवचक्रेश्वरी नित्या या नित्या परमा कला ।
पातु मामनिशं देवी श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥१५९ ॥

महात्रिपुरसुन्दर्याश्चिन्तनीया च या परा ।
ब्रह्मस्वरूपिणी पातु पञ्चमी परदेवता ॥१६० ॥

पञ्चमी पातु सततं नित्यं रक्षतु पञ्चमी ।
शान्तिं करोतु सा नित्या पञ्चमी परदेवता ॥१६१ ॥

सा पुनः पञ्चमी शक्तिर्नित्यचैतन्यरूपिणी ।
कारणानन्दमध्यस्था पातु मां पञ्चमी सदा ॥१६२ ॥

पञ्चतत्त्वं तथा पञ्च यत्किञ्चित् पञ्चमं स्मृतम् ।
नित्यं पञ्चगुणैः पातु पञ्चमी परदेवता ॥१६३ ॥

पञ्चपञ्चाक्षरैर्मन्त्रैः पञ्चकूटैश्च पञ्चभिः ।
पञ्चमी पातु सततं नित्यं रक्षतु पञ्चमी ॥१६४ ॥

श्रीविद्या च तथा लक्ष्मीर्महालक्ष्मीस्तथैव च ।
त्रिशक्तिः सर्वसाम्राज्यलक्ष्मीः पञ्च प्रकीर्तिताः ॥१६५ ॥

श्रीविद्या च परंज्योतिः परा निष्कलशाम्भवी ।
अजपा मातृका चेति पञ्च कोशाः प्रकीर्तिताः ॥१६६ ॥

श्रीविद्या त्वरिता चैव पारिजातेश्वरी तथा ।
त्रिपुटा पञ्चबाणेशी पञ्चकल्पलताः स्मृताः ॥१६७ ॥

श्रीविद्याऽमृतपीठेशी सुधासूरमृतेश्वरी ।
अन्नपूर्णेति विख्याता पञ्च कामदुघाः स्मृताः ॥१६८ ॥

श्रीविद्या सिद्धलक्ष्मीश्च मातङ्गी भुवनेश्वरी ।
वाराही पञ्चरत्नानामीश्वर्यश्च प्रकीर्तिताः ॥१६९ ॥

गणेशो बटुकश्चैव क्षेत्रेशो योगिनीगणाः ।
तर्पिता बलिपात्राणि सर्वे रक्षन्तु पूजिताः ॥१७० ॥
ऐशान्यं सर्वदा पातु नित्यं निर्माल्यवासिनी ।
ऐशान्यां सुन्दरी पातु बिन्दुचक्रनिवासिनी ॥१७१ ॥
नित्यं कामकला पातु मुद्रा मां पातु खेचरी ।
शक्तिर्मां सर्वदा पातु या मूलाधारवासिनी ॥१७२ ॥
मुद्रामन्त्रोपचारैस्तु समस्ता देवताश्च याः ।
ताः श्रीश्च पूजिता चास्तु श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥१७३ ॥
श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्याः स्तवराजं मनोहरम् ।
पूजाक्रमेण कथितं साधकानां सुखावहम् ॥१७४ ॥
क्रमेणानेन विधिना श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीम् ।
संपूज्य साधकश्रेष्ठो रक्षामन्त्रं सदा पठेत् ॥१७५ ॥
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा निशायामर्धरात्रके ।
अथवा संकटे प्राप्ते राजस्थाने सुदुर्गमे ॥१७६ ॥
जले वाऽथ स्थले वापि श्मशाने दुर्गमे गिरौ ।
यत्र यत्र भये प्राप्ते स तत्रैव पठेन्नरः ॥१७७ ॥
सर्वावयवभावेन देवीं संचिन्त्य साधकः ।
रक्षां कुर्वीत यत्नेन सर्वाशुभविनाशिनीम् ॥१७८ ॥
स्तोत्रं चाद्भुतमेवेदं त्रैलोक्ये चापि दुर्लभम् ।
गोपनीयं प्रयत्नेन यदीच्छेदात्मनो हितम् ॥१७९ ॥
यस्मै कस्मै न दातव्यं न वक्तव्यं कदाचन ।
शिष्याय भक्तियुक्ताय साधकाय प्रकाशयेत् ॥१८० ॥
भ्रष्टेभ्यः साधकेभ्योऽपि बान्धवेभ्यो न दर्शयेत् ।
दत्ते च सिद्धिहानिः स्यादित्याज्ञा शांकरी कृता ॥१८१ ॥

मन्त्राः पराङ्मुखा यान्ति क्रुद्धा भवति सुन्दरी ।
अशुभं च भवेत्तस्य तस्माद्यत्नेन गोपयेत् ॥१८२ ॥

यद्गृहे विद्यते स्तोत्रं ग्रन्थे लिखितमुत्तमम् ।
चञ्चलापि स्थिरा भूत्वा कमला तत्र तिष्ठति ॥१८३ ॥

तस्माद्यत्नादिमं ग्रन्थं पूजयेद्ग्रन्थपुष्पकैः ।
पूजाफलं लभेन्नित्यं सुन्दरीसन्निधिर्भवेत् ॥१८४ ॥

स्तवराजमिमं पुण्यं यः पठेत्सुसमाहितः ।
यत्फलं लभते तस्माच्छृणुध्वं साधकोत्तमाः ॥१८५ ॥

वारमेकं तु योऽधीयात् स पूजाफलमश्नुते ।
वेदिता मातृचक्रस्य साधको भुवि जायते ॥१८६ ॥

मासमेतत्क्रमेणैव पठेद्भक्तिपरायणः ।
स्वर्गेऽपि विदितो भूत्वा देवीभक्तस्तु भूतले ॥१८७ ॥

भक्त्या च धारयेद्यस्तु लिखित्वा स्तोत्रमुत्तमम् ।
शिखायामथवा कण्ठे बाहौ वा भक्तिसंयुतः ॥१८८ ॥

स भवेत्साधकश्रेष्ठो मातृणां च सदा प्रियः ।
लभते सर्वकामान्वै परं स्वस्त्ययनं भवेत् ॥१८९ ॥

तस्मादिदं प्रयत्नेन धारयेद्विधिना तथा ।
पठित्वा पूजयित्वा च त्रैलोक्यं वशमानयेत् ॥१९० ॥

भक्ताय ददते तस्मै मन्त्रं रक्षाकरं परम् ।
धृत्वा सौवर्णमध्यस्थां सर्वकामान्नरो लभेत् ॥१९१ ॥

यानि वाञ्छति कामानि भुक्तिमुक्तिकराणि च ।
लभते नात्र संहेदो भुवि स्वर्गे रसातले ॥१९२ ॥

दृष्ट्वा च साधकश्रेष्ठं ग्रहराक्षसहिंसकाः ।
दूरादेव पलायन्ते न समर्थाश्च हिंसितुम् ॥१९३ ॥

विषं निर्विषतां याति पापं निर्याति संक्षयम्।
देववन्मानवो भूत्वा भुनक्ति बहुलं सुखम् ॥१९४॥

तस्मान्नित्यं पठेद्धीमान्मुक्तिकामार्थसिद्धये।
भक्त्या च धारयेद्देवीं स्वरक्षां सर्वदाचरेत् ॥१९५॥

पूर्वजातिपरिज्ञानवेद्यं जन्मसहस्रकम्।
न पुनर्जायते योनौ मरणं नास्ति चापरम् ॥१९६॥

गन्धर्वरूपवान् भूत्वा संपूज्य परमेश्वरीम्।
रक्षामन्त्रं पठित्वा च देवत्वं लभते ध्रुवम् ॥१९७॥

अपुत्रो लभते पुत्रं दरिद्रो लभते धनम्।
यं यं वापि स्मरेन्नित्यं तं तमाप्नोति निश्चितम् ॥१९८॥

अतिदुःखालये कष्टे भीमे निगळबन्धने।
सकृत्पाठे कृते नित्यं निगळान्मुच्यते ध्रुवम् ॥१९९॥

दुष्कृतैरभिचारैश्च रोगैर्यक्ष्मादिभिश्च यः।
परप्रयुक्तैर्ग्रस्तोऽपि पठनान्मुच्यते नरः ॥२००॥

इमं त्रिपुरसुन्दर्याः स्तवराजं मनोहरम्।
रक्षामन्त्रं च शुभदं शिवेन परिकीर्तितम् ॥
यः पठेत्प्रयतो भक्त्या सद्यो रोगात्स मुच्यते ॥२०१॥

आयुरारोग्यमैश्वर्यं भुक्तिं मुक्तिं च विदन्ति।
सर्वान्कामानवाप्नोति देवेन्द्रस्यापि दुर्लभान् ॥२०२॥

॥ इति श्रीरुद्रयामले श्रीत्रिपुरास्तवराजः समाप्तः ॥

■

देवीभुजङ्गस्तोत्रम्

[श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य भगवान् आदि शंकराचार्य कृत यह स्तोत्र 'भुजङ्ग' छन्द में निबद्ध होने के कारण 'देवीभुजङ्गम्' के नाम से प्रसिद्ध है। समस्त विकल्पों से परे जो श्रीचक्रनिवासिनी भगवती ललिता का ध्यान-पूजनादि कर इस स्तोत्र का पाठ करता है, वह आनन्द-सिन्धु में निमग्न होकर जन्म-मरण के चक्र से विमुक्त हो जाता है।]

विरिञ्च्यादिभिः पञ्चभिर्लोकपालैः
समूढे महानन्दपीठे निषण्णम्।
धनुर्बाणपाशाङ्कुशप्रोतहस्तं
महस्त्रैपुरं शंकराद्वैतमव्यात् ॥१॥

यदन्नादिभिः पञ्चभिः कोशजालैः
शिरः पक्षपुच्छात्मकैरन्तरन्तः।
निगूढे महायोगपीठे निषण्णं
पुरारेरथान्तःपुरं नौमि नित्यम् ॥२॥

विरिञ्चादिरूपैः प्रपञ्चे विहृत्य
स्वतन्त्रा यदा स्वात्मविश्रान्तिरेषा।
तदा मानमातृप्रमेयातिरिक्तं
परानन्दमीडे भवानि त्वदीयम् ॥३॥

विनोदाय चैतन्यमेकं विभज्य
द्विधा देवि जीवः शिवश्चेति नाम्ना।
शिवस्यापि जीवत्वमापादयन्ती
पुनर्जीवमेनं शिवं वा करोषि ॥४॥

समाकुञ्च्य मूलं हृदि न्यस्य वायुं
मनो भ्रूबिलं प्रापयित्वा निवृत्ताः।
ततः सच्चिदानन्दरूपे पदे ते
भवन्त्यम्ब जीवाः शिवत्वेन केचित् ॥५॥

शरीरेऽतिकष्टे रिपौ पुत्रवर्गे
सद्वाभीतिमूले कलत्रे धने वा।
न कश्चिद्विरज्यत्यहो देवि चित्रं
कथं त्वत्कटाक्षं विना तत्त्वबोधः ॥६॥

शरीरे धनेऽपत्यवर्गे कलत्रे
विरक्तस्य सद्देशिकादिष्टबुद्धेः।
यदाकस्मिकं ज्योतिरानन्दरूपं
समाधौ भवेत्तत्त्वमस्यम्ब सत्यम् ॥७॥

मृषान्यो मृषान्यः परो मिश्रमेनं
परः प्राकृतं चापरो बुद्धिमात्रम्।
प्रपञ्चं मिमीते मुनीनां गणोऽयं
तदेतत्त्वमेवेति न त्वां जहीमः ॥८॥

निवृत्तिः प्रतिष्ठा च विद्या च शान्ति-
स्तथा शान्त्यतीतेति पञ्चीकृताभिः।
कलाभिः परे पञ्चविंशात्मिकाभि-
स्त्वमेकैव सेव्या शिवाभिन्नरूपा ॥९॥

अगाधेऽत्र संसारपङ्के निमग्नं
कलत्रादिभारेण खिन्नं नितान्तम्।
महामोहपाशौघबद्धं चिरान्मां
समुद्धर्तुमम्ब त्वमेकैव शक्ता ॥१०॥

समारभ्य मूलं गतो ब्रह्मचक्रं
भवद्दिव्यचक्रेश्वरीधामभाजः।
महासिद्धिसंघातकल्पद्रुमाभा-
नवाप्याम्ब नादानुपास्ते च योगी ॥११॥

गणेशैर्ग्रहैरम्ब नक्षत्रपङ्क्त्या
तथा योगिनीराशिपीठैरभिन्नम् ।
महाकालमात्मानमामृश्य लोकं
विधत्से कृतिं वा स्थितिं वा महेशि ॥१२ ॥

लसत्तारहारामतिस्वच्छचेलां
वहन्तीं करे पुस्तकं चाक्षमालाम् ।
शरच्चन्द्रकोटिप्रभाभासुरां त्वां
सकृद्भावयन्भारतीवल्लभः स्यात् ॥१३ ॥

समुद्यत्सहस्रार्कबिम्बाभवक्त्रां
स्वभासैव सिन्दूरिताजाण्डकोटिम् ।
धनुर्बाणपाशाङ्कुशान्धारयन्तीं
स्मरन्तः स्मरं वापि संमोहयेयुः ॥१४ ॥

मणिस्यूततातङ्कशोणास्यबिम्बां
हरित्पट्टवस्त्रां त्वगुल्लासिभूषाम् ।
हृदा भावयंस्तप्तहेमप्रभां त्वां
श्रियो नाशयत्यम्ब चाञ्चल्यभावम् ॥१५ ॥

महामन्त्रराजान्तबीजं पराख्यं
स्वतो न्यस्तबिन्दु स्वयं न्यस्तहार्दम् ।
भवद्वक्त्रवक्षोजगुह्याभिधानं
स्वरूपं सकृद्भावयेत्स त्वमेव ॥१६ ॥

तथान्ये विकल्पेषु निर्विण्णचित्ता-
स्तदेकं समाधाय बिन्दुत्रयं ते ।
परानन्दसंधानसिन्धौ निमग्नाः
पुनर्गर्भरन्ध्रं न पश्यन्ति धीराः ॥१७ ॥

त्वदुन्मेषलीलानुबन्धाधिकारा-
न्विरिञ्च्यादिकांस्त्वद्गुणाम्योधिबिन्दून् ।
भजन्तस्तितीर्षन्ति संसारसिन्धुं
शिवे तावकीना सुसंभावनेयम् ॥१८ ॥

कदा वा भवत्पादपोतेन तूर्णं
भवाम्भोधिमुत्तीर्य पूर्णान्तरङ्गः ।
निमज्जन्तमेनं दुराशाविषाब्धौ
समालोक्य लोकं कथं पर्युदास्से ॥१९ ॥

कदा वा हृषीकाणि साम्यं भजेयुः
कदा वा न शत्रुर्न मित्रं भवानि ।
कदा वा दुराशाविषूचीविलोपः
कदा वा मनो मे समूलं विनश्येत् ॥२० ॥

नमोवाकमाशास्महे देवि युष्म-
त्पदाम्भोजयुग्माय तिग्माय गौरि ।
विरिञ्च्यादिभास्वत्किरीटप्रतोली-
प्रदीपायमानप्रभाभास्वराय ॥२१ ॥

कचे चन्द्ररेखं कुचे तारहारं
करे स्वादुचापं शरे षट्पदौघम् ।
स्मरामि स्मरारेरभिप्रायमेकं
मदाघूर्णनेत्रं मदीयं निधानम् ॥२२ ॥

शरेष्वेव नासा धनुष्वेव जिह्वा
जपापाटले लोचने ते स्वरूपे ।
त्वगेषा भवच्चन्द्रखण्डे श्रवो मे
गुणे ते मनोवृत्तिरम्ब त्वयि स्यात् ॥२३ ॥

जगत्कर्मधीरान्वचोधूतकीरान्
कुचन्यस्तहारान्कृपासिन्धुपूरान् ।
भवाम्भोधिपारान्महापापदूरान्
भजे वेदसाराञ्शिवप्रेमदारान् ॥२४॥

सुधासिन्धुसारे चिदानन्दनीरे
समुत्फुल्लनीपे सुरत्नान्तरीपे ।
मणिव्यूहसाले स्थिते हैमशाले
मनोजारिवामे निषण्णं मनो मे ॥२५॥

दृगन्ते विलोला सुगन्धीषु माला
प्रपञ्चेन्द्रजाला विपत्सिन्धुकूला ।
मुनिस्वान्तशाला नमल्लोकपाला
हृदि प्रेमलोलामृतस्वादुलीला ॥२६॥

जगज्जालमेतत्त्वयैवाम्ब सृष्टं
त्वमेवाद्य यासीन्द्रियैरर्थजालम् ।
त्वमेकैव कर्त्री त्वमेकैव भोक्त्री
न मे पुण्यपापे न मे बन्धमोक्षौ ॥२७॥

इति प्रेमभारेण किञ्चिन्मयोक्तं
न बुध्वैव तत्त्वं मदीयं त्वदीयम् ।
विनोदाय बालस्य मौर्ख्यं हि मात-
स्तदेतत्प्रलापस्तुतिं मे गृहाण ॥२८॥

॥ इति देवीभुजङ्गस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

■

भवानी-भुजङ्गम्

[भुजङ्ग छन्द में निबद्ध यह स्तोत्र 'भवानीभुजङ्गम्' के नाम से प्रसिद्ध है। भुजङ्गम् का एक अर्थ सौन्दर्यप्रेमी भी होता है, इस अर्थ में देवी के सौन्दर्य-मुग्ध के द्वारा रचित स्तोत्र कहा जा सकता है। इस स्तोत्र का जो भक्तिपूर्वक पाठ करते हैं, उन्हें भगवती प्रसन्ना होकर श्री एवं अष्टसिद्धियों सहित अपना शाश्वत और वेदसारभूत पद प्रदान करती हैं।]

षडाधारपङ्केरुहान्तर्विराज-
त्सुषुम्नान्तरालेऽतितेजोल्लसन्तीम्।
सुधामण्डलं द्रावयन्तीं पिबन्तीं
सुधामूर्तिमीडे चिदानन्दरूपाम् ॥१॥

ज्वलत्कोटिबालार्कभासारुणाङ्गीं
सुलावण्यशृङ्गारशोभाभिरामाम्।
महांपद्मकिञ्जल्कमध्ये विराज-
त्त्रिकोणे निषण्णां भजे श्रीभवानीम् ॥२॥

क्वणत्किङ्किणीनूपुरोद्भासिरत्न-
प्रभालीढलाक्षार्द्रपादाब्जयुग्मम्।
अजेशाच्युताद्यैः सुरैः सेव्यमानं
महादेवि मन्मूर्ध्नि ते भावयामि ॥३॥

सुशोणाम्बराबद्धनीवीविराज-
न्महारत्नकाञ्चीकलापं नितम्बम्।
स्फुरद्दक्षिणावर्तनाभिं च तिस्रो
वलीरम्ब ते रोमराजिं भजेऽहम् ॥४॥

लसद्वृत्तमुत्तुङ्गमाणिक्यकुम्भो-
पमश्रि स्तनद्वन्द्वमम्बाम्बुजाक्षि।
भजे दुग्धपूर्णाभिरामं तदेवं
महाहारदीप्तं सदा प्रस्नुतास्यम् ॥५॥

शिरीषप्रसूनोल्लसद्बाहुदण्डै-
र्ज्वलद्बाणकोदण्डपाशाङ्कुशैश्च ।
चलत्कङ्कणोदारकेयूरभूषो-
ज्ज्वलद्भिर्लसन्तीं भजे श्रीभवानीम् ॥६ ॥

शरत्पूर्णचन्द्रप्रभापूर्णबिम्बा-
धरस्मेरवक्त्रारविन्दां सुशान्ताम् ।
सुरत्नावलीहारताटङ्कशोभां
महासुप्रसन्नां भजे श्रीभवानीम् ॥७ ॥

सुनासापुटं सुन्दरभ्रूललाटं
तवौष्ठश्रियं दानदक्षं कटाक्षम् ।
ललाटे लसद्गन्धकस्तूरिभूषं
स्फुरच्छ्रीमुखाम्भोजमीडेऽहमम्ब ॥८ ॥

चलत्कुन्तलान्तर्भ्रमद्भृङ्गवृन्दं
घनस्निग्धधम्मिल्लभूषोज्ज्वलं ते ।
स्फुरन्मौलिमाणिक्यबद्धेन्दुरेखा-
विलासोल्लसद्दिव्यमूर्धानमीडे ॥९ ॥

इति श्रीभवानि स्वरूपं तवेदं
प्रपञ्चात्परं चातिसूक्ष्मं प्रसन्नम् ।
स्फुरत्वम्ब डिम्भस्य मे हृत्सरोजे
सदा वाङ्मयं सर्वतेजोमयं च ॥१० ॥

गणेशाभिमुख्याखिलैः शक्तिवृन्दै-
र्वृतां वै स्फुरच्चक्रराजोल्लसन्तीम् ।
परां राजराजेश्वरि त्रैपुरि त्वां
शिवाङ्कोपरिस्थां शिवां भावयामि ॥११ ॥

त्वमर्कस्त्वमिन्दुस्त्वमग्निस्त्वमाप-
स्त्वमाकाशभूवायवस्त्वं महत्त्वम् ।
त्वदन्यो न कश्चित्प्रपञ्चोऽस्ति सर्वं
त्वमानन्दसंवित्स्वरूपां भजेऽहम् ॥१२ ॥

श्रुतीनामगम्ये सुवेदागमज्ञा
महिम्नो न जानन्ति पारं तवाम्ब ।
स्तुतिं कर्तुमिच्छामि ते त्वं भवानि
क्षमस्वेदमत्र प्रमुग्धः किलाहम् ॥१३ ॥

गुरुस्त्वं शिवस्त्वं च शक्तिस्त्वमेव
त्वमेवासि माता पिता च त्वमेव ।
त्वमेवासि विद्या त्वमेवासि बन्धु-
र्गतिर्मे मतिर्देवि सर्वं त्वमेव ॥१४ ॥

शरण्ये वरेण्ये सुकारुण्यमूर्ते
हिरण्योदराद्यैरगण्ये सुपुण्ये ।
भवारण्यभीतेश्च मां पाहि भद्रे
नमस्ते नमस्ते नमस्ते भवानि ॥१५ ॥

इतीमां महच्छ्रीभवानीभुजङ्गं
स्तुतिं यः पठेद्भक्तियुक्तश्च तस्मै ।
स्वकीयं पदं शाश्वतं वेदसारं
श्रियं चाष्टसिद्धिं भवानी ददाति ॥१६ ॥

भवानी भवानी भवानी त्रिवार-
मुदारं मुदा सर्वदा ये जपन्ति ।
न शोकं न मोहं न पापं न भीतिः
कदाचित्कथञ्चित्कुतश्चिज्जनानाम् ॥१७ ॥

॥ इति भवानीभुजङ्गं सम्पूर्णम् ॥

■

श्रीराजराजेश्वरीशरणागतिस्तुतिः

श्रीभारतस्य सकलस्य च भाग्यभूतौ
श्रीभारतीयजनताकृतभागधेयौ ।
श्रीकाञ्चनाख्यसुगिरौ सुविराजमानौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥१ ॥

कल्याणनित्यसुषमापरिपूरितेऽस्मिन्
कल्याणदिव्यनगरीवरपार्श्वभागे ।
रराजमान रमणीयनिजालयेऽस्मिन्
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥२ ॥

श्रीवीरवर्यपरमासनसुस्थितौ तौ
वाणीरमासुपरिवीजितपार्श्वभागौ ।
पुण्ड्रेक्षुचापवरपाशमहांकुशौ तौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥३ ॥

श्रीमन्त्रयन्त्रबलतः किल राजमानौ
सर्वेष्टपूर्तिकरणैकमहासुचक्रे ।
देदीप्यमानवपुषा भुवि भासमानौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥४ ॥

साहस्रिकैश्च निजनामभिरर्च्यमानौ
साहस्रसंख्यदलपद्मनिवासलीलौ ।
नीलोत्पलाभनयनद्वयनित्यरम्यौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥५ ॥

श्रीशादिदेवपरिपूजनलोकपूज्यौ
भाग्यप्रदानपरिपूरितभक्तकामौ ।
कार्तस्वराभवपुषा कमनीयरूपौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥६ ॥

श्रुत्यागमादिनिखिलागमसारभूतौ
नेत्रत्रयेण नयनोत्सवदानशीलौ ।
नीवारशूकवपुषा हृद्वि भाव्यमानौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥७ ॥

षष्ट्या चतुर्भिरुपचारपरम्पराभिः
षष्ट्या चतुर्भिरथ कोटिसुयोगिनीभिः ।
षट्कोणमध्यनिलयौ सकलागमेड्यौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥८ ॥

श्रीन्यासपूर्वकसुमन्त्रितरुद्रकुम्भैः
क्षीराज्यमाक्षिकफलैरथ नारिकेलैः ।
श्रीकाञ्चनेन कवचेन विराजमानौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥९ ॥

भक्तौघभक्तिवशतो नियमार्चनाभिः
सान्निध्यनित्यपरिपूर्णकलाभिरामौ ।
नित्याभिषेकसतताद्रमहाप्रभावौ
राजेश्वरीसुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥१० ॥

राजेश्वरीचरणयोः शरणागतित्वं
संबोध्यमानदशकं पठतां सुराज्ञी ।
सर्वेष्टपूर्तिमचिरात् कुरुते दयार्द्रा
सर्वत्र रक्षति मुदा सुतनिर्विशेषम् ॥११ ॥

॥ इति श्रीराजराजेश्वरीशरणागतिस्तुतिः ॥

■

मूलमन्त्रात्मक-बालास्तुतिः

[बाला-त्रिपुरसुन्दरी भगवती राजराजेश्वरी की कन्या हैं। इनके त्र्यक्षरी मन्त्र से युक्त यह स्तोत्र अत्यन्त गोपनीय है। गुरुमुख से प्राप्त कर प्रतिदिन इसका पाठ करने से भगवती बाला-त्रिपुरसुन्दरी प्रसन्न होती हैं तथा भक्त भुवन को वश में करने वाला बन जाता है।]

अयी आनन्दवल्ली अमृतकरतली आदिशक्तिः परायी
माया मायास्वरूपी स्फटिकमणिमयी मामतंगी षडंगी।
ज्ञानी ज्ञानस्वरूपी नलिन-परिमली नाद ओंकारयोगी
योगी योगासनस्था भुवनवशकरी सौन्दरी ऐं नमस्ते ॥१॥
बाला मन्त्रे कटाक्षी मम हृदयसखी मत्तभाव-प्रचण्डी
व्याली यज्ञोपवीती विकटकटितटी वीरशक्तिः प्रसादी।
बाले बालेन्दुमौले मदगजभुजहस्ताभिषेक्त्री स्वतन्त्री
कालीं त्वं कालरूपी खगगलनहृदी कारणी क्लीं नमस्ते ॥२॥
मूलाधारे महिम्नी हुतवहनयनी मूलमन्त्री त्रिनेत्री
हाराः केयूरवल्ली अखिलसुखकरी अंबिकायाः शिवायाः।
वेदे वेदान्तरूपी विततघनतटी वीरतन्त्री भवानी
शौरी संसारयोनी सकलगुणमयी तेऽद्य श्रीं सौः नमस्ते ॥३॥
ऐं क्लीं सौः सर्वमन्त्रे मम वरशुभकरी अंगना चेष्टिताया
श्रीं ह्रीं क्लीं बीजमुख्यैर्दिनकरकिरणैर्ज्योतिरूपे शिवाख्ये।
ह्रां ह्रीं ह्रूं हेमवर्णे हिमकरकिरणा भासमानेन्दु-चूडे
क्षां क्षीं क्षूं क्षौमवासे सकलजयकरी शक्तिबाले नमस्ते ॥४॥

॥ इति मूलमन्त्रात्मक-बालास्तुतिः ॥

■

श्रीललिताषोडशीस्तुतिः

[शकलि भाषाच्छन्द में निबद्ध श्रीललिताषोडशी स्तुति गेय है। इसका पाठ करते-करते संगीत का कोई झरना बहने लगता है और उसमें भक्ति का संगीत सुनाई देने लगता है। भगवती ललिता के पादाब्ज की प्रणति करने वालों को आठों सिद्धियाँ देने वाली ऋद्धि और सिद्धि कन्याओं से प्रसन्न शिवदयिता शङ्करी की अपने भक्तों की समस्त आपत्तियों से रक्षा करती हैं।]

भक्तजनव्रजकल्पलते
भवभयभञ्जकचरणनते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥१॥

भुजग-भ्रमर-शिरोजतते
करनिर्जितपाथोजाते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥२॥

करचामीकरवर्ष्मलते
वरवरदापननैजकृते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥३॥

स्मररिपुकाम्यस्वतनुलते
सुरवरनम्याङ्घ्रिकजाते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥४॥

हरहृद्रम्यस्वगुणतते
कृपया करुणां कुरु विनते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥५॥

कृत्तकृतान्तकनिजकान्ते
कृष्णारक्षकसहजाते ।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥६ ॥

मेनादेवीतनुजाते
शौनकनुतपदवनजाते ।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥७ ॥

कनकह्रेपकभाललिते
वरसन्तोषदपादनते ।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥८ ॥

भवसागरतारणनिरते
भववामाङ्गश्लेषरते ।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥९ ॥

नीरदमेचककचलसिते
पारविहीनकृपाभरिते ।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥१० ॥

मुषिताखिलनिजपापनते
पदपङ्कजनतसुरविनते ।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥११ ॥

एणाङ्कार्दकमुखकान्ते
हरिणा (एणा) ङ्कधर[स्व]शिरःकान्ते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥१२॥

शोणाधरजितबिम्बतते
वीणाधरकरवनजाते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥१३॥

मणिगणभूषण(रूषित) कान्तियुते
पीनस्तननतकायलते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥१४॥

इष्टस्पर्शस्वकृतिरते
कष्टनिकृन्तकचरणनते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥१५॥

सिद्ध्यष्टकदे पदाब्ज[पाद]नते
सिद्ध्यृद्धि[ऋद्धि-सिद्धि]प्रीतस्वसुते।
जय जय शङ्करि शिवदयिते
जय जय पाहि श्रीललिते ॥१६॥

॥ इति श्रीललितषोडशीस्तुतिः ॥

■

लघुस्तुतिः

[लघु-स्तुति के लेखक का कहना है कि मेरी यह रचना निन्दित होगी या प्रशंसित, इस चिन्ता से मुझे कुछ लेना-देना नहीं है । इसका लघुत्व जानकर भी जिसके हृदय में जगदम्बा की भक्ति है, वह तो पढ़ेगा ही; क्योंकि मैंने इसे विद्वत्ता के प्रदर्शन के लिए नहीं, अपितु आपकी भक्ति से प्रेरित होकर लिखा है ।]

ऐन्द्रस्येव शरासनस्य दधती मध्येललाटं प्रभां
शौक्लीं कान्तिमनुष्णगोरिव शिरस्यातन्वती सर्वतः ।
एषासौ त्रिपुरा हृदि द्युतिरिवोष्णांशोस्सदाहस्थितात्
छिन्द्यान्नस्सहसा पदैस्त्रिभिरघं ज्योतिर्मयी वाङ्मयी ॥१ ॥

या मात्रा त्रपुसीलतातनुलसत्तन्तुस्थितिस्पर्धिनी
वाग्बीजे प्रथमे स्थिता तव सदा तां मन्महे ते वयम् ।
शक्तिः कुण्डलिनीति विश्वजननव्यापारबद्धोद्यमाः
ज्ञात्वेत्थं न पुनस्स्पृशन्ति जननीगर्भेऽर्भकत्वं नराः ॥२ ॥

दृष्ट्वा सम्भ्रमकारि वस्तु सहसा ऐऐ इति व्याहृतं
येनाकूतवशादपीह वरदे ! बिन्दुं विनाप्यक्षरम् ।
तस्यापि ध्रुवमेव देवि ! तरसा जाते तवानुग्रहे
वाचस्सूक्तिसुधारसद्रवमुचो निर्यान्ति वक्त्राम्बुजात् ॥३ ॥

यन्नित्ये ! तव कामराजमपरं मन्त्राक्षरं निष्कलं
तत्सारस्वतमित्यवैति विरलः कश्चिद्बुधश्चेद्भुवि ।
आख्यानं प्रतिपर्व सत्यतपसो यत्कीर्तयन्तो द्विजाः
प्रारम्भे प्रणवास्पदप्रणयितां नीत्वोच्चरन्ति स्फुटम् ॥४ ॥

यत्सद्यो वचसां प्रवृत्तिकरणे दृष्टप्रभावं बुधैः-
तार्तीयं तदहं नमामि मनसा त्वद्बीजमिन्दुप्रभम् ।
अस्त्यौर्वोऽपि सरस्वतीमनुगतो जाड्याम्बुविच्छित्तये
गोशब्दो गिरि वर्तते सुनियतं योगं विना सिद्धिदः ॥५ ॥

एकैकं तव देवि ! बीजमनघं सव्यञ्जनाव्यञ्जनं
कूटस्थं यदि वा पृथक्क्रमगतं यद्वा स्थितं व्युत्क्रमात् ।
यं यं काममपेक्ष्य येन विधिना केनापि वा चिन्तितं
जप्तं वा सफलीकरोति सततं तं तं समस्तं नृणाम् ॥६ ॥

वामे पुस्तकधारिणीमभयदां साक्षस्रजं दक्षिणे
भक्तेभ्यो वरदानपेशलकरां कर्पूरकुन्दोज्वलाम् ।
उज्जृम्भाम्बुजपत्रकान्तनयनस्निग्धप्रभालोकिनीं
ये त्वामम्ब ! न शीलयन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः ॥७ ॥

ये त्वां पाण्डुरपुण्डरीकपटलस्पष्टाभिरामप्रभां
सिञ्चन्तीममृतद्रवैरिव शिरो ध्यायन्ति मूर्ध्नि स्थिताम् ।
अश्रान्ता विकटस्फुटाक्षरपदा निर्याति वक्त्राम्बुजात्
तेषां भारति ! भारती सुरसरित्कल्लोललोलोर्मिवत् ॥८ ॥

ये सिन्दूरपरागपिञ्जपिहितां त्वत्तेजसाऽऽद्यामिमां
उर्वीं चापि विलीनयावकरसप्रस्तारमग्नामिव ।
पश्यन्ति क्षणमप्यनन्यमनसस्तेषामनङ्गज्वर-
क्लान्तस्त्रस्तकुरङ्गशावकदृशो वश्या भवन्ति स्फुटम् ॥९ ॥

चञ्चत्काञ्चनकुण्डलाङ्गदधरामाबद्धकाञ्चीस्रजं
ये त्वां चेतसि तप्ते क्षणमपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थिराम् ।
तेषां वेश्मसु विभ्रमादहरहः स्फारीभवन्त्यश्रिरं
माद्यत्कुञ्जरकर्णतालतरलाः स्थैर्यं भजन्ते श्रियः ॥१० ॥

आर्भट्या शशिखण्डमण्डितजटाजूटां नृमुण्डस्रजं
बन्धूकप्रसवारुणाम्बरधरां प्रेतासनाध्यासिनीम् ।
त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां त्रिनयनामापीनतुङ्गस्तनीं
मध्ये निम्नवलित्रयाङ्कितततुं त्वद्रूपसंवित्तये ॥११ ॥

जातोऽप्यल्पपरिच्छदे क्षितिभुजां सामान्यमात्रे कुले
निश्शेषावनिचक्रवर्तिपदवीं लब्ध्वा प्रतापोन्नतः ।
यद्विद्याधरवृन्दवन्दितपदश्श्रीवत्सराजोऽभवद्
देवि ! त्वच्चरणाम्बुजप्रणतिजः सोऽयं प्रसादोदयः ॥१२॥

चण्डि ! त्वच्चरणाम्बुजार्चनकृते बिल्वादिलोल्लुण्ठन-
त्रुट्यत्कण्टककोटिभिः परिचयं येषां न जग्मुः कराः ।
ते दण्डाङ्कुशचक्रचापकुलिशश्रीवत्समत्स्याङ्कितैः
जायन्ते पृथिवीभुजः कथमिवाम्भोजप्रभैः पाणिभिः ॥१३॥

विप्राः क्षोणिभुजो विशस्तदितरे क्षीराज्यमध्वासवैः
त्वां देवि ! त्रिपुरे ! परापरमयीं सन्तर्प्य पूजाविधौ ।
यां यां प्रार्थयते मनःस्थिरधियां तेषां त एव ध्रुवं
तां तां सिद्धिमवाप्नुवन्ति तरसा विघ्नैरविघ्नीकृताः ॥१४॥

शब्दानां जननी त्वमत्र भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे
त्वत्तः केशववासवप्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति स्फुटम् ।
लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादयस्तेऽप्यमी
स त्वं काचिदचिन्त्यरूपमहिमा शक्तिः परा गीयसे ॥१५॥

देवानां त्रितयं त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिः स्वराः
त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमथो त्रिब्रह्म वर्णास्त्रयः ।
यत्किञ्चिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गादिकं
तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वतः ॥१६॥

लक्ष्मीं राजकुले जयां रणभुवि क्षेमङ्करीमध्वनि
क्रव्यादद्विपसर्पभाजि शबरीं कान्तारदुर्गे गिरौ ।
भूतप्रेतपिशाचजम्बुकभये स्मृत्वा महाभैरवीं
व्यामोहे त्रिपुरां तरन्ति विपदस्तारां च तोयप्लवे ॥१७॥

माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कलामालिनी
मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी ।
शक्तिश्शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी
ह्रींकारी त्रिपुरा परापरमयी माता कुमारीत्यसि ॥१८ ॥

आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः
काद्यैः क्षान्तगतैस्स्वरादिभिरथ क्षान्तैश्च तैस्सस्वरैः ।
नामानि त्रिपुरे भवन्ति खलु यान्यत्यन्तगुह्यानि ते
तेभ्यो भैरवपत्नि ! विंशतिसहस्रेभ्यः परेभ्यो नमः ॥१९ ॥

बोद्धव्या निपुणं बुधैस्स्तुतिरियं कृत्वा मनस्तद्गतं
भारत्यास्त्रिपुरेत्यनन्यमनसा यत्राद्यवृत्ते स्फुटम् ।
एकद्वित्रिपदक्रमेण कथितस्तत्पादसङ्ख्याक्षरैः-
र्मन्त्रोद्धारविधिर्विशेषसहितस्सत्सम्प्रदायान्वितः ॥२० ॥

सावद्यं निरवद्यमस्तु यदि वा किं वानया चिन्तया
नूनं स्तोत्रमिदं पठिष्यति जनो यस्यास्ति भक्तिस्त्वयि ।
सञ्चिन्त्यापि लघुत्वमात्मनि दृढं सञ्जायमानं हठात्
त्वद्भक्त्या मुखरीकृतेन रचितं यस्मान्मयापि ध्रुवम् ॥२१ ॥

॥ इति लघुस्तवः ॥

■

त्रिपुरसुन्दरीवेदपादस्तोत्रम्

वेदपादस्तवं वक्ष्ये देव्याः प्रियचिकीर्षया ।
यथामति मतिं देवस्तन्नो दन्तिः प्रचोदयात् ॥१ ॥

अकिंचित्करकर्मभ्यः प्रत्याहृत्य कृपावशात् ।
सुब्रह्मण्यः स्तुतावस्यां तन्नः षण्मुखः प्रचोदयात् ॥२ ॥

अकारादिक्षकारान्तवर्णावयवशालिनी ।
वीणापुस्तकहस्ताऽव्यात्प्रणो देवी सरस्वती ॥३ ॥

या वर्णपदवाक्यार्थगद्यपद्यस्वरुपिणी ।
वाचि नर्तयतु क्षिप्रं मेधां देवी सरस्वती ॥४ ॥

उपास्यमाना विप्रेन्द्रैः सन्ध्यासु च तिसृष्वपि ।
सद्यः प्रसीद मे मातः सन्ध्याविद्ये सरस्वति ॥५ ॥

मन्दा निन्दालोलुपाऽहं स्वभावादेतत्स्तोत्रं पूर्यते किं मयेति ।
मा ते भीतिर्हे मते त्वादृशानामेषा नेत्री राधसा सूनृतानाम् ॥६ ॥

तरङ्गभ्रुकुटीकोटिभङ्ग्या तर्जयते जराम् ।
सुधामयाय शुभ्राय सिन्धूनां पतये नमः ॥७ ॥

तस्य मध्ये मणिद्वीपः कल्पकारामभूषितः ।
अस्तु मे ललितावासः स्वस्तिदा अभयंकरः ॥८ ॥

कदम्बमञ्जरीनिर्यद्वारुणीपारणोन्मदैः ।
द्विरेफैर्वर्णनीयाय वनानां पतये नमः ॥९ ॥

तत्र वप्रावलीलीलागगनोल्लङ्घिगोपुरम् ।
मातः कौतूहलं दद्यात्सहा र्यं नगरं तव ॥१० ॥

मकरन्दझरीमज्जन्मिलिन्दकुलसंकुलाम् ।
महापद्माटवीं वन्दे यशसा संपरीवृताम् ॥११ ॥

तत्रैव चिन्तामणिघोरणार्चिभि-
र्विनिर्मितं रोपितरत्नशृङ्गम् ।
भजे भवानीभवनावतंस-
मादित्यर्णं तमसः परस्तात् ॥१२ ॥

मुनिभिः स्वात्मलाभाय यच्चक्रं हृदि सेव्यते ।
तत्र पश्यामि बुद्ध्या तदक्षरे परमे व्योमन् ॥१३ ॥

पञ्चब्रह्ममयो मञ्चस्तत्र यो बिन्दुमध्यगः ।
तव कामेशि वासोऽयमायुष्मन्तं करोतु माम् ॥१४ ॥

नानारत्नगुलुच्छालीकान्तिकिम्मीरितोदरम् ।
विमृशामि वितानं तेऽतिश्लक्ष्णमतिलोमशम् ॥१५ ॥

पर्यङ्कतल्पोपरि दर्शनीयं सबाणचापाङ्कुशपाशपाणिम् ।
अशेषभूषारमणीयमीडे त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तम् ॥१६ ॥

जटारुणं चन्द्रकलाललामम् उद्वेललावण्यकलाभिरामम् ।
कामेश्वरं कामशरासनाङ्कं समस्तसाक्षिं तमसः परस्तात् ॥१७ ॥

तत्र कामेशवामाङ्के खेलन्तीमलिकुन्तलाम् ।
सच्चिदानन्दलहरीं महालक्ष्मीमुपास्महे ॥१८ ॥

चारुगोरोचनापङ्कजम्बालितघनस्तनीम् ।
नमामि त्वामहं लोकमातरं पद्मालिनीम् ॥१९ ॥

शिवे नमन्निर्जरकुञ्जरासुर-
प्रतोलिकामौलिमरीचिवीचिभिः ।
इदं तव क्षालनजातसौभगं
चरणं नो लोके सुधितां दधातु ॥२० ॥

कल्पस्यादौ कारणेशानपि त्रीन्
स्रष्टुं देवि त्रीन्गुणानादधानाम् ।
सेवे नित्यं श्रेयसे भूयसे त्वा-
मजामेकां लोहितशुक्लकृष्णाम् ॥२१ ॥

केशोद्भूतैरद्भुतामोदपूरै-
राशावृन्दं सान्द्रमापूरयन्तीम् ।
त्वामानम्य त्वत्प्रसादात्स्वयंभू-
रस्मान्मायी सृजते विश्वमेतत् ॥२२ ॥

अर्धोन्मीलद्यौवनोद्दामदर्पां
दिव्याकल्पैरर्पयन्तीं मयूखान् ।
देवि ध्यात्वा त्वां पुरा कैटभारि-
र्विश्वं बिभर्ति भुवनस्य नाभिः ॥२३ ॥

कह्लारश्रीमञ्जरीपुरञ्जरीतिं
धिक्कुर्वन्तीमम्ब ते पाटलिम्ना ।
मूर्तिं ध्यात्वा शाश्वतीं भूतिमाय-
न्निन्द्रो राजा जगतो य ईशे ॥२४ ॥

देवतान्तरमन्त्रौघजपश्रीफलभूतया ।
जापकस्तव देव्यन्ते विद्यया विन्दतेऽमृतम् ॥२५ ॥

पुंस्कोकिलकलक्वाणकोमलालापशालिनि ।
भद्राणि कुरु मे मातर्दुरितानि परासुव ॥२६ ॥

अन्तेवासिन्नस्ति चेत्ते मुमुक्षा
वक्ष्ये युक्तिं मुक्तसर्वैषणः सन् ।
सद्भ्यः साक्षात्सुन्दरीं ज्ञप्तिरूपां
श्रद्धाभक्तिध्यानयोगादवेहि ॥२७ ॥

षोढान्यासादिदेवैश्च सेविता चक्रमध्यगा ।
कामेशमहिषी भूयः षोडशी शर्म यच्छतु ॥२८ ॥

शान्तो दान्तो देशिकेन्द्रं प्रणम्य
तस्यादेशात्तारकं मन्त्रतत्त्वम् ।
जानीते चेदम्ब धन्यः समानं
नातः परं वेदितव्यं हि किञ्चित् ॥२९ ॥

त्वमेव कारणं कार्यं क्रिया ज्ञानं त्वमेव च ।
त्वामम्ब न विना किञ्चित्त्वयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥३० ॥
परागमद्रीन्द्रसुते तवाङ्घ्रि-
सरोजयोरम्ब दधामि मूर्ध्ना ।
अलङ्कृतं वेदवधूशिरोभि-
र्यतो जातो भुवनानि विश्वा ॥३१ ॥
दुष्टान्दैत्यान्हन्तुकामां महर्षी-
न्शिष्टानन्यान्पातुकामां कराब्जैः ।
अष्टाभिस्त्वां सायुधैर्भासमानां
दुर्गां देवीँशरणमहं प्रपद्ये ॥३२ ॥
देवि सर्वानवद्याङ्गि त्वामनादृत्य ये क्रियाः ।
कुर्वन्ति निष्फलास्तेषामदुग्धा इव धेनवः ॥३३ ॥
नाहं मन्ये दैवतं मान्यमन्य-
त्त्वत्पादाब्जादम्बिके कुम्भजाद्याः ।
ये ध्यातारो भक्तिसंशुद्धचित्ताः
परामृतात्परिमुच्यन्ति सर्वे ॥३४ ॥
कुर्वाणोऽपि दुरारम्भांस्तव नामानि शाम्भवि ।
प्रजपन्नेति मायान्तमति मृत्युं तराम्यहम् ॥३५ ॥
कल्याणि त्वं कुन्दहासप्रकाशै-
रन्तर्ध्वान्तं नाशयन्ती क्षणेन ।
हन्तास्माकं ध्यायतां त्वत्पदाब्ज-
मुच्चतिष्ठ महते सौभगाय ॥३६ ॥
तितीर्षया भवाम्भोधेर्हयग्रीवादयः पुरा ।
अप्रमत्ता भवत्पूजां सुविद्वाँसो वितेनिरे ॥३७ ॥
मद्वंश्या ये दुराचारा ये च सन्मार्गगामिनः ।
भवत्याः कृपया सर्वे सुवर्यन्तु यजमानाः ॥३८ ॥

श्रीचक्रस्थां शाश्वतैश्वर्यदात्रीं
पौण्ड्रं चापं पुष्पबाणान्दधानाम् ।
बन्धूकाभां भावयामि त्रिनेत्रां
तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीम् ॥३९॥

भवानि तव पादाब्जनिर्णेजनपवित्रिताः ।
भवामयप्रशान्त्यै त्वामपो याचामि भेषजम् ॥४०॥

चिदानन्दसुधाम्भोधेस्तवानन्दलवोऽस्ति यः ।
कारणेशैस्त्रिभिः साकं तद्विश्वमुपजीवति ॥४१॥

नो वा यागैर्नैव पूर्तादिकृत्यै-
र्नो वा जप्यैर्नो महद्भिस्तपोभिः ।
नो वा योगैः क्लेशकृद्भिः सुमेधा
निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति ॥४२॥

प्रातः पाहि महाविद्ये मध्याह्ने तु मृडप्रिये ।
सायं पाहि जगद्वन्द्ये पुनर्नः पाहि विश्वतः ॥४३॥

बन्धूकाभैर्भानुभिर्भासयन्ती
विश्वं शश्वत्तुङ्गपीनस्तनार्धा ।
लावण्याब्धेः सुन्दरि त्वं प्रसादा-
दायुः प्रजाँरयिमस्मासु धेहि ॥४४॥

कर्णाकर्णय मे तत्त्वं या चिच्छक्तिरितीर्यते ।
त्रिर्वदामि मुमुक्षूणां सा काष्ठा सा परा गतिः ॥४५॥

वाग्देवीति त्वां वदन्त्यम्ब केचि-
ल्लक्ष्मीर्गौरीत्येवमन्येऽप्युशन्ति ।
शश्वन्मातः प्रत्यगद्वैतरूपां
शंसन्ति केचिन्निविदां जनाः ॥४६॥

ललितेति सुधापूरमाधुरीघोरमम्बिके ।
तव नामास्ति यत्तेन जिह्वा मे मधुमत्तमा ॥४७॥

ये सम्पन्नाः साधनैस्तैश्चतुर्भिः
शुश्रूषाभिर्देशिकं प्रीणयन्ति ।
सम्यग्विद्वाञ्शुद्धसत्त्वान्तराणां
तेषामेवैतां ब्रह्मविद्यां वदेत् ॥४८॥

अभिचारादिभिः कृत्यां यः प्रेरयति मय्युमे ।
तव हुंकारसंत्रस्ता प्रत्यकर्तारमृच्छतु ॥४९॥

जगत्यवित्रि मामिकामपाहराशु दुर्जराम् ।
प्रसीद मे दयाधुनि प्रशस्तिमम्ब नः स्कृधि ॥५०॥

कदम्बारुणमम्बाया रूपं चिन्तय चित्त मे ।
मुञ्च पापीयसीं निष्ठां मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥५१॥

भण्डभण्डनलीलायां रक्तचन्दनपङ्किलः ।
अंकुशस्तव तं हन्याद्यश्च नो द्वेषते जनः ॥५२॥

रे रे चित्त त्वं वृथा शोकसिन्धौ
मज्जस्यन्तर्वच्युपायं विमुक्त्यै ।
देव्याः पादौ पूजयैकाक्षरेण
तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योम् ॥५३॥

चञ्चद्बालातपज्योत्स्नाकलामण्डलशालिने ।
ऐक्षवाय नमो मातर्बाहुभ्यां तव धन्वने ॥५४॥

तामेवाद्यां ब्रह्मविद्यामुपासे
मूर्तैर्वेदैः स्तूयमानां भवानीम् ।
हन्त स्वात्मत्वेन यां मुक्तिकामो
मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति ॥५५॥

शरणं करवाण्यम्ब चरणं तव सुन्दरि ।
शपे त्वत्पादुकाभ्यां मे नान्यः पन्था अयनाय ॥५६॥

रत्नच्छत्रैश्चामरैर्दर्पणाद्यै-
श्चक्रेशानीं सर्वदोपाचरन्त्यः ।
योगिन्योऽन्याः शक्तयश्चाणिमाद्या
यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५७॥

दरिद्रं मां विजानीहि सर्वज्ञाऽसि यतः शिवे ।
दूरीकृत्याशु दुरितमथा नो वर्धया रयिम् ॥५८ ॥
महेश्वरि महामन्त्रकूटत्रयकलेवरे ।
कादिविद्याक्षरश्रेणिमुशन्तस्त्वा हवामहे ॥५९ ॥
मूलाधारादूर्ध्वमन्तश्चरन्तीं
भित्त्वा ग्रन्थीन्मूर्ध्नि निर्यत्सुधार्द्राम् ।
पश्यन्तस्त्वां ये च तृप्तिं लभन्ते
तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम् ॥६० ॥
मह्यं दुह्यन्ति ये मातस्त्वद्ध्यानासक्तचेतसे ।
तानम्ब सायकैरेभिरव ब्रह्मद्विषो जहि ॥६१ ॥
त्वद्भक्तानामम्ब शान्तैषणानां
ब्रह्मिष्ठानां दृष्टिपातेन पूतः ।
पापीयानप्यावृतः स्वर्वधूभिः
शोकातिगो मोदते स्वर्गलोके ॥६२ ॥
सन्तु विद्या जगत्यस्मिन्संसारभ्रमहेतवः ।
भजेऽहं त्वां यया विद्वान्विद्ययामृतमश्नुते ॥६३ ॥
विद्वन्मुख्यैर्विद्रुमाभं विशाल-
श्रोणीशिञ्जन्मेखलाकिङ्किणीकम् ।
चन्द्रोत्तंसं चिन्मयं वस्तु किंचि-
द्विद्धि त्वमेतन्निहितं गुहायाम् ॥६४ ॥
न विस्मरामि चिन्मूर्तिमिक्षुकोदण्डशालिनीम् ।
मुनयः सनकप्रेष्ठास्तामाहुः परमां गतिम् ॥६५ ॥
चक्षुःप्रेङ्खत्प्रेमकारुण्यधारां
हंसज्योत्स्नापूरहृष्यच्चकोराम् ।
यामाश्लिष्यन्मोदते देवदेवः
सा नो देवी सुहवा शर्म यच्छतु ॥६६ ॥

मुञ्च वञ्चकतां चित्तं पामरं चापि दैवतम् ।
गृहाण पदमम्बाया एतदालम्बनं परम् ॥६७ ॥
का मे भीतिः का क्षतिः किं दुरापं
कामेशाङ्कोत्तुङ्गपर्यङ्कसंस्थाम् ।
तत्त्वातीतामच्युतानन्ददात्रीं
देवीमहं निऋतिं वन्दमानः ॥६८ ॥
चिन्तामणिमयोत्तंसकान्तिकञ्चुकितानने ।
ललिते त्वां सकृन्नत्वा न बिभेति कुतश्चन ॥६९ ॥
तारुण्योत्तुङ्गितकुचे लावण्योल्लासितेक्षणे ।
तवाज्ञयैव कामाद्या मास्मान्प्रापन्नरातयः ॥७० ॥
आकर्णाकृष्टकामास्त्रसंजातं तापमम्ब मे ।
आचामतु कटाक्षस्ते पर्जन्यो वृष्टिमानिव ॥७१ ॥
कुर्वे गर्वेणापचारानपारान्यद्यप्यम्ब त्वत्पदाब्जं तथापि ।
मन्ये धन्ये देवि विद्यावलम्बं मातेव पुत्रं बिभृतास्वेनम् ॥७२ ॥
यथोपास्तिक्षतिर्न स्यात्तव चक्रस्य सुन्दरि ।
कृपया कुरु कल्याणि तथा मे स्वस्तिरायुषी ॥७३ ॥
चक्रं सेवे तारकं सर्वसिद्धयै
श्रीमन्मातः सिद्धयश्चाणिमाद्याः ।
नित्या मुद्राः शक्तयश्चाङ्गदेव्यो
यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः ॥७४ ॥
सुकुमारे सुखाकारे सुनेत्रे सूक्ष्ममध्यमे ।
सुप्रसन्ना भव शिवे सुमृडीका सरस्वती ॥७५ ॥
विद्युद्वल्लीकन्दलीं कल्पयन्तीं
मूर्तिं स्फूर्त्या पङ्कजं धारयन्तीम् ।
ध्यायन्हि त्वां जायते सार्वभौमो
विश्वा आशाः पृतनाः संजयञ्जन् ॥७६ ॥

अविज्ञाय परां शक्तिमात्मभूतां महेश्वरीम् ।
अहो पतन्ति निरयेष्वेके चात्महनो जनाः ॥७७

सिन्दूराभैः सुन्दरैरंशुबृन्दै-
र्लाक्षालक्ष्म्यां मज्जयन्तीं जगन्ति ।
हेरम्बाम्ब त्वां हृदा लम्बते य-
स्तस्मै विशः स्वयमेवानमन्ते ॥७८ ॥

तव तत्त्वं विमृशतां प्रत्यगद्वैतलक्षणम् ।
चिदानन्दघनादन्यन्नेह नानास्ति किंचन ॥७९ ॥

कण्ठात्कुण्डलिनीं नीत्वा सहस्रारं शिवे तव ।
न पुनर्जायते गर्भे सुमेधा अमृतोक्षितः ॥८० ॥

त्वत्पादुकानुसन्धानप्राप्तसर्वात्मतादृशि ।
पूर्णाहंकृतिमत्यस्मिन्न कर्म लिप्यते नरे ॥८१ ॥

तवानुग्रहनिर्भिन्नहृदयग्रन्थिरद्रिजे ।
स्वात्मत्वेन जगन्मत्वा ततो न विजुगुप्सते ॥८२ ॥

क़दा वसुदलोपेते त्रिकोणनवकान्विते ।
आवाहयामि चक्रे त्वां हर्यामां श्रियमैश्वरीम् ॥८३ ॥

ह्रीमित्येकं तावकं वाचकार्णं
यज्जिह्वाग्रे देवि जागर्ति किंचित् ।
को वायं स्यात्कामकामस्त्रिलोक्यां
सर्वेऽस्मै देवा बलिमावहन्ति ॥८४ ॥

नाकस्त्रिणां किन्नरीणां नृपाणा-
मप्याकर्षी चेतसा चिन्तनीयम् ।
त्वत्पाणिस्थं कुंकुमाभं शिवे यं
द्विष्मस्तस्मिन्प्रति मुञ्चामि पाशम् ॥८५ ॥

नूनं सिंहासनेशैश्वर्यास्तवाज्ञां शिरसा वहन्।
भयेन पवमानोऽयं सर्वा दिशोऽनुविधावति ॥८६॥

त्रिकलाढ्यां त्रिहल्लेखां द्विहंसस्वरभूषिताम्।
यो जपत्यम्ब ते विद्यां सोऽक्षरः परमः स्वराट् ॥८७॥

दारिद्र्याब्धौ देवि मग्नोऽपि शश्व-
द्वाचा याचे नाहमम्ब त्वदन्यम्।
तस्मादस्मद्वाञ्छितं पूरयैत-
दुषा सा नक्ता सुदुघेव धेनुः ॥८८॥

यो वा यद्यत्कामनाकृष्टचित्तः
स्तुत्वोपास्ते देवि ते चक्रविद्याम्।
कल्याणानामालयः कालयोगा-
त्तं तं लोकं जयते तांश्च कामान् ॥८९॥

साधकः सततं कुर्यादैक्यं श्रीचक्रदेहयोः।
तथा देव्यात्मनोरैक्यमेतावदनुशासनम् ॥९०॥

हस्ताम्भोजप्रोल्लसच्चामराभ्यां
श्रीवाणीभ्यां पार्श्वयोर्बीज्यमानाम्।
श्रीसम्राज्ञि त्वां सदाऽऽलोकयेयं
सदा सद्भिः सेव्यमानां निगूढाम् ॥९१॥

इष्टानिष्टप्राप्तिविच्छित्तिहेतुः
स्तोतुं वाचां क्लृप्तिरित्येव मन्ये।
त्वद्रूपं हि स्वानुभूत्येकवेद्यं
न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा ॥९२॥

हरस्वरैश्चतुर्वर्गपदं मन्त्रं सबिन्दुकम्।
देव्या जपत विप्रेन्द्रा अन्या वाचो विमुञ्चथ ॥९३॥

यस्ते राकाचन्द्रबिम्बासनस्थां
पीयूषाब्धिं कल्पयन्तीं मयूखैः ।
मूर्तिं भक्त्या ध्यायते हृत्सरोजे
न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः ॥९४॥

तुभ्यं मातर्योऽञ्जलिं मूर्ध्नि धत्ते
मौलिश्रेण्या भूभुजस्ते नमन्ति ।
यः स्तौति त्वामम्ब चिद्वल्लि वाचा
तं धीरासः कवय उन्नयन्ति ॥९५॥

वैरिञ्चौघैर्विष्णुरुद्रेन्द्रबृन्दैर्दुर्गाकालीभैरवीशक्तिसङ्घैः ।
यन्त्रेशि त्वं वर्तते स्तूयमाना न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकम् ॥९६॥

भूत्यै भवानि त्वां वन्दे सुराः शतमखादयः ।
त्वामानम्य समृद्धाः स्युरायो धामानि दिव्यानि ॥९७॥

पुष्पवत्फुल्लताटङ्कं प्रातरादित्यपाटलाम् ।
यस्त्वामन्तः स्मरत्यम्ब तस्य देवा असन्वशे ॥९८॥

वश्ये विद्रुमसङ्काशां विद्यायां विशदप्रभाम् ।
त्वामम्ब भावयेद्भूत्यै सुवर्णां हेममालिनीम् ॥९९॥

वामाङ्कस्थामीशितुर्दीप्यमानां
भूषावृन्दैरिन्दुरेखावतंसाम् ।
यस्त्वां पश्यन्संततं नैव तृप्तः
तस्मै च देवि वषडस्तु तुभ्यम् ॥१००॥

नवनीपवनीवासलालसोत्तरमानसे ।
श्रृङ्गारदेवते मातः श्रियं वासय मे कुले ॥१०१॥

भक्त्याऽभक्त्या वाऽपि पद्यावसान-
श्रुत्या स्तुत्या चैतया स्तौति यस्त्वाम् ।
तस्य क्षिप्रं त्वत्प्रसादेन मातः
सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥१०२॥

बालिशेन मया प्रोक्तमपि वात्सल्यशालिनोः ।
आनन्दमादिदम्पत्योरिमा वर्धन्तु वाङ्गिरः ॥१०३ ॥
माधुरीसौरभावासचापसायकधारिणीम् ।
देवीं ध्यायन्पठेदेतत्सर्वकामार्थसिद्धये ॥१०४ ॥
स्तोत्रमेतत्प्रजपतस्तव त्रिपुरसुन्दरि ।
अनुद्वीक्ष्य भयाद्दूरं मृत्युर्धावति पञ्चमः ॥१०५ ॥
यः पठति स्तुतिमेतां विद्यावन्तं तमम्ब धनवन्तम् ।
कुरु देवि यशस्वन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु ॥१०६ ॥
ये श्रृण्वन्ति स्तुतिमिमां तव देव्यनसूयकाः ।
तेभ्यो देहि श्रियं विद्यामुद्वर्च उत्तनूबलम् ॥१०७ ॥
त्वामेवाहं स्तौमि नित्यं प्रणौमि
श्रीविद्येशां वच्मि सञ्चिन्तयामि ।
अध्यास्ते या विश्वमाता विराजो
हृत्पुण्डरीकं विरजं विशुद्धम् ॥१०८ ॥
शङ्करेण रचितं स्तवोत्तमं
यः पठेज्जगति भक्तिमान्नरः ।
तस्य सिद्धिरतुला भवेद्ध्रुवा
सुन्दरी च सततं प्रसीदति ॥१०९ ॥
यत्रैव यत्रैव मनो मदीयं
तत्रैव तत्रैव तव स्वरूपम् ।
यत्रैव यत्रैव शिरो मदीयं
तत्रैव तत्रैव पदद्वयं ते ॥११० ॥

॥ इति श्रीत्रिपुरसुन्दरीवेदपादस्तोत्रम् ॥

■

ज्ञान-कालिका-स्तोत्रम्

[त्रिपुरारहस्य में वर्णित इस स्तोत्र के माहात्म्य में कहा गया है— माँ ! तेरी आराधना के अनेक और विचित्र मार्ग हैं, जिनमें किसी से भी तुम्हारी आराधना की जा सकती है, जैसे समस्त नदियों का जल सागर स्वीकार करता है, वैसे तू भी समस्त प्रकार से की गई अपनी आराधना स्वीकार करती है । अतः माँ मेरा षट्पद मन सदा तुम्हारे चरणों में लगा रहे ।]

शिवे देवि संवित्सुधासागराऽऽत्मस्वरूपाऽ-
सि सर्वान्तराऽऽत्मैकरूपा ।
न किञ्चिद् विना त्वत्कलामस्ति लोके
ततः सत्स्वरूपाऽसि सत्येऽप्यसत्ये ॥१ ॥

असत्यं पुनः सत्यमन्ये द्विरूपं द्वयातीतमेके जगुः सर्वमेतत् ।
न ते तां विदुर्मायया मोहितास्ते चिदानन्दरूपा त्वमेवाऽसि सर्वम् ॥२ ॥
क्षणानां क्रमैर्भिन्नरूपां धराद्यैर्मितामाहुरेके तमोमात्ररूपाम् ।
तमोदीप्तिसंभिन्नरूपाञ्च शान्तस्वरूपां महेशीं विदुस्त्वां न तेऽज्ञाः ॥३ ॥
शिवादिक्षितिप्रान्ततत्त्वावलिर्या विचित्रा यदीये शरीरे विभाति ।
पटे चित्रकल्पा जले सेन्दुतारा नभोवत्परा सा त्वमेवाऽसि सर्वा ॥४ ॥
अभिन्नं विभिन्नं बहिर्वाऽन्तरे वा विभाति प्रकाशस्तमो वाऽपि सर्वम् ।
ऋते त्वां चितिं येन नो भाति किञ्चित्ततस्त्वं समस्तं न किञ्चित्त्वदन्यत् ॥५ ॥
निरुध्याऽन्तरङ्गं विलाप्याऽक्षसङ्गं परित्यज्य सर्वत्र कामादिभावम् ।
स्थितानां महायोगिनां चित्तभूमौ चिदानन्दरूपा त्वमेका विभासि ॥६ ॥
तथाऽन्ये मनः सेन्द्रियं सञ्चरच्चाऽप्यसंयम्य तन्मार्गके जागरूकाः ।
स्वसंवित्सुधाऽऽदर्शदेहे स्फुरन्तं महायोगिनाथाः प्रपश्यन्ति सर्वम् ॥७ ॥
निरुक्ते महासारमार्गेऽतिसूक्ष्मे गतिं ये न विन्दन्ति मूढस्वभावाः ।
जनान् तान् समुद्धर्तुमक्षावगम्यं बहिः स्थूलरूपं विभिन्नं विभर्षि ॥८ ॥

तदाराधनेऽनेकमार्गान् विचित्रान् विधायाऽथ मार्गेण केनापि यातम् ।
नदीवारि सिन्धुर्यथा स्वीकरोति प्रदाय स्वभावं नु स्वात्मीकरोषि ॥९ ॥
तथा तासु मूर्तिष्वनेकासु मुख्या धनुर्बाणपाशाङ्कुशाढ्यैव मूर्तिः ।
शरीरेषु मूर्धेव ये तां भजेयुर्जनास्त्रैपुरीं मूर्तिमत्युत्तमास्ते ॥१० ॥
जनान् दुःखसिन्धोः समुद्धर्तुकामा पथस्ताननेकान् प्रदिश्य प्रकृष्टान् ।
दयार्द्रस्वभावेति विख्यातकीर्तिस्त्वमेकैव पूज्या पराशक्तिरूपा ॥११ ॥
सदा ते पदाब्जे मनः षट्पदो मे पिबन् तद्रसं निर्वृतः संस्थितोऽस्तु ।
इति प्रार्थनां मे निशम्याऽऽशु मातर्विधेहि स्वदृष्टिं दयार्द्रामपीषत् ॥१२ ॥

इति संस्तुत्य सा गौरी त्रिपुरां परमेश्वरीम् ।
स्तोत्रेण ज्ञानकलिकाख्येन ध्यानं समास्थिता ॥१३ ॥

(इति ज्ञान कालिका स्त्रोत्रम्)

■

मकरन्दस्तवराजस्तोत्रम्

[रुद्रयामल तन्त्र के भगवान् शिव परमात्मा द्वारा कहे गए इस स्तोत्र में षोडशार्णादि पाठ किया गया है । भगवती की विधिपूर्वक अर्चा करने के पश्चात् नित्यप्रति इस स्तोत्र का पाठ करने वाले को देवी-सायुज्य की प्राप्ति होती है ।]

ओं अस्य श्री महात्रिपुरसुन्दरी-मन्त्रस्य ब्रह्मविद्यायाः दक्षिणामूर्ति ऋषये नमः । शिरसि ॥ अव्यक्तगायत्री छन्दसे नमः । मुखे ॥ श्रीमत् त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः । हृदि ॥ अं बीजाय नमः । नाभौ ॥ आं शक्तये नमः । गुह्ये । सौः कीलकाय नमः । पादयोः ॥ दृक् बीजं, दशा शक्तिः ॥ आनन्दं बीजं, आनन्दवर्गः शक्तिः ॥ शिवो बीजं, विष्णुः शक्तिः ॥ कामो बीजं, कामेश्वरी शक्तिः ॥ पुल्लिंगं बीजं, स्त्रीलिंगं शक्तिः ॥ कादयो बीजं आदयो शक्तयः ॥ उदात्तं बीजं, अनुदात्तं शक्तिः ॥ परमात्मा क्षेत्रम् ॥ ब्रह्मा बलस्थानम् ॥ विकृता सुषुम्ना नाडी ॥ आगस्त्यं गोत्रम् ॥ भगवान् वसिष्ठो गुरुः ॥ दशमुद्रा ब्रह्मोपासनसौभाग्यं विदितायां विनियोगः । सर्वाङ्गे ॥ एवं ऋष्यादिकं स्मृत्वा शिरःप्रभृति विन्यस्य करषडंगं न्यसेत् ॥ तद्यथा ॥

(i) श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः (ii) ओं ह्रीं श्रीं (iii) कएईलह्रीं (iv) हसकहलह्रीं (v) सकलह्रीं (vi) सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं ॥ अनेन प्रकारेण करषडंगन्यासं विधाय ध्यायेत् ॥ ध्यानम् ॥

बालार्क-मण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।
पाशांकुशशरं चापं धारयन्तीं शिवां भजे ॥

इत्यादि पठित्वा ध्यानं विधाय मानसोपचारैः पूजयित्वा स्तवराजं पठेत् । ।

ओं श्रीं बीजे नादबिन्दुद्वितय-शशिकलाकार-रूपस्वरूपे
मातर्मे देहि ऋद्धिं जहि जहि दुरितं पाहि मां दीननाथे ।
अज्ञानध्वान्तराशिं क्षपय सुरुचिरे प्रोल्लसत्पादपद्मे
ब्रह्मेशाद्यैः सुरेन्द्रैः सुरगणनमिते संस्तुते त्वां नमामि ॥१ ॥

लज्जा-बीजस्वरूपे त्रिजगति वरदे व्रीडया या स्थितेयं
तां नित्यां शंभुभक्तिं त्रिभुवन-जननीं पालयित्रीं जगच्च ।
सर्वाशानां निदानं सकलगुणमयीं सच्चिदानन्दरूपां
तेजो-रूपां प्रदीप्तां त्रिभुवननमितां ज्ञानदात्रीं नमामि ॥२ ॥
क्लीं बीजे कामरूपे धृतकुसुम-धनुर्बाणपाशांकुशां तां
वन्दे भास्वत् सरोजोदरनिभ-वपुषां मोहयन्तीं त्रिलोकीम् ।
कांचीमंजीरहारांगदमुकुटलसत् स्वर्णमाणिक्यरत्नै-
र्भास्वत् सिन्दूरवक्त्रां स्तनभरनमितां क्षीणमध्यां त्रिणेत्राम् ॥३ ॥
ऐं वाणी बीजरूपे त्रिभुवनजडता ध्वान्तविध्वंसिनी त्वं
शैवब्रह्मस्वरूपा श्रुतिभिरनुपदं गीयमाना त्वमेव ।
मातर्मे देहि बुद्धिं मम सदसि परद्वन्द्व संक्षोभकर्त्रीं
ऐन्द्रीं वाचस्परे तप्यति विविधपदं त्वत्पदाम्भोजमीडे ॥४ ॥
सौः शक्तिः कार्यमन्ते घटपट-प्रभृतौ दृष्टहेतोः सहाया
माया काचिन्महत्तत्त्व-प्रभृति-परिणता मूलभूता त्वमेव ।
केचिद्ब्राह्यप्रपंचा मणिनिवहतनौ तन्त्रभूता त्वमेव
विद्या जन्मादिबृन्दं क्षपयति जगतां मेनिरे शुद्धभावाः ॥५ ॥
ओं मातस्ते नमस्ते श्रुति-ग्रथितगुरु-त्र्यक्षर-ब्रह्मरूपे
मिथ्या-मोहान्धकारे पतितमनुदिनं पाहि मां भक्तिहीनम् ।
मोह-क्रोध-प्रलोभ-प्रमथ-मदचयैः शत्रुभिः पीड्यतेऽसौ
पत्नी-पुत्रादि-भृत्यैर्नत-विविधजनैः शृंखलाभिर्निबद्धः ॥६ ॥
ह्रींकारे ह्रींस्वरूपे मम दह दुरितं व्याधि-दारिद्र्य-बीजं
मातस्त्वत्पादपद्म-द्वितय-परिसरे प्रार्थये भक्तिलेशम् ।
त्वं वाणी त्वं च लक्ष्मीस्त्वमसि गिरिसुता ब्रह्म-विष्णुस्मरारे
श्चित्तं नित्यं शरण्यं कृतमिह जननि त्वत्कटाक्षैकवृन्दैः ॥७ ॥
श्रींकारे श्रीस्वरूपे वितर मयि धनं धान्य-हस्त्यश्वयुक्तं
स्वर्णं माणिक्यरत्नाद्यभिलषितयुतं त्वत्पदार्चासुयोग्यम् ।
विद्या त्वं देहि मोक्षं भवभयदहने देवि दन्दह्यमाने
योगेन्द्रैः सेव्यमाना हत-कलुष-चयै-र्मोक्षमन्वेषयद्भिः ॥८ ॥

कामो योनिश्चतुर्थः स्वरत्रिदशपति-र्भौवनेशी च बीजं
तावद्वर्णावली त्वं नतजनवरदे भक्तिमीहे शरण्ये ।
त्वत्पादाम्भोज-युग्मं हृदयसरसिजे सन्निधायैकचित्ते
ध्यात्वा तत्कर्मबन्धं त्वतिविमलधियो युक्तिवन्तो मुनीन्द्राः ॥९ ॥

ब्रह्मेन्दुः कामदेवो वियदमरगुरु-र्भौवनेशी च बीजं
तावद्वर्ण-स्वरूपै-र्घटिततनुलतां त्वां प्रपन्नोऽस्मि मातः ।
विष्णु-ब्रह्मेशमूर्ति-स्थित-मुकुटमणि-प्रोल्लसत्पादपद्मां
योगीन्द्रै-र्ध्येयपादांबुरुह-करनख-द्योत-विद्योतितां त्वाम् ॥१० ॥

इन्दुः कामः सुरेशा वियदनल-लसद्वामनेत्रार्धचंद्रै-
र्युक्तं यद्बीजमेतत्तदपि तव वपुः सच्चिदानन्दरूपम् ।
बाला त्वं भैरवी त्वं त्रिभुवनजननी तारिणी नीलवर्णा
त्वं गौरी त्वं च काली सकलमनुमयी त्वं महामोक्षदात्री ॥११ ॥

सौःकारो बीजराजस्त्रिभुवन-जननी शक्तिराद्या त्वमेव
त्वद्युक्तः शम्भुरेषः प्रभवति चलितुं त्वां बिना जाड्यवान् सः ।
ब्रह्मा विष्णुः कपर्दी जननि कृपालेश-मात्राच्छरीरं
गृहणन्तः सृष्टिरक्षा-प्रलयमभिलसच्चक्रिरे त्वद्वशस्थाः ॥१२ ॥

ऐं बीजं वाग्भवाख्यं त्वमिह जडमिति ध्वान्त-चक्षुः प्रकाशान्
मातः कारुण्यधाराममृतवलिदृशा पश्य मां दीननाथे ।
मोह्यन्ते मोहितास्ते तव जननि महामायया बद्धचित्ताः
कारुण्यं प्रार्थयन्ते तव पदयुगले ज्ञानवन्तो मुनीन्द्राः ॥१३ ॥

क्लींकारो बीजरूपा तव जननि मनुश्लेष-मध्य-प्रवेशात्
साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपी मदनतनुलता ब्रह्मणो मोहकर्त्री ।
साज्ञानं स्मेरवक्त्राम्बुजकुहरलसत्सुप्त-पीयूषधारा
वेदाश्चत्वार एते तुहिनगिरिसुते प्राप्त-मीनेन्द्ररूपे ॥१४ ॥

ह्रींकारोंकाररूपा त्वमिह शशिमुखी ह्रींस्वरूपा त्वमेव
त्वं क्षान्तिस्त्वं च कान्तिर्हरिहरकमलोद्भूतरूपा त्वमेव ।
त्वं सिद्धिस्त्वं च ऋद्धिः स्मररिपुमनसस्त्व च संमोहयन्ती
विद्या त्वं मुक्तिहेतुर्भवजलधि-जनुर्दुःखहन्त्री त्वमेव ॥१५ ॥

श्रीबीजे श्रीस्वरूपे मधुरिपुमनसो मध्यमध्यासिता त्वं
मातस्त्वद्दृष्टिलेशादमरपतिरसौ प्राप्तवान् बुद्धिमेषाम् ।
इत्येवं षोडशार्णां सरसमनुदिनं स्वर्गमोक्षैकहेतुं
सिद्धीरष्टौ लभन्ते य इह मनुवरं श्रेष्ठमेनं भजन्ते ॥१६ ॥

॥ इति श्रीरुद्रयामले शिवोक्तं षोडशार्णाद्य-मकरन्दस्तवराजस्तोम् ॥

■

सकलजननीस्तोत्रम्

[प्रस्तुत स्तोत्र में भगवती महात्रिपुरसुन्दरी को सकलविश्वप्रपञ्च की माता के रूप में स्वीकार किया गया है । भक्त कहता है— माँ, मैं नहीं जानता कि कुत्तों, आग और पक्षियों का भोजन कब, कौन, कहाँ और कैसे बनाता है । मुझे विश्वास है कि आप ही सारे विश्वप्रपञ्च की जनयित्री तथा पालनकर्त्री हैं, अतः मेरे इस विश्वास की रक्षा करे । मैं आपकी शरण में हूँ ।]

अजानन्तो यान्ति क्षयमवशमन्योन्यकलहैः
अमी मायाग्रन्थौ तव परिलुठन्तस्समयिनः ।
जगन्मातः ! जन्मज्वरभयतमःकौमुदि ! वयं
नमस्ते कुर्वाणाश्शरणमुपयामो भगवतीम् ॥१ ॥

वचस्तर्कागम्यस्वरसपरमानन्दविभव-
प्रबोधाकाराय द्युतितुलितनीलोत्पलरुचे ।
शिवाद्याराध्याय स्तनभरविनम्राय सततं
नमस्तस्मै कस्मैचन भवतु मुग्धाय महसे ॥२ ॥

अनाद्यनताभेदप्रणयरसिकापि प्रणयिनी
शिवस्यासीर्यत्त्वं परिणयविधौ देवि ! गृहिणी ।
सवित्री भूतानामपि यदुदभूश्शैलतनया
तदेतत्संसारप्रणयनमहानाटकमुखम् ॥३ ॥

ब्रुवन्त्येके तत्त्वं भगवति सदन्ये विदुरसत्
परे मातः ! प्राहुस्तव सदसदन्ये सुकवयः ।
परे नैतत्सर्वं समभिदधते देवि ! सुधियः
तदेतत्त्वन्मायाविलसितमशेषं ननु शिवे ॥४ ॥

लुठद्गुञ्जाहारस्तनभरनमन्मध्यलतिकां
उदञ्चद्घर्माम्भ:कणगुणितवक्त्राम्बुजरुचम्* ।
शिवं पार्थत्राणप्रवणमृगयाकारगुणितं
शिवामन्वग्यान्तीं शरणमहन्वेमि शबरीम् ॥५ ॥
मिथ:केशाकेशिप्रथननिधनास्तर्कघटना:
बहुश्रद्धाभक्तिप्रणतिविषयाश्शास्त्रविधय: ।
प्रसीद प्रत्यक्षीभव गिरिसुते ! देहि शरणं
निरालम्बं चेत: परिलुठति पारिप्लवमिदम् ॥६ ॥
शुनां वा वह्नेर्वा खगपरिषदो वा यदशनं
कदा केन क्वेति क्वचिदपि न कश्चित्कलयति ।
अमुष्मिन् विश्वासं विजहिहि ममाह्राय वपुषि
प्रपद्येथाश्चेत: ! सकलजननीमेव शरणम् ॥७ ॥
तटित्कोटिज्योतिर्द्युतिदलितषग्रन्थिगहनं
प्रविष्टं स्वाधारं पुनरपि सुधावृष्टिवपुषा ।
किमप्यष्टाविंशत्किरणसकलीभूतमनिशं
भजे धाम श्यामं कुचभरनतं बर्वरकचम् ॥८ ॥
चतुष्पत्रान्तषड्दलपुटभगान्तस्त्रिवलय-
स्फुरद्विद्युद्वह्निद्युमणिनियुताभद्युतिलते ।
षडश्रं भित्त्वाऽऽदौ दशदलमथ द्वादशदलं
कलाश्रं च द्व्यश्रं गतवति नमस्ते गिरिसुते ॥९ ॥
कुलं केचित्प्राहुर्वपुरकुलमन्ये तव बुधा:
परे तत्संभेदं समभिदधते कौलमपरे ।
चतुर्णामप्येषामुपरि किमपि प्राहुरपरे
महामाये ! तत्त्वं तव कथममी निश्चिनुमहे ॥१० ॥

---

१. नीलोत्पलरुचिम् - पा.

षडध्वारण्यानीं प्रलयरविकोटिप्रतिरुचा
रुचा भस्मीकृत्य स्वपदकमलप्रह्वशिरसाम् ।
वितन्वानश्शैवं किमपि वपुरिन्दीवररुचिः
कुचाभ्यामानम्रस्तव पुरुषकारो विजयते ॥११ ॥
प्रकाशानन्दाभ्यामविदितचरीं मध्यपदवीं
प्रविश्यैतद्द्वन्द्वं रविशशिसमाख्यं कवलयन् ।
प्रपद्योर्ध्वं नादं लयदहनभस्मीकृतकुलः
प्रसादात्ते जन्तुश्शिवमकुलमम्ब ! प्रविशति ॥१२ ॥
मनुष्यास्तिर्यञ्चो मरुत इति लोकत्रयमिदं
भवाम्भोधौ मग्नं त्रिगुणलहरीकोटिलुठितम् ।
कटाक्षश्चेद्यत्र क्वचन तव मातः करुणया
शरीरी सद्योऽयं व्रजति परमानन्दतनुताम् ॥१३ ॥
प्रियङ्गुश्यामाङ्गीमरुणतरवास किसलयां
समुन्मीलन्मुक्ताफलवहलनेपथ्यसुभगाम् ।
स्तनद्वन्द्वस्फारस्तबकनमितां कल्पलतिकां
सकृद्ध्यायन्तस्त्वां दधति शिवचिन्तामणिपदम् ॥१४ ॥
षडाधारावर्तैरपरिमितमन्त्रोर्मिपटलैः
लसन्मुद्राफेनैर्बहुविधनचलद्दैवतझषैः ।
क्रमस्रोतोभिस्त्वं वहसि परनादामृतनदी
भवानि ! प्रत्यग्रा शिवचिदमृताब्धिप्रणयिनी ॥१५ ॥
महीपाथोवह्निश्वसनवियदात्मेन्दुरविभिः
वपुर्भिर्य्यस्ताशैरपि तव कियानम्ब ! महिमा ।
अमून्यालोल्यन्ते भगवति ! न कुत्राप्यणुतमां
अवस्थां प्राप्तानि त्वयि तु परमव्योमवपुषि ॥१६ ॥

कलामाज्ञां प्रज्ञां समयमनुभूतिं समरसं
गुरुं पारम्पर्यं विनयमुपदेशं शिवपदम् ।
प्रमाणं निर्वाणं प्रकृतिमभिभूतिं परगुहां
विधिं विद्यामाहुस्सकलजननीमेव मुनयः ॥१७॥

प्रलीने शब्दौघे तदनु विरते बिन्दुविभवे
ततस्तत्त्वे चाष्टध्वनिभिरनपायिन्यधिगते ।
श्रिते शाक्ते पर्वण्यनुकलितचिन्मात्रगहनां
स्वसंवित्तिं योगी रसयति शिवाख्यां भगवतीम् ॥१८॥

परानन्दाकारां निरवधिशिवैश्वर्यवपुषं
निराकारं ज्ञानप्रकृतिमपरिच्छिन्नकरुणाम् ।
सवित्रीं लोकानां निरतिशयधामास्पदपदां
भवो वा मोक्षो वा भवतु भवतीमेव भजताम् ॥१९॥

जगत्काये कृत्वा तदपि हृदये तच्च पुरुषे
पुमांसं बिन्दुस्थं तदपि वियदाख्ये च गहने ।
तदेतज्ज्ञानाख्ये तदपि परमानन्दगहने
महाव्योमाकारे त्वदनुभवशीलो विजयते ॥२०॥

विधे ! वेद्ये ! विद्ये ! विविधसमये ! वेदगुलिके !
विचित्रे ! विश्वाद्ये ! विनयसुलभे ! वेदजननि !
शिवज्ञे ! शूलस्थे ! शिवपदवदान्ये ! शिवनिधे !
शिवे ! मातः ! मह्यं त्वयि वितर भक्तिं निरुपमाम् ॥२१॥

विधेर्मुण्डं हृत्वा यदकुरुत पात्रं करतले
हरिं शूलप्रोतं यदगमयदंसाभरणताम् ।
अलंचक्रे कण्ठं यदपि गरलेनाम्ब ! गिरिशः
शिवस्थायाश्शक्तेस्तदिदमखिलं ते विलसितम् ॥२२॥

विरिञ्च्याख्या मातः ! सृजसि हरिसंज्ञा त्वमवसि
त्रिलोकीं रुद्राख्या हरसि विदधासीश्वरदशाम् ।
भवन्ती नादाख्या विहरसि च पाशौघदलनी
त्वमेवैकाऽनेका भवसि कृतिभेदैर्गिरिसुते ॥२३ ॥

मुनीनां चेतोभिः प्रमुदितकषायैरपि मनाक्
अशक्यं संस्प्रष्टुं चकितचकितैरम्ब ! सततम् ।
श्रुतीनां मूर्धानः प्रकृतिकठिनाः कोमलतरे
कथं ते विन्दन्ते पदकिसलये पार्वति ! पदम् ॥२४ ॥

तटिद्वल्लीं नित्याममृतसरितं पाररहितां
मलोत्तीर्णां ज्योत्स्नां प्रकृतिमगुणग्रन्थिगहनाम् ।
गिरां दूरां विद्यामविनतकुचां विश्वजननीं
अपर्यन्तां लक्ष्मीमभिदधति सन्तो भगवतीम् ॥२५ ॥

शरीरं क्षित्यम्भःप्रभृतिरचितं केवलमचित्
सुखं दुःखं चायं कलयति पुमांश्चेतन इति ।
स्फुटं जानानोऽपि प्रभवति न देही रचयितुं
शरीराहङ्कारं तव समयबाह्यो गिरिसुते ॥२६ ॥

पिता माता भ्राता सुहृदनुचरस्सद्म गृहिणी
वपुः क्षेत्रं मित्रं धनमपि यदा मां विजहति ।
तदा मे भिन्दाना सपदि भयमोहान्धतमसं
महाज्योत्स्ने ! मातः ! भव करुणया सन्निधिकरी ॥२७ ॥

सुता दक्षस्यादौ किल सकलमातः ! त्वमुदभूः
सदोषं तं हित्वा तदनु गिरिराजस्य दुहिता ।
अनाद्यन्ता शम्भोरपृथगपि शक्तिर्भगवती
विवाहाज्जायाऽसीत्यहह चरितं वेत्ति तव कः ॥२८ ॥

कणास्त्वद्दीप्तीनां रविशशिकृशानुप्रभृतयः
परं ब्रह्म क्षुद्रं तव नियतमानन्दकणिका ।
शिवादि क्षित्यन्तं त्रिवलयतनोस्सर्वमुदरे
तवास्ते भक्तस्य स्फुरसि हृदि चित्रं भगवति ॥२९ ॥

पुरः पश्चादन्तर्बहिरपरिमेयं परिमितं
परं स्थूलं सूक्ष्मं सकलमकलं गुह्यमगुहम् ।
दवीयो नेदीयस्सदसदिति विश्वं भगवती
सदा पश्यन्त्याख्यां वहसि भुवनक्षोभजननीम् ॥३० ॥

प्रविश्य त्वन्मार्गं सहजदयया देशिकदृशा
षडध्वध्वान्तौघच्छिदुरगणनातीतकरुणाम् ।
परामाज्ञाकारां सपदि शिवयन्तीं शिवतनुं
स्वमात्मानं धन्याश्चिरमुपलभन्ते भगवतीम् ॥३१ ॥

मयूखाः पूष्णीव ज्वलन इव तद्दीप्तिकणिकाः
पयोधौ कल्लोलाः प्रतिहतमहिम्नीव पृषतः ।
उदेत्योदेत्याम्ब ! त्वयि स निजैस्सात्त्विकगुणैः
भजन्ते तत्त्वौघाः प्रशममनुकल्पं परवशाः ॥३२ ॥

विधुर्विष्णुर्ब्रह्मा प्रकृतिरणुरात्मा दिनकरः
स्वभावो जैनेन्द्रस्सुगतमुनिराकाशमलिनः ।
शिवश्शक्तिश्चेति श्रुतिविषयतां तामुपगता
विकल्पैरेभिस्त्वामभिदधति सन्तो भगवतीम् ॥३३ ॥

शिवस्त्वं शक्तिस्त्वं त्वमसि समया त्वं समयिनी
त्वमात्मा त्वं दीक्षा त्वमयमणिमादिर्गुणगणः ।
अविद्या त्वं विद्या त्वमसि निखिलं त्वं किमपरं
पृथक्त्वं त्वत्तो भगवति न वीक्षामह इमे ॥३४ ॥

त्वयासौ जानीते रचयति भवत्यैव सततं
त्वयैवेच्छत्यम्ब ! त्वमसि निखिला यस्य तनवः ।
जगत्साम्यं शम्भोर्वहसि परमव्योमवपुषः
तथाप्यर्धं भूत्वा विहरसि शिवस्येति किमिदम् ॥३५ ॥

असङ्ख्यैः प्राचीनैर्जननि ! जननैः कर्मविलयात्
सकृज्जन्मन्यन्ते गुरुवपुषमासाद्य गिरिशम् ।
अवाप्याज्ञां शैवीं शिवतनुमपि त्वां विदितवान्
नयेयं त्वत्पूजास्तुतिविरचनेनैव दिवसान् ॥३६ ॥

यत् षट्पत्रं कमलमुदितं तस्य या कर्णिकाख्या
योनिस्तस्याः प्रथितमुदरे यत्तदोङ्कारपीठम् ।
तस्याप्यन्तः कुचभरनतां कुण्डलीति प्रसिद्धां
श्यामाकारां सकलजननीं सन्ततं भावयामि ॥३७ ॥

भुवि पयसि कृशानौ मारुते खे शशाङ्के
सवितरि यजमानेऽप्यष्टधा शक्तिरेका ।
वहसि कुचभराभ्यां याऽवनम्रापि विश्वं
सकलजननि ! सा त्वं पाहि मामित्यवाच्यम् ॥३८ ॥

॥ इति सकलजननीस्तवः ॥

■

ललितालललाटाक्षस्तोत्रम्

[मत्तमयूर छन्द में निबद्ध यह स्तोत्र भगवती के तीसरे नेत्र का वर्णन करता है। इसका नित्यपाठ करने वाले की सद्यः इष्टापूर्ति होती है तथा वह सदैव भगवती की आँखों के समक्ष रहता है और भगवती की आँखों के सामने रहने वाले पर कोई आपत्ति आ सकती है क्या ?]

अम्बुजनिलयावल्लभपङ्कजजाततनू
विघ्ननिवारकवह्निसमुद्भवमुखसेव्यौ।
अगणितकोटिब्रह्माण्डव्रजसूतातौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥१॥
आशातिक्रान्तेप्सितवस्तुव्रजदान-
स्वीयव्रतजितनिर्जरवृक्षौ नतविततेः।
निर्व्याजामितकरुणासागरहृत्कमलौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥२॥
इष्टापूर्त्तव्रतचर्यामुखकृतिपूगै-
र्भक्तिब्रह्मज्ञानप्रमुखैरपि जुष्टौ।
श्राणितकाङ्क्षितगजमुखसम्पन्मोक्षादौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥३॥
ईशौ साङ्गाखिलविद्यानामिन्दुधरौ
नतजनमोदाम्भोनिधिराकाचन्द्रमसौ।
ईहाशून्यस्वान्तजनाप्यस्वीयपदौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥४॥
उडुकुलवल्लभडिम्भविभूषितकोटीर-
भ्राजच्छीर्षव्यक्तश्रितजनवात्सल्यौ।
उरगाधिपमुखसेवितचरणाम्बुजयुगलौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥५॥

ऊर्जितशासनपौलोमीधवमुखदिविज-
व्रातकिरीटोज्ज्वलमणिनीराजितपादौ ।
ऊरीकृतनतकाङ्क्षापूर्त्तिव्रतदीक्षौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥६ ॥

ॠषभारूढौ ॠतसत्यप्रिय-ॠजुचेष्टौ
लक्षितजनतातूर्णानुग्रहकृतिशीले ।
ॠद्धिव्रातश्राणनसक्तौ द्राङ्नमतां
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥७ ॥

ॠस्वरसंज्ञारूपध्येयावुत्सङ्ग-
स्थितगणनाथक्रौञ्चक्ष्माधृच्छिद्रकरौ ।
प्रेम्णा सत्त्वरमानतकाङ्क्षितवैभवदौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥८ ॥

ॡमुखाशेषाक्षररूपौ मितिरहितकृपा-
जन्मक्षोणीनिजहृदयामृतसञ्जातौ ।
कमलनिजासनकमलेट्प्रमुखार्चितपादौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥९ ॥

ॡनिजरूपौ लावण्याब्धी नतजनता-
कारुण्यामृतपारावारस्वस्वान्तौ ।
लाकिन्यर्च्यौ शफरीनेत्रविरूपाक्षौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥१० ॥

एणाङ्कार्भकचूडौ शोणाम्बुजपादौ
शोणस्वाधरबिम्बरुचानिर्जितबिम्बौ ।
काणादाक्षस्वपदप्रमुखाखिलनयदौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥११ ॥

ऐडविडेयप्रालेयांशुप्रभृतिनुत-
स्वपदाम्भोजौ चन्द्रार्भाञ्चितनिजमौली ।
ऐहिकपारत्रिकसुखदायकपदपूजौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥१२॥

ॐकारामृतसम्भववरदानिजचेतः-
सञ्चन्पूगज्ञानश्राणनरतचित्तौ ।
ॐ बीजाक्षरगूढार्थाख्येयस्वाकारौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥१३॥

औपासनमुखकर्मकलापाराध्याङ्घ्री
भक्तिज्ञानप्रमुखोपायचयावाप्यौ ।
औदासीन्योज्ज्वलमतियतिहृदयाब्जरवौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥१४॥

अङ्घ्रिसरोरुहभक्तमृकण्डुप्रभवतनो-
रन्तकपाशच्छेदकरनिजानुगृहीतौ ।
अङ्गविराजत्कान्तिपराजितकनकविधू
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥१५॥

अश्चो भौ च ध्यातृस्वान्ते यन्नामा-
न्तर्गतपर्णाश्रुतिवाक्ततिभिः कीर्त्यन्ते ।
पादाम्भोजप्रणताखिलशुभदातारौ
वन्दे श्रीमल्ललितादेवीनिटिलाक्षौ ॥१६॥

॥ इति ललितालललाटाक्षस्तोत्रम् ॥

■

आम्नायस्तोत्रम्

श्रीनाथादिगुरुत्रयं गणपतिं पीठत्रयं भैरवं
सिद्धौघं वटुकत्रयं पदयुगं दूतीक्रमं मण्डलम् ।
वीरान्द्व्यष्ट चतुष्कषष्टिनवकं वीरावलीपञ्चकं
श्रीमन्मालिनिमन्त्रराजसहितं वन्दे गुरोर्मण्डलम् ॥

गुरुपादुकामनुच्चार्य, सुमुखादिभिः पञ्चमुद्राभिः स्त्रीगुरुं प्रणम्य—

शुद्धविद्या च बाला च द्वादशार्धा मतङ्गिनी ।
द्विजत्वसाधिनीविद्या गायत्री वेदमातृका ॥१ ॥
गाणपत्यं कार्तिकेयं मृत्युञ्जयं नीलकण्ठम् ।
त्र्यम्बकं जातवेदश्च तथा प्रत्यङ्गिरादयः ॥२ ॥
मुखात्तत्पुरुषाज्जाता द्विकोटीमन्त्रनायिकाः ।
एताः कामगिरीन्द्रश्च पूर्वाम्नायस्य देवताः ॥३ ॥
गुरुत्रयादिपीठान्तं चतुर्विंशत्सहस्रकम् ।
एतदावरणोपेतं पूर्वाम्नायं भजाम्यहम् ॥४ ॥
विशुद्धौ चिन्तयेद्धीमान् पूर्वाम्नायस्य देवताः ।
सौभाग्यविद्या बगळा वाराही वटुकस्तथा ॥५ ॥
श्रीतिरस्करिणी प्रोक्ता महामाया प्रकीर्तिता ।
अघोरं शरभं खड्गरावणं वीरभद्रकम् ॥६ ॥
रौद्रं शास्ता पाशुपताद्यस्त्रशस्त्रादिभैरवाः ।
दक्षिणामूर्तिमन्त्राद्याः शैवागमसमुद्भवाः ॥७ ॥
अघोरमुखसम्भूतं मदंशं कोटिसंख्यकम् ।
पूर्वपीठस्थिता देवि दक्षिणाम्नायदेवताः ॥८ ॥
द्विसहस्रं तु देव्यस्ताः परिवारसमन्विताः ।
भैरवादिपदद्वन्द्वं भजे दक्षिणमुत्तमम् ॥९ ॥

अनाहते चिन्तयेच्च दक्षिणाम्नायदेवताः ।
लोपामुद्रा महादेवी अम्बा च भुवनेश्वरी ॥१० ॥
अन्नपूर्णा कामकला सर्वसिद्धिप्रदायिनी ।
सुदर्शनं वैनतेयं कार्तवीर्यं नृसिंहकम् ॥११ ॥
नामत्रयं राममन्त्रं गोपालं सौरमेव च ।
धन्वन्तरीन्द्रजालं च इन्द्रादिसुरमन्त्रकम् ॥१२ ॥
दत्तात्रेयं द्वादशाष्टौ वैष्णवागमचोदिताः ।
सद्योजातमुखोद्भूता मन्त्राः स्युः कोटिसंख्यकाः ॥१३ ॥
एता जालन्ध्रपीठस्थाः पश्चिमाम्नायदेवताः ।
दूत्यादि च चतुष्षष्टि सिद्धान्तं त्रिसहस्रकम् ॥१४ ॥
आम्नायं पश्चिमं वन्दे सर्वदा सर्वकामदम् ।
मणिपूरे चिन्तनीयाः पश्चिमाम्नायदेवताः ॥१५ ॥
तुरीयाम्बामहार्धा च अश्वारुढा तथैव च ।
मिश्राम्बा च महालक्ष्मीः श्रीमद्वाग्वादिनी अपि ॥१६ ॥
दुर्गा काळी ततश्चण्डी नकुली च पुळिन्दिनी ।
रेणुका लक्ष्मिवागीशमातृकाद्याः स्वयंवरा ॥१७ ॥
पञ्चाम्नायसमोपेतं श्रीविद्याख्यं मदंशकम् ।
वामदेवमुखोद्भूता द्विकोटिमन्त्रनायिकाः ॥१८ ॥
एता ओड्याणपीठस्थाः शाक्तागमसमुद्भवाः ।
द्विसहस्रं तु देव्यस्ताः परिवारसमन्विताः ॥१९ ॥
मुद्रादिनवकं चैव सिद्धानां मिथुनं तथा ।
वीरावळीपञ्चकं च भजेदाम्नायमुत्तरम् ॥२० ॥
स्वाधिष्ठाने चिन्तनीया उत्तराम्नायदेवताः ।
परापरा च सा देवी पराशाम्भवमेव च ॥२१ ॥
प्रासादं दहरं हंसं महावाक्यादिकं परम् ।
पञ्चाक्षरं महामन्त्रं तारकं जन्मतारकम् ॥२२ ॥

ईशानमुखसम्भूतं स्वात्मानन्दप्रकाशकम् ।
कोटिसंख्या महादेवि मद्रूपाः सर्वसिद्धिदाः ॥२३॥
एताः शाम्भवपीठस्थाः सहस्रपरिवारिताः ।
आराध्य मालिनीपूर्वं मण्डलान्तं तथैव च ॥२४॥
सायुज्यहेतुकं नित्यं वन्दे चोर्ध्वमकल्मषम् ।
ऊर्ध्वाम्नायमनून्नित्यं मूलाधारे विभाववयेत् ॥२५॥
पञ्चाम्बा नवनाथाश्च मूलविद्यास्ततः परम् ।
आधारविद्याषट्कं च पुनरंघ्रिद्वयं क्रमात् ॥२६॥
शाम्भवी चाथ हल्लेखा समया परबोधिनी ।
कौलपञ्चाक्षरी पञ्चदशार्णाऽनुत्तरात्मिका ॥२७॥
षोडशी पूर्तिविद्या च महात्रिपुरसुन्दरी ।
ऊर्ध्वश्रीपादुकापूर्वं चरणान्तं गुरुक्रमात् ॥२८॥
पश्चादनुत्तरं वन्दे परब्रह्मस्वरूपिणीम् ।
अनुत्तराम्नायमनूनाज्ञाचक्रे विभावयेत् ॥२९॥
श्रीनाथगुरुमन्त्रादीन्मण्डलान्तं यथाक्रमम् ।
सप्तकोटिमहामन्त्रं द्वादशान्ते सदा स्मरेत् ॥३०॥
शुचिर्वाप्यशुचिर्वापि गच्छंस्तिष्ठन्स्वपन्नपि ।
मन्त्रैकशरणो विद्वान्मनसापि सदा स्मरन् ॥३१॥
तत्तत्सिद्धिं च साहस्रं जपेत्साधकपुङ्गवः ।
जपान्ते शुद्धमाला च आम्नायस्तोत्रमुत्तमम् ॥३२॥
ललितानामसाहस्रं सर्वपूर्तिकरं स्तवम् ।
स्तवराजं च पञ्चैते भक्तः प्रतिदिनं पठेत् ॥३३॥
भुक्त्वा भोगान्यथाकामं सर्वभूतहिते रतः ।
सभार्यापुत्रसौभाग्यः सभूतिः पशुमान् भवेत् ॥३४॥

एकवारं जपेदेतत् कोटियज्ञफलं लभेत् ।
एतद्विज्ञानमात्रेण सर्वेषां देशिकोत्तमः ॥
शिवसायुज्यमाप्नोति शिवयोरेव शासनात् ॥३५ ॥

॥इत्याम्नायस्तोत्रम् ॥

वाञ्छाकल्पलता

[वाञ्छाकल्पलता स्तोत्र ही नहीं एक प्रयोग भी है। यहाँ उसका विधिवत् उपन्यास किया जा रहा है। तन्त्रग्रन्थों के अनुसार इसके होम और तर्पण की आवश्यकता नहीं। इसके स्मरण मात्र से साधक जो चाहता है वह हो जाता है। इसका प्रतिदिन एकावर्तन करने वाला लक्ष्मी को वश में रखता है, पाँच आवृत्ति करने वाला सारे विश्व को वश में कर लेता है। दशावृत्ति करने से वह विष्णु और रुद्ररूप हो जाता है तथा शतावृत्ति से सार्वभौम सम्राट् होता है, इसमें संशय नहीं है।]

श्रीगुरुभ्यो नमः। श्रीगणेशाय नमः। श्रीक्षेत्रपालाय नमः। श्रीसरस्वत्यै नमः। श्रीमत्रिपुरसुन्दर्यै नमः। मूलमुच्चार्य। तालत्रयं कृत्वा। मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा।

ओं अस्य श्रीवाञ्छाकल्पलताविद्यागणेशस्य मनोर्नानासूक्तसमूहस्य, आनन्दभैरवगणकाङ्गिरसकश्यपवशिष्ठविश्वामित्रसंवनना ऋषयः, देवीगायत्रीनिचृद्गायत्रीपङ्क्त्यनुष्टुप्निचृत्त्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि, श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरीगणपतिसंवादाग्न्यमृतरुद्रा देवताः, श्रीं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकम्, मम श्रीमहागणपतिमहात्रिपुरसुन्दरीसंवादाग्न्यमृतरुद्रप्रसादवाञ्छितार्थफलप्रसिद्धये वाञ्छाकल्पलतोपस्थाने विनियोगः। इति संकल्प्य।

आनन्दभैरवगणकाङ्गिरसकश्यपवसिष्ठविश्वामित्रसंवनन-ऋषिभ्यो नमः शिरसि, देवीगायत्रीनिचृद्गायत्रीपंक्त्यनुष्टुप्निचृत्त्रिष्टुब्जगतीछन्दोभ्यो नमः मुखे, श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरीगणपतिसंवादाग्न्यमृतरुद्रदेवताभ्यो नमः हृदये, श्रीं बीजाय नमो नाभौ, ह्रीं शक्तये नमो गुह्ये, क्लीं कीलकाय नम आधारे, इति न्यस्य मूलेन व्यापकं चरेत्।

ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं क ए ई ल ह्रीं गणपतये हसकहलह्रीं वरवरदसकलह्रीं सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। इति त्रिचत्वारिंशद्वर्णो मनुः।

ऐं क्लींसौः श्रीमत्रिपुरसुन्दरी ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं क ए ई ल ह्रीं सर्वज्ञायै ह्रां गाँ ब्रह्मात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ऐं ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं क ए ई

ल ह्रीं नित्यतृप्तायै ह्रीं गीं विष्ण्वात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा । ऐं ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं क ए ई ल ह्रीं अनादिबोधितायै हूँ गूँ रुद्रात्मने मध्यमाभ्यां वषट् । ऐं ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं क ए ई ल ह्रीं स्वतन्त्रायै हैं गैं ईश्वरात्मने अनामिकाभ्यां हुम् । ऐं ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं क ए ई ल ह्रीं नित्यमलुप्तायै ह्रौं गौं सदाशिवात्मने कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् । ऐं ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं क ए ई ल ह्रीं अनन्तायै ह्रः गः सर्वात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् । एवं हृदयादिन्यासं विधाय पुनर्मूलेन त्रिर्व्याप्य ध्यायेत् । यथा—

हेमाद्रौ हेमपीठस्थितिममरगणैरीड्यमानां विराजत्-
पुष्पेष्विक्ष्वासिपाशांकुशकरकमलां रक्तवेषातिरक्ताम् ।
दिक्षु द्यद्भिश्चतुर्भिर्मणिमयकलशैः पञ्चशक्त्यैकविद्यां,
स्वस्थां क्लृप्ताभिषेकां भजत भगवतीं भूतिदामन्त्ययामे ॥१ ॥

बीजापूरगदेक्षुकार्मुकरुचा चक्राब्जपाशोत्पल-
ब्रीह्यग्रस्वविषाणरत्नकलशप्रोद्यत्करांभोरुहः ।
ध्येयो वल्लभया सपद्मकरया, श्लिष्टो ज्वलद्भूषया,
विश्वोत्पत्तिविपत्तिसंस्थितिकरो विघ्नेश इष्टार्थदः ॥२ ॥

धवलनलिनराजच्चन्द्रमध्ये निषण्णं
करधृतवरपाशं साभयं सांकुशञ्च ।
अमृतवपुषमिन्दुक्षीरवर्णं त्रिनेत्रं
प्रणमत सुरवन्द्यं मङ्क्षु संवादयन्तम् ॥३ ॥

स्फुटितनलिनसंस्थं मौलिबद्धेन्दुरेखा
गलदमृतरसार्द्रं चन्द्रवह्न्यर्कनेत्रम् ।
स्वकरकलितमुद्रावेदपाशाक्षमालं
स्फटिकरजतमुक्तागौरमीशं नमामि ॥४ ॥

(मुद्रा ज्ञानमुद्रेत्यर्थः) ।

इति ध्यात्वा, मुद्राः प्रदर्श्य

श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरी-महागणपतिसंवादाग्न्यमृतरुद्रेभ्यः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः इति अंगुष्ठकनिष्ठिकाभ्याम् । श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरी गन्धं समर्पयामि नमः इति अंगुष्ठकनिष्ठिकाभ्याम् । श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरी महागणपतिसंवादाग्न्यमृतरुद्रेभ्यः हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः इति तर्जन्यङ्गुष्ठाभ्याम् । श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरी महागणपतिसंवादाग्न्यमृतरुद्रेभ्यः यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः इति अङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम् । श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरी-महागणपतिसंवादाग्न्यमृतरुद्रेभ्यः रं वह्न्यात्मकं दीपं समर्पयामि नमः इति अङ्गुष्ठमध्यमाभ्याम् । श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरी-महागणपतिसंवादाग्न्यमृतरुद्रेभ्यः वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः अङ्गुष्ठानामिकभ्याम् । श्रीमन्महात्रिपुरसुन्दरीमहागणपतिसंवादाग्न्यमृतरुद्रेभ्यः सं सर्वात्मकं सर्वोपचारं समर्पयामि नमः इति संहताभिः सर्वाङ्गुलीभिः दद्यात् । एवं मानसोपचारैः संपूज्य, गुरुदेवतात्मनामैक्यं भावयित्वा । रात्रौ अन्त्ययामे सूर्योदयात्पूर्वं शनैः शनैः जपेत् ।

(१) ॐ ऐं ह्रीं श्रीं "ईं",

(२) ॐ ऐं ह्रीं श्रीं परोरजसे सावदोम्,

(३) ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसकल हसकहल सकलह्रीं, प्रत्येकं दशवारं जप्त्वा,

यथा—ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं ऐं क्लीं सौः । यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥२ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव

बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥३ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निजहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥४ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम् । समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥५ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । सं समिद्युवसेवृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ इलस्पदे समिध्यसे स नो वसून्याभर । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥६ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम् । समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥७ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निजहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥८ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥९ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१० ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥११ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । गणानांत्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम् । ज्येष्ठराजं ब्रह्मणस्पत आनः शृण्वन्नूतिभिः सीदसादनम् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१२ ॥ ॐ भूः

ॐ भूः भद्रं नो अपिवातय मनः । ॐ ह्रीं वं ठं अमृतरुद्राय आं ह्रीं क्रों प्रतिकूलं मे नश्यत्वनुकूलं मे वं वशमानय स्वाहा ।१३ ॥

दमयन्तीनलाभ्यां च नमस्कारं करोम्यहम् ।
अविवादो भवेदत्र कलिदोषप्रशान्तिदः ॥
ऐकमत्यं भवेदेषां ब्राह्मणानां पृथग्धियाम् ।
निर्वैरिता च जायेत संवादाग्ने ! प्रसीद मे ॥

॥ इति प्रथमः पर्यायः ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः

प्रचोदयात्। गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥२ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः। त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥३ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः। जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निजहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः। गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥४ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः। समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि। गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥५ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः। संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते। गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥६ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः। समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि। गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥७ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः। जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निजहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः। गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥८ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः ।त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥९ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१० ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥११ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । अग्नेमन्युं प्रतिनुदन् परेषामदब्धो गोपाः परिपाहि नस्त्वम् । प्रत्यञ्चो यन्तु निगुतः पुनस्ते मैषां चित्तं प्रबुधां विनेशत् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१२ ॥

ॐ भुवः मरुतामोजसे स्वाहा ॥१३ ॥ ॐ ह्रीं वं ठं अमृतरुद्राय आं ह्रीं क्रों प्रतिकूलं मे नश्यत्वनूकूलं मे वशमानय स्वाहा ॥

दमयन्तीनलाभ्यां च नमस्कारं करोम्यहम् ।
अविवादो भवेदत्र कलिदोषप्रशान्तिदः ॥
ऐकमत्यं भवेदेषां ब्राह्मणानां पृथग्धियाम् ।
निर्वैरिता च जायेत संवादाग्ने ! प्रसीद मे ॥

॥ इति द्वितीयः पर्यायः ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे ।

गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥२ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धना-न्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥३ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निजहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ।गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥४ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम् । समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥५ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम् । समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥६ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम् । समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥७ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः ।जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निजहाति वेदः । स नः

पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥८ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः ॥ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धना-न्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥९ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । तत्सवितुर्वरिण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१० ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः ॥ यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥११ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । यो मामग्ने भागिनं सन्तं यथाभागं चिकीर्षति । अभागमग्ने तं कुरु मामग्ने भागिनं कुरु स्वाहा । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१२ ॥

ॐ स्वः इन्द्रो विश्वस्य राजति ॥१३ ॥ ॐ ह्रीं वं ठं अमृतरुद्राय आँ ह्रीं क्रों प्रतिकूलं मे नश्यत्वनुकूलं मे वशमानय स्वाहा ।

दमयन्तीनलाभ्याञ्च नमस्कारं करोम्यहम् ।
अविवादो भवेदत्र कलिदोषप्रशान्तिदः ॥
ऐकमत्यं भवेदेषां ब्राह्मणानां पृथग्धियाम् ।
निर्वैरिता च जायेत संवादाग्ने प्रसीद मे ॥

॥ इति तृतीयः पर्यायः ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे ।

गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥२ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥३ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निजहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥४ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः ।समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम् । समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥५ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः । समानमस्तु वो मनो यता व सुसहासति । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥६ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम् । समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥७ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निजहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥८ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः ।त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥९ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१० ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगा अभिसूर्य सर्वन्तदिन्द्र ते वशे । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥११ ॥

ॐ ऐं श्रीं ह्रीं लं क्लीं ग्लौं गं गुगुरीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं स क ल ह्रीं ऐं क्लीं सौः । अजैष्माद्यासनायचभूमानागसो वयम् जाग्रत्स्वप्नः संकल्पः पापो यं द्विष्मस्तं स ऋच्छतु यो नो द्वेष्टि तमृच्छतु । गं क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये वर वरद आं ह्रीं क्रों सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौः क्लीं ऐं ॥१२ ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१३ ॥ ॐ ह्रीं वं ठं अमृतरुद्राय आँ ह्रीं क्रों प्रतिकूलं मे नश्यत्वनुकूलं मे वशमानय स्वाहा ।

दमयन्तीनलाभ्याञ्च नमस्कारं करोम्यहम् ।
अविवादो भवेदत्र कलिदोषप्रशान्तिदः ॥
ऐकमत्यं भवेदेषां ब्राह्मणानां पृथग्धियाम् ।
निर्वैरिता च जायेत संवादाग्ने प्रसीद मे ॥

॥ इति चतुर्थः पर्यायः ॥

इति जपित्वा,

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु देवेशि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥

इति जपं निवेदयेत् ॥

एवं प्रत्यहं निशान्ते चतुर्वारं पठेत् ॥ सर्वैश्वर्यं भवति ॥ सर्ववेदान्त-फलमश्नुते । इति शम् ॥

॥ इति वाञ्छाकल्पलताप्रयोगः समाप्तः ॥

भवान्यष्टकम्

[श्रीमदादि शंकर भगवत्पाद विरचित भवान्यष्टक अत्यन्त प्रसिद्ध है। जिसमें वे कहते हैं— "न तो मुझमें विद्या है, न ज्ञान। कोई भी सांसारिक सम्बन्ध भी मेरे अपने नहीं हैं, मैं अगतिक हूँ। माँ, केवल आप ही मेरी गति हैं, कृपया मेरी रक्षा करें।" यही इस स्तोत्र का मूलभाव है। इसके नित्यपाठक का योगक्षेम पराम्बा ललिता महाभट्टारिका करती हैं।]

न तातो न माता न बन्धुर्न दाता
न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता।
न जाया न विद्या न वृत्तिर्ममैव
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥१॥

भवाब्धावपारे महादुःखभीरुः
पपात प्रकामी प्रलोभी प्रमत्तः।
कुसंसार-पाश-प्रबद्धः सदाऽहं
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥२॥

न जानामि दानं न च ध्यान-योगं
न जानामि तन्त्रं न च स्तोत्र-मन्त्रम्।
न जानामि पूजां न च न्यासयोगं
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥३॥

न जानामि पुण्यं न जानामि तीर्थं
न जानामि मुक्तिं लयं वा कदाचित्।
न जानामि भक्तिं व्रतं वाऽपि मात-
र्गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥४॥

कुकर्मी कुसङ्गी कुबुद्धिः कुदासः
कुलाचारहीनः कदाचारलीनः ।
कुदृष्टिः कुवाक्यप्रबन्धः सदाऽहं
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥५ ॥

प्रजेशं रमेशं महेशं सुरेशं
दिनेशं निशीथेश्वरं वा कदाचित् ।
न जानामि चाऽन्यत् सदाऽहं शरण्ये
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥६ ॥

विवादे विषादे प्रमादे प्रवासे
जले चाऽनले पर्वते शत्रुमध्ये ।
अरण्ये शरण्ये सदा मां प्रपाहि
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥७ ॥

अनाथो दरिद्रो जरा-रोगयुक्तो
महाक्षीणदीनः सदा जाड्यवक्त्रः ।
विपत्तौ प्रविष्टः प्रणष्टः सदाऽहं
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥८ ॥

॥ इति भवान्यष्टकं सम्पूर्णम् ॥

■

॥श्रीः ॥

त्रिपुरसुन्दर्यष्टकम्

कदम्बवनचारिणीं मुनिकदम्बकादम्बिनीं
नितम्बजितभूधरां सुरनितम्बिनीसेविताम् ।
नवाम्बुरुहलोचनामभिनवाम्बुदश्यामलां
त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥१ ॥

कदम्बवनवासिनीं कनकवल्लकीधारिणीं
महार्हमणिहारिणीं मुखसमुल्लसद्वारुणीम् ।
दयाविभवकारिणीं विशदरोचनाचारिणीं
त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥२ ॥

कदम्बवनशालया कुचभरोल्लसन्मालया
कुचोपमितशैलया गुरुकृपालसद्वेलया ।
मदारुणकपोलया मधुरगीतवाचालया
कयापि घननीलया कवचिता वयं लीलया ॥३ ॥

कदम्बवनमध्यगां कनकमण्डलोपस्थितां
षडम्बुरुहवासिनीं सततसिद्धसौदामिनीम् ।
विडम्बितजपारुचिं विकचचन्द्रचूडामणिं
त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥४ ॥

कुचाञ्चितविपञ्चिकां कुटिलकुन्तलालङ्कृतां
कुशेशयनिवासिनीं कुटिलचित्तविद्वेषिणीम् ।
मदारुणविलोचनां मनसिजारिसंमोहिनीं
मतङ्गमुनिकन्यकां मधुरभाषिणीमाश्रये ॥५ ॥

स्मरेत्प्रथमपुष्पिणीं रुधिरबिन्दुनीलाम्बरां
गृहीतमधुपात्रिकां मदविघूर्णनेत्राञ्चलाम् ।
घनस्तनभरोन्नतां गलितचूलिकां श्यामलां
त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥६ ॥
सकुङ्कुमविलेपनामलकचुम्बिकस्तूरिकां
समन्दहसितेक्षणां सशरचापपाशाङ्कुशाम् ।
अशेषजनमोहिनीमरुणमाल्यभूषाम्बरां
जपाकुसुमभासुरां जपविधौ स्मराम्यम्बिकाम् ॥७ ॥
पुरन्दरपुरन्ध्रिकाचिकुरबन्धसैरन्ध्रिकां
पितामहपतिव्रतापटुपटीरचर्चारताम् ।
मुकुन्दरमणीमणीलसदलंक्रियाकारिणीं
भजामि भुवनाम्बिकां सुरवधूटिकाचेटिकाम् ॥८ ॥

॥ इति त्रिपुरसुन्दर्यष्टकं सम्पूर्णम् ॥

■

त्रिपुरामेधासूक्तम्

[जीवन मे मेधा अर्थात् बुद्धि की अत्यन्त आवश्यकता होती है । भगवती ललिता महात्रिपुरसुन्दरी बुद्धि की देवी हैं । यह मेधासूक्त वैदिक है । इसके नित्यपाठ से मेधा का विकास होता है ।]

मेधा देवी जुषमाणा न आगाद्विश्वाची भद्रा सुमनस्य माना । त्वया जुष्टा नुदमाना दुरुक्तान् बृहद्वदेम विदथे सुधीराः ।

त्वया जुष्ट ऋषिर्भवति देवि त्वया ब्रह्मागतश्रीरुतत्वया । त्वया जुष्टश्चित्रं विन्दते वसुसानो जुषस्व द्रविणो न मेधे ।

मेधां म इन्द्रो दधातु मेधां देवी सरस्वती मेधां मे अश्विनावुभा-वाधत्तां पुष्करस्रजा । अप्सरासु च या मेधा गन्धर्वेषु च यन्मनः । दैवीं मेधा सरस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता गुं स्वाहा ।

आमां मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरण्यवर्णा जगती जगम्या । ऊर्जस्वती पयसा पिन्वमाना सामां मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम् ।

मयि मेधां मयि प्रजां मय्यग्निस्तेजो दधातु मयि मेधां मयि प्रजां मयीन्द्र इन्द्रियं दधातु मयि मेधां मयि प्रजां मयि सूर्यो भ्राजो दधातु ।

॥ इति त्रिपुरामेधासूक्तम् ॥

■

कर्मकाण्डात्मको भागः

बाह्यचक्रमुपगा मरीचय-
स्तत्त्वजाललसदात्मसंविदः।
तत्समर्चनमतीतचिन्मया-
नाख्यधाम्नि विलयक्रमक्रिया।।

श्रीयन्त्र पर विन्दु से लेकर त्रैलोक्यमोहन चक्र पर्यन्त एंकानबे (९१) संख्यात्मक किरण देवताओं का षट्त्रिंशत् तत्त्व युक्त अनिवर्चनीय पराशक्ति में क्रम से लय की भावना का चिन्तन ही भगवती माँ त्रिपुरसुन्दरी की सर्वश्रेष्ठ पूजा है।

परमदेवी-सूक्तम्

[अत्यन्त गोपनीय एवं गुरुगम्य परमदेवी सूक्त का नित्यपाठ करने वाला सर्वसिद्धियों का स्वामी, सर्वत्र विजयी तथा सर्वलोकवशंकर हो जाता है। तीन वर्षों तक जो इस सूक्त का पाठ करता है, वह भगवती का साक्षात् दर्शन प्राप्त करता है। सर्वत्र विजय के हेतु इस सूक्त को सद्गुरुदेव की शरण में जाकर प्रयत्नपूर्वक प्रणिपात व सेवा से प्राप्त करना चाहिए।]

ॐ अस्य श्रीपरदेवतासूक्तमालामन्त्रस्य मार्कण्डेय सुमेधादि-ऋषयः, गायत्र्यादिनानाविधानि च्छन्दांसि, त्रिशक्तिरूपिणी चण्डिका देवता, ऐं बीजं सौः शक्तिः क्लीं कीलकं चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

ॐ योगाढ्यामरकायनिर्गतमहत्तेजःसमुत्पत्तिनी
भास्वत्पूर्णशशांकचारुवदना नीलोल्लसद्भ्रूलता॥
गौरोत्तुंगकुचद्वया तदुपरि स्फूर्जप्रभामण्डला
बन्धूकारुणकायकान्तिरवताच्छ्रीचण्डिका सर्वतः॥

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्ख्रैं ह्सौं ह्सौः जय जय महालक्ष्मि जगदाधारबीजे सुरासुरत्रिभुवननिधाने दयाङ्कुरे सर्वदेवतेजोरूपिणि महामहामहिमे महामहा--रूपिणि महामहामाये महामायास्वरूपिणि विरिञ्चसंस्तुते विधिवरदे चिदानन्दे (विद्यानन्दे) विष्णुदेहावृते महामोहमोहिनि मधुकैटभजिघांसिनि नित्यवरदान--तत्परे महासुधाब्धिवासिनि महामहत्तेजोधारिणि सर्वाधारे सर्वकारणकारणे अचिन्त्यरूपे इन्द्रादिनिखिलनिर्जरसेविते सामगानगायिनि पूर्णोदयकारिणि विजये जयन्ति अपराजिते सर्वसुन्दरि रक्तांशुके सूर्यकोटिसंकाशे चन्द्रकोटिसु-शीतले अग्निकोटिदहनशीले यमकोटिक्रूरे वायुकोटिवहनसुशीले ओंकारनाद-चिद्रूपे निगमागममार्गदायिनि महिषासुरनिर्दलनि धूम्रलोचनवधपरायणे चण्डमुण्डादिशिरश्छेदिनि रक्तबीजादिरुधिरशोषिणि रक्तपानप्रिये महायोगिनि भूतवेताल भैरवादितुष्टिविधायिनि शुम्भनिशुम्भशिरश्छेदिनि निखिलासुरबल-खादिनि त्रिदशराज्यदायिनि सर्वस्त्रीरत्नरूपिणि दिव्यदेहे निर्गुणे सदसद्रूपधा-रिणि स्कन्दवरदे (सुरवरदे) भक्तत्राणतत्परे वरवरदे सहस्रारे दशशताक्षरे

अयुताक्षरे सप्तकोटिचामुण्डारूपिणि नवकोटिकात्यायनिरूपिणि अनेकशक्त्या लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपे इन्द्राणि ब्रह्माणि रुद्राणि कौमारि वैष्णवि वाराहि शिवदूति ईशानि भीमें भ्रामरि नारसिंहि त्रयस्त्रिंशत्कोटिदैवते अनन्तकोटिब्रह्माण्डनायिके चतुरशीतिलक्षमुनिजनसंस्तुते सप्तकोटिमन्त्रस्वरूपे महाकालरात्रिप्रकाशे कलाकाष्ठादिरूपिणि चतुर्दशभुवनाविर्भावकारिणि गरुडगामिनि क्रौङ्कार-ह्रौंङ्कार ह्रींकार-श्रींङ्कार-क्षोङ्कार-जूङ्कार-सौङ्कार-ऐंङ्कार-क्लीङ्कार-ह्क्लीङ्कार-ह्क्लांङ्कार-हौङ्कार-नानाबीज- मन्त्रराजविराजितसकलसुन्दरीगणसेवितचरणार-विन्दे श्री- महारात्रित्रिपुरसुन्दरि-कामेशदयिते करुणारसकल्लोलिनि कल्पवृक्षा-धःस्थिते चिन्तामणिद्वीपावस्थितमणिमन्दिरनिवासे चापिनि ख़ड्गिनि चक्रिणि गदिनि शङ्खिनि पद्मिनि निखिलभैरवाराधिते समस्तयोगिनीचक्रपरिवृते कालि कंकालि तारे तोतुले सुतारे ज्वालामुखि छिन्नमस्तके भुवनेश्वरि त्रिपुरे त्रिलोकज-ननि विष्णुवक्षःस्थलालङ्कारिणि अजिते अमिते अपराजिते अनौपमचरिते गर्भ-वासादिदुःखापहारिणि मुक्तिक्षेत्राधिष्ठायिनि शिवे शान्ति कुमारि देवि देवीसूक्तसंस्तुते महाकालि महालक्ष्मि महासरस्वति त्रयीविग्रहे प्रसीद प्रसीद सर्वमनोरथान् पूरय पूरय सर्वारिष्टविघ्नांश्छेदय छेदय सर्वग्रहपीडाज्वरोग्रभयः विध्वंसय विध्वंसय सद्यस्त्रिभुवन जीवजातं वशमानय वशमानय मोक्षमार्गं दर्शय दर्शय ज्ञानमार्गं प्रकाशय प्रकाशय अज्ञानतमो निरसय निरसय धनधा-न्याभिवृद्धिं कुरु कुरु सर्वकल्याणानि कल्पय कल्पय मां रक्ष रक्ष मम वज्रशरीरं साधय साधय ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा नमस्ते नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

परं देव्या इदं सूक्तं यः पठेत्प्रयतो नरः ।
सर्वसिद्धिमवाप्नोति सर्वत्र विजयी भवेत् ॥१ ॥
संग्रामेषु जयेच्छत्रून् मतङ्गानिव केसरी
वशयेन्निखिलान्लोकान् विशेषेण महीपतीन् ॥२ ॥
त्रिकालं च पठेन्नित्यं देव्याः सूक्तमिदं परम् ।
तस्य विघ्नाः प्रलीयन्ते ग्रहपीडाश्च दारुणाः ॥३ ॥
ज्वरादिरोगशमनं परकृत्यानिवारणम् ।
पराभिचारशमनं तीव्रदारिद्र्यनाशनम् ॥४ ॥

परकल्याणनिलयं देव्याः सन्तोषकारकम् ।
सहस्रावृत्तितो देवि मनोरथसिद्धिदम् ॥५ ॥
द्विसहस्रावृत्तिजपात्सर्वसंकष्टनाशनम् ।
त्रिसहस्रावृत्तितस्तु वशकृद्राजयोषिताम् ॥६ ॥
शतत्रयं पठेद्यस्तु वर्षत्रयमतन्द्रितः ।
स पश्येच्चण्डिकां साक्षाद् वरदानकृतोद्यमाम् ॥७ ॥
इदं रहस्यं परमं गोपनीयं प्रयत्नतः ।
न वाच्यं कस्यचिद्देवि निधानमिव सुन्दरि ॥८ ॥

॥श्रीजगदम्बार्पणमस्तु ॥

॥इति परमदेवी-सूक्तम् ॥

■

त्रैलोक्य-मोहनकवचम्

[रुद्रयामल तन्त्र के गौरी-महेश्वर-संवाद में कहा गया है कि यह श्रीराजराजेश्वरी महात्रिपुरसुन्दरी का त्रैलोक्यमोहनाख्य कवच ललिता भगवती का साक्षात् स्वरूप है। तन्त्रग्रन्थों में कुल सात कोटि विद्याओं का निरूपण है, उन सभी का सारभूत है— यह कवच। इसको भोजपत्र पर लिखकर सोने के ताबीज में रखकर गले या दक्षिण भुजा में धारण करने से सारे जगत् को दासवत् किया जा सकता है। इसके नित्य-पाठ से दस हजार वर्षों तक की गई पूजा का फल प्राप्त होता है। परन्तु ध्यान रहे—बिना गुरु द्वारा प्राप्त किये इसका कोई फल नहीं है।]

श्रीदेव्युवाच—

श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्याया या विद्याः सुदुर्लभाः।
कृपया कथिताः सर्वाः श्रुताश्चाधिगता मया॥
प्राणनाथाधुना ब्रूहि कवचं मन्त्रविग्रहम्।
त्रैलोक्यमोहनं चेति नामतः कथितं पुरा।
इदानीं श्रोतुमच्छामि सर्वार्थकवचं स्फुटम्॥

ईश्वर उवाच—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सुन्दरि प्राणवल्लभे।
त्रैलोक्यमोहनं नाम सर्वविद्यौघविग्रहम्॥
यद्धृत्वा दानवान्विष्णुर्निजघान मुहुर्मुहुः।
सृष्टिं वितनुते ब्रह्मा यद्धृत्वा पठनाद्यतः॥
संहर्ताहं यतो देवि देवेशो वासवो यतः।
धनाधिपः कुबेरोऽपि यतः सर्वे दिगीश्वराः॥
न देयं यदशिष्येभ्यो देयं शिष्येभ्य एव च।
अभक्तेभ्योऽपि पुत्रेभ्यो दत्त्वा मृत्युमवाप्नुयात्॥

श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्याः कवचस्य ऋषिः शिवः ।
छन्दो विराट् देवता च श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ॥

शिरो मे वाग्भवं पातु 'कएईलह्रीं' रूपकम् । 'हसकलह्रीं' ललाटं पातु कामेश्वरी मम । 'हकहलह्रीं' दृशौ मे पातु कामेश्वरी सदा । 'कहऐंलह्रीं' श्रुती मे सदा पातु तुरीयकम् । 'हकलसह्रीं' पञ्चमं पातु जिह्वां च पञ्चमी । 'कएईलह्रीं हसकलह्रीं हकहलह्रीं कहऐंलह्रीं हकलसह्रीं' वदनं सदा पातु पञ्चकूटा तु पञ्चमी ॥१ ॥

'कएईलह्रीं' घ्राणं मे पातु वाग्भवसंज्ञकम् । 'हसकहलह्रीं' कण्ठं पातु कामेशसंज्ञकम् । 'सकलह्रीं' शक्तिकूटं स्कन्धौ पातु सदा मम ॥ 'कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं' मे कामेनोपासिता विद्या कक्षदेशे सदावतु ॥२ ॥

'क्लीं ह्रीं श्रीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ।' कामादिषोडशी पातु भुजौ त्रिपुरसुन्दरी ॥३ ॥

'ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः श्रीं ह्रीं क्लीं स्त्रीं ऐं क्रौं क्रीं श्रीं हुं ।' तारादिषोडशी पातु मणिबन्धद्वयं मम ॥४ ॥

'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं' रमादिषोडशी पातु करौ त्रिपुरसुन्दरी ॥५ ॥

'ह्रीं ह्सौः ॐ ऐं ह्रींश्रीं ऐं क्लीं सौः स्त्रीं क्रों ऐं ह्रीं हूंहूं श्रीं' मायादिषोडशी ख्याता हृदयं परिरक्षतु ॥६ ॥

'ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः ऐं क्लीं सौः सौः क्लीं ऐं सौः ऐं श्रीं ह्रीं ऐं' वागादिषोडशी पातु स्तनौ मे सुन्दरी परा ॥७ ॥

'कएश्रीं हसकलह्रीं क्लीं हसकहलह्रीं सौः सकलह्रीं' नख(२०)वर्णा पार्श्वे पात्वपराजिता ॥८ ॥

'ह्रीं ह्सौं स्हौं स्हौं ह्सौं क्लीं हसकहलह्रीं ह्रीं ह्रीं सौः सौः हंहं सकहलह्रीं क्लीं ह्सौं स्हौं ह्रीं स्हौं ह्सौं ह्रीं' मे सुन्दरीयं समाख्याता महापुरुषपूजिता । महागुह्यस्वरूपा च केवलानन्दचिन्मयी । एकत्रिंशद्वर्णरूपा कटिदेशं सदावतु ॥९ ॥

'हसकलह्रीं' मे पृष्ठं कूटं वाग्भवसंज्ञकम् । 'हसकहलह्रीं' कुक्षिं कामकूटं सदावतु । वक्षस्थलं शक्तिकूटं 'सकलह्रीं' सदावतु ।

'हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं' मे । लोपामुद्रा पञ्चदशी मध्यदेशं सदावतु ॥१० ॥

'कहएईलह्रीं' नाभिं 'हकएईलह्रीं' कटिम् । सक्थिनी मे सदा पातु 'सक-एईलह्रीं' सदा । 'कहएईलह्रीं हकएईलह्रीं सकएईलह्रीं' मे । मानवी विद्या सर्वतः परिरक्षतु ॥११ ॥

'सहकएईलह्रीं' मे उरुयुग्मं सदावतु । 'सहकहएईलह्रीं' गुह्यं पातु सदा मम । 'हसकएईलह्रीं' तु जानुनी पातु मे सदा । 'सहकएईलह्रीं सहकहएईलह्रीं हसकएईलह्रीं' मम । जलजे भयसंघाते सर्वतः परिरक्षतु ॥१२ ॥

'हसकएईलह्रीं' मे गुल्फयुग्मं सदावतु । 'हसकहएईलह्रीं' पादौ पातु सदा मम । 'सहकएईलह्रीं' मे प्रपदौ पातु सर्वदा । 'हसकएईलह्रीं हसकहएईलह्रीं सहकएईलह्रीं' सदा कुबेरेण प्रपूजिता । द्वाविंशत्यक्षरी विद्या सर्वाङ्गं मे सदा-वतु ॥१३ ॥

'कएईलह्रीं' प्राच्यां मां त्रिपुरा परिरक्षतु । 'हसकहलह्रीं' पातु वह्निकोणे निरन्तरम् । 'सहसकलह्रीं' याम्यां पातु मां सर्वसिद्धिदा । 'कएईलह्रीं हसकह-लह्रीं सहसकलह्रीं' विद्यागस्त्यसेव्या च चक्रस्था मां सदावतु ॥१४ ॥

'सएईलह्रीं' च नित्यं नैर्ऋत्यां मां सदावतु । 'सहकहलह्रीं' पातु प्रतीच्यां मे द्वितीयकम् । 'सकलह्रीं' तु वायव्ये सदा मां परिरक्षतु । 'सएईलह्रीं । सहक-हलह्रीं सकलह्रीं' तु । नन्द्याराधितविद्येयं सर्वाङ्गं मे सदावतु ॥१५ ॥

'हसकलह्रीं' वायव्ये 'सहकलह्रीं' उत्तरे । 'सकहलह्रीं' ईशान्ये सुन्दरी पातु मां सदा । 'हसकलह्रीं सहकलह्रीं सकहलह्रीं' मां । ऊर्ध्वं रक्षतु मे नित्यं सूर्यपूज्या महोदया ॥१६ ॥

'कएईलह्रीं हसकहलह्रीं हसकलह्रीं' च । सर्वाङ्गं वै शक्रपूज्या सततं परिरक्षतु ॥१७ ॥

'कएईलह्रीं हकहलह्रीं हसकलह्रीं' च । ब्रह्माणी मां सदा पायाच्छ्रीम-त्रिपुरसुन्दरी ॥१८ ॥

'हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं' च। 'हसकलहसकहलसकलह्रीं' शाङ्करी। चतुष्कूटा महाविद्या पाताले मां सदावतु ॥१९॥

'हसकलह्रीं' आधारं। 'हसकहलह्रीं' लिङ्गं। 'सकलह्रीं' पातु नाभिं। 'सहकलह्रीं' हृदये। 'सहकहलह्रीं' कण्ठं। 'सहसकलह्रीं' नाभ्याम्। 'हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं। सहकलह्रीं सहकहलह्रीं सहसकलह्रीं।' मनोभवा सदा पातु रससंख्या महाप्रभा। षट्कूटा वैष्णवी विद्या पातु मां सुन्दरी परा ॥२०॥

'कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं' च। दुर्वाससा प्रपूज्या मां दिक्षु विद्या सदावतु ॥२१॥

'कहएईलह्रीं हलएईलह्रीं सकएईलह्रीं'। क्रोधेन पूजिता देवी विदिक्षु परिरक्षतु ॥२२॥

'हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं'। महाज्ञानमयी विद्या षोडशी मां सदावतु ॥२३॥

'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं'। सर्वाङ्गं मे सदा पातु बीजरूपा च षोडशी ॥२४॥

मतान्तरे— श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं। सर्वाङ्गं मे सदा पातु पूर्णरूपा तुं षोडशी ॥२४॥

'ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं स्त्रीं ऐं क्रों क्रीं ईं हुं' महादेवी। श्रीमहाषोडशी पूर्णा प्रथिता भुवनत्रये। ज्ञानेन मृत्युशमनी शिरस्था सर्वतोऽवतु। श्रीमहाषोडशी पूर्णा महादेवेन पूजिता, यस्या विज्ञानमात्रेण मृत्योर्मृत्युर्भवेत्स्वयम् ॥२५॥

'ऐं कएईलह्रीं क्लीं हसकहलह्रीं सौः सकलह्रीं सोहं हौं हंसः ह्रीं सकलह्रीं सौः हसकहलह्रीं क्लीं कएईलह्रीं ऐं' ब्रह्मस्वरूपिणी। अष्टादशाक्षरी विद्या परमानन्दचिद्घना। नेत्रवेदा(४२) त्मकैर्वर्णैर्युता मां सर्वतोऽवतु ॥२६॥

इति ते कथितं देवि ब्रह्मविद्याकलेवरम्।
त्रैलोक्यमोहनं नाम कवचं ब्रह्मरूपकम्॥

सप्तकोटिमहाविद्यास्तन्त्रेषु कथिताः प्रिये ।
तासां सारात्सारतरा याश्च विद्याः सुगोपिताः ॥
बहुनात्र किमुक्तेन श्रीमहाषोडशी परा ।
प्रकाशिता मया देवि यां पृच्छसि पुनः पुनः ॥
महाविद्यामयं ब्रह्मकवचं मन्मुखोदितम् ।
गुरुमभ्यर्च्य विधिवत्कवचं प्रपठेत्ततः ॥
देवीमभ्यर्च्य विधिवत्पुरश्चर्यां समाचरेत् ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा दशांशं हवनादिकम् ॥
ततः सुसिद्धकवचः पुण्यात्मा मदनोपमः ।
मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तस्य पुरश्चर्यां विना ततः ॥
वक्त्रे तस्य वसेद्वाणी कमला निश्चला गृहे ।
पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्त्वा मूलेनैव पठेत्सकृत् ॥
दशवर्षसहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ।
आत्मानं तन्मयं कृत्वा यः पठेत्कवचं परम् ॥
यं यं पश्यति वै शीघ्रं तस्य दासो भवेद्ध्रुवम् ।
विलिख्य भूर्जे घुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि ॥
कण्ठे वा यदि वा बाहौ स कुर्याद्दासवज्जगत् ॥
त्रिलोकीं क्षोभयत्येव त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥
तद्रात्रं प्राप्य शस्त्राणि महास्त्रादीनि पार्वति ।
माल्यानि कुसुमानीव सुखदानि भवन्ति हि ॥
इदं कवचमज्ञात्वा यो जपेत्सुन्दरीं पराम् ।
नवलक्षं प्रजप्त्वापि तस्य विद्या न सिध्यति ॥
स शस्त्रघातमाप्नोति सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ।
इदमेव परं यस्माद्भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पठनीयं मुमुक्षुभिः ॥

भूवेश्मगत्रिवृतषोडशनागशक्र-
दिग्युग्मवस्वनलकोणगबिन्दुमध्ये ।
सिंहासनोपरिगतावरपीठमध्ये
प्रोत्फुल्लपद्मनिलयां त्रिपुरां भजेऽहम् ॥

॥इति त्रैलोक्यमोहनाख्यकवचम् ॥

[अस्य कवचस्य तूत्कीलनम्— 'ॐ हसकलह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं सकलह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं श्रीं श्रीं श्रीं क्रीं क्रीं क्रीं' रुद्रसूच्यग्रेण मूलविद्याशापमुत्कीलयोत्कीलय स्वाहा ॥इति ॥]

■

दिव्यमङ्गलाध्यानम्

[रुद्रयामल तन्त्र में वर्णित दिव्य-मंगला-ध्यान अत्यन्त गोपनीय है। भगवती पार्वती देवी के लक्षाधिकबार पूछने पर भगवान् ईश्वर ने उन्हें यह सर्वोत्तमोत्तम, भोगमोक्षप्रद, सर्वसौभाग्यवर्धक तथा सर्वरोगारिमृत्युघ्न स्तोत्र कहा है। इसके ध्यान से फिर जन्म नहीं लेना पड़ता। इसमें भगवती का पूरा ध्यान दिया गया है।]

अस्य श्रीदिव्यमङ्गळाध्यानमहामन्त्रस्य आनन्दक्षिणामूर्ति-ऋषये नमः। पंक्तिच्छन्दसे नमः। श्रीराजराजेश्वरीपरदेवतायै नमः। बालामनुभिः बीजशक्ति-कीलकं कर्तव्यम्।

श्रीराजराजेश्वरीप्रसादसिद्धयर्थे जपे विनियोगः। मूलेन करषडङ्गन्यासौ। ध्यानम्—

आरक्ताभां त्रिनेत्रां मणिमुकुटमयीमक्षमालां दधानां
हस्ताम्भोजैः सपाशाङ्कुशमदनधनुस्सायकैर्विस्फुरन्तीम्।
आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहपरिविलसत्तारहारोज्ज्वलाङ्गीं
ध्यायेत्कामाङ्कसंस्थामरुणिमवसनामीश्वरीमीश्वराणाम्॥

लमित्यादिपञ्चोपचारपूजा।

श्रीदेव्युवाच—

देवदेव महादेव सच्चिदानन्दविग्रह।
पञ्चकृत्यपरेशान परमानन्ददायक॥१॥
श्रीराजराजराजेशी या श्रीत्रिपुरसुन्दरी।
तस्या ध्यानं ममाचक्ष्व यदि ते करुणा मयि॥२॥

ईश्वर उवाच—

लक्षवारसहस्राणि वारितापि पुनः पुनः।
स्त्रीस्वभावान्महादेवि पुनस्त्वं परिपृच्छसि॥३॥

इतः पूर्वं मया नोक्तं गोप्याद्गोप्यतरं शिवे ।
येनाहमपि युद्धेषु देवासुरजयी सदा ॥४ ॥
निगमागमकोटीनां सारात्सारतरं शिवे ।
श्रीराजराजराजेश्या ध्यानं सर्वोत्तमोत्तमम् ॥५ ॥
तव स्नेहात्प्रवक्ष्यामि भोगमोक्षप्रदं नृणाम् ।
सर्वरोगारिमृत्युघ्नं सर्वसौभाग्यवर्धनम् ॥६ ॥
भूतप्रेतपिशाचादिकृत्यारिशमनं शुभम् ।
यद्ध्यानाज्जननीगर्भे न पुनर्जायते नरः ॥७ ॥
अनेककोटिब्रह्माण्डकोटीनां बहिरुर्ध्वतः ।
सहस्रकोटिविस्तीर्णसुधासिन्धोस्तु मध्यमे ॥८ ॥
रत्नद्वीपे जगद्दीपे शतकोटिप्रविस्तरे ।
पञ्चविंशतितत्त्वात्मपञ्चविंशतिवप्रकैः ॥९ ॥
नवरत्नमयैः स्तम्भैर्हाटकाकलितैः शुभैः ।
अनेककोटिविततैर्मणिकुट्टिममण्डितैः ॥१० ॥
जातीचम्पकपुन्नागकेतकीबकुलादिभिः ।
बिल्वैश्च सहकारैश्च कल्पकैश्च कदम्बकैः ॥११ ॥
मन्दारपारिजातैश्च संतानाद्यैः सुशोभितैः ।
सर्वर्तुकुसुमैः सर्ववाञ्छितार्थफलप्रदैः ॥१२ ॥
वसन्तमन्मथानीकरक्षितैः पक्षिसंकुलैः ।
नदीनदसहस्रैश्च सुधाधिकरसोत्तमैः ॥१३ ॥
स्वर्णदीशतसाहस्रैः कूलोद्यत्कल्पपादपैः ।
स्वर्णसारसहंसालिलसत्सौवर्णपङ्कजैः ॥१४ ॥
अन्यैश्च विविधैः पक्षिलक्षैः पूर्णैः सुलक्षणैः ।
शतयोजनमुन्नप्रैर्गोपुराट्टालमण्डपैः ॥१५ ॥
रविकोटिसमप्रख्यैः काञ्चनैर्मणितोरणैः ।
अनेकादित्यसंकाशैर्विराजितदिगन्तरैः ॥१६ ॥

त्रिलक्षयोजनाय़ाममहापद्मवनावृते ।
सहस्रयोजनायामचिन्तामणिगृहान्तरे ॥१७॥
नवशक्तिलसद्योगपीठे तत्त्वमयाम्बुजे ।
शतयोजनविस्तीर्णे श्रीचक्रान्तस्त्रिकोणके ॥१८॥
चतुष्पीठान्तरे बिन्दौ चन्द्रसूर्याग्निकोटिभे ।
पञ्चब्रह्मात्मके मञ्चे सर्वतत्त्वमये शुभे ॥१९॥
महामायायवनिकामहिते सुबृहत्तरे ।
सषडासनषट्कोणे चतुरासनगर्भिते ॥२०॥
तुर्यपीठान्तषट्त्रिंशत्तत्त्वोद्यद्धंसतूलिके ।
सर्वविद्यामये सर्वतेजोमयशुभास्तरे ॥२१॥
कोटिकन्दर्पलावण्यशिववामाङ्कवासिनीम् ।
एककालोदितानेकचन्द्रकोट्यर्कपाटलाम् ॥२२॥
कालाग्निकोटिसदृशां कान्त्या यावकलोहिताम् ।
जपाकुसुमसंकाशामजपामजपात्मिकाम् ॥२३॥
प्रभापाटलितानेककोटिब्रह्माण्डमण्डलाम् ।
कुंकुमोदकसंकाशां दाडिमीकुसुमारुणाम् ॥२४॥
बालार्ककोटिभां त्र्यक्षां बालेन्दुमुकुटोज्ज्वलाम् ।
पाशांकुशेक्षुकोदण्डपञ्चबाणलसत्कराम् ॥२५॥
अचञ्चलतटित्कोटिप्रभापिङ्गलवाससा ।
समावृतां सुवृत्तोरुजघनस्तनमण्डलाम् ॥२६॥
कोटिशःकोटिघटितसुधाकरसुधाप्लुताम् ।
अनर्घरत्नखचितमुकुटाञ्चितमस्तकाम् ॥२७॥
पारिजातप्रसूनश्रीवाहिधम्मिल्लबन्धनाम् ।
मुक्तालिमालाविलसदलकाढ्यमुखाम्बुजाम् ॥२८॥
कलङ्ककार्श्यनिर्मुक्तशरच्चन्द्रनिभाननाम् ।
ललाटकान्तिविभवैर्विजितार्धसुधाकराम् ॥२९॥

सान्द्रसौरभ्यसंपन्नकस्तूरीतिलकाञ्चिताम् ।
फालभूतिलकीभूतलोचनां कामलोचनाम् ॥३० ॥
कटाक्षसरणीनिर्यत्करुणापूर्णवीक्षणाम् ।
भ्रूलताजितकन्दर्पकरकार्मुकविभ्रमाम् ।३१ ॥
विकसत्तिलपुष्पश्रीविजयोद्यतनासिकाम् ।
सूर्येन्दुमण्डलाकारमणिताटङ्कमण्डिताम् ॥३२ ॥
शुक्राकारतिरस्कारिनासाभरणभासुराम् ।
रत्नाङ्कितलसत्स्वर्णकर्णपूरोपशोभिताम् ॥३३ ॥
जपाविद्रुमलावण्यललिताधरपल्लवाम् ।
दाडिमीबीजसंदोहसंदेहरदनावलीम् ॥३४ ॥
शीतांशुशतसंकाशकान्तिसंतानहासिनीम् ।
अनौपम्यगुणोपेतचिबुकोद्देशशोभिताम् ॥३५ ॥
वीणारवगुणादायिनिजवाणीगुणोदयाम् ।
कर्पूरवीटिकामोदसमाकर्षद्दिगन्तराम् ॥३६ ॥
मणिदर्पणदर्पघ्नकपोलफलकप्रभाम् ।
प्रसन्नवदनाम्भोजसमन्दहसितेक्षणाम् ॥३७ ॥
मणिमङ्गलसूत्रेण विलसत्कम्बुकन्धराम् ।
श्रितकल्पलताभूतभुजवल्लीचतुष्टयाम् ॥३८ ॥
तप्तकाञ्चनसंनद्धवैडूर्याङ्गदभूषणाम् ।
पद्मरागशिलादर्शकङ्कणाढ्यकराम्बुजाम् ॥३९ ॥
रत्नाङ्गुलीयनिवहैर्लसदङ्गुलिपल्लवाम् ।
ताराहारझरीभास्वत्स्तनहाटकभूधराम् ॥४० ॥
पाटीरपङ्ककर्पूरकुङ्कुमालङ्कृतस्तनीम् ।
बिन्दुत्रयाद्यवक्त्राब्जस्तनद्वितयगुह्यकाम् ॥४१ ॥
कुचभारनमन्मध्यत्रिवलीललितोदराम् ।
मुक्तामाणिक्यवैडूर्यसम्बद्धोदरबन्धनाम् ॥४२ ॥

जाह्नवीसरिदावर्तशोभिनाभिविराजिताम् ।
अनर्घरत्नखचितरशनाजघनस्थलाम् ॥४३ ॥
सुवृत्तजङ्घोरुकाण्डां गूढगुल्फां गुडालकाम् ।
शिञ्जानमणिमञ्जीरमञ्जुपादाब्जमञ्जुलाम् ॥४४ ॥
रत्नग्रैवेयवलयां मुकुटाङ्गदकङ्कणाम् ।
कम्बुकण्ठीं सुनासाढ्यां बिम्बोष्ठीमुडुपाननाम् ॥४५ ॥
नवयौवनमध्यस्थां साङ्गाभरणसंयुताम् ।
सर्वश्रृङ्गारवेषाढ्यां सर्वाभरणभूषिताम् ॥४६ ॥
चन्दनागरुकर्पूरमृगनाभिसुगन्धिनीम् ।
तनुदीर्घाङ्गुलीभास्वन्नखचन्द्रविराजिताम् ।४७ ॥
कारणेशशिरोरत्ननिघृष्टचरणाम्बुजाम् ।
पञ्चप्रेतासनासीनां पञ्चप्रणवरूपिणीम् ॥४८ ॥
सृष्टिस्थित्युपसंहारतिरोधानुग्रहोद्यताम् ।
अष्टत्रिंशत्कलारूपामष्टवाग्देवतावृताम् ॥४९ ॥
षोढान्यासमहाभूषां षोडशार्णस्वरूपिणीम् ।
इच्छाज्ञानक्रियानन्दचित्पञ्चकविलासिनीम् ॥५० ॥
प्रपञ्चादिजगन्मूर्तिमन्त्रदैवतमातृकाम् ।
सप्तकोटिमहामन्त्ररूपिणीं चित्स्वरूपिणीम् ॥५१ ॥
षडध्वसौधश्रृङ्गाटविहाररसपेशलाम् ।
षड्विधैक्यानुसंधानपरचिद्वयोम्नि संस्थिताम् ॥५२ ॥
षडम्बुरुहचक्रान्तस्फुरत्सौदामिनीप्रभाम् ।
षड्वक्त्रगजवक्त्राभ्यां पार्श्वयोरुपसेविताम् ॥५३ ॥
अणिमाद्यावृतामाद्यामणिमाद्यष्टसिद्धिदाम् ।
सकृत्प्रणाममात्रेण विरिञ्चादिपदप्रदाम् ॥५४ ॥
कल्याणगुणसम्पन्नां नतकल्याणदायिनीम् ।
सर्वमङ्गलदां देवीं सर्वमङ्गलविग्रहाम् ॥५५ ॥

अनेकजन्मसंसिद्धसुकृताराध्यपादुकाम् ।
सर्वलोकैकजननीं सर्वलोकैकनायिकाम् ॥५६ ॥
सचामराभ्यां श्रीवाग्भ्यां पार्श्वयोरुपवीजिताम् ।
मन्त्रिणीदण्डिनीनीतिविधानाकर्णनोत्सुकाम् ॥५७ ॥
कलाचीवीटिकाच्छत्रभृङ्गारादर्शपादुकाम् ।
मणिवीणां शुकं शारीं तालवृन्तं कमण्डलुम् ॥५८ ॥
पानपात्रं स्वर्णवेत्रं पूर्णस्वर्णघटद्वयम् ।
जयकाहलिकां भेरीं शङ्खदुन्दुभिमर्दलान् ॥५९ ॥
मकरध्वजपङ्क्तिं च हंससिंहध्वजावलीम् ।
दिव्यानि धूपपात्राणि तथा सौवर्णदीपिकाम् ॥६० ॥
बिभ्रतीभिश्च बालान्नपूर्णाताराभिरादरात् ।
गायत्र्या चैव सावित्र्या सिद्धलक्ष्म्यादिशक्तिभिः ॥६१ ॥
वाग्वादिन्या नकुल्या च तुरगारूढयावृताम् ।
कपालशूलधारिण्या शूलिन्या बगलाह्वया ॥६२ ॥
सम्पत्कर्या च साम्राज्यलक्ष्म्या च कुरुकुल्लया ।
पद्मावत्या रेणुकया भीमकाल्या च दुर्गया ॥६३ ॥
नीलकण्ठ्या महाकाल्या भद्रकाल्या च भद्रया ।
गङ्गाद्याभिः सरिद्भिश्च मातृभिश्च सुसेविताम् ॥६४ ॥
महाषोढोदिताशेषदेवतागणसेविताम् ।
गणेशग्रहनक्षत्रयोगिनीराशिरूपिणीम् ॥६५ ॥
पञ्चाशत्पीठमध्यस्थां पञ्चाशद्वर्णरूपिणीम् ।
मातृकापीठमध्यस्थां मातृकाष्टकवर्गिणीम् ॥६६ ॥
नवचक्रात्मिकां देवीं नवचक्राधिदेवताम् ।
नित्यानन्दमयीं नित्यां नित्याषोडशिकान्विताम् ॥६७ ॥
सर्वपीठमयीमाद्यां पीठत्रितयमध्यगाम् ।
ओड्याणपीठनिलयां गुरुमण्डलनायिकाम् ॥६८ ॥

अनन्तयोगिनीबृन्दैरणिमाद्यैर्महोज्ज्वलैः ।
कोटिकोटिप्रभिन्नैश्च कोटिबालार्कसन्निभैः ॥६९ ॥

चतुस्समयविद्याभिः षड्विधैर्योगिनीगणैः ।
षड्दर्शनाधिदेवैश्च पञ्चाम्नायाधिदैवतैः ॥७० ॥

चतुरायतनोद्भासिगणेशार्कहरीश्वरैः ।
नवावरणदेवीभिर्नवधा योगिनीगणैः ॥७१ ॥

सेवितामरुणानेककोटिकोट्यर्कपाटलाम् ।
ब्रह्माणीकोटिसहितब्रह्मकोटिभिरावृताम् ॥७२ ॥

अनेककोटिभिश्चैव बालार्कायुतसंनिभैः ।
नामपारायणपरैर्लक्ष्मीनारायणैः स्तुताम् ॥७३ ॥

ज्वलन्मन्युभिरत्युग्रैः शतरुद्रीयसंस्तुतैः ।
रुद्राणीकोटिसहितै रुद्रकोटिभिरर्चिताम् ॥७४ ॥

अनेकशरभाघोरबडवानलभैरवैः ।
दुर्गाभिः कालिकाभिश्च महाकाल्या च संवृताम् ॥७५ ॥

गणपैर्वीरभद्रैश्च बटुकैः क्षेत्रपालकैः ।
सुकुमारैः कुमारैश्च तथा हरिहरात्मजैः ॥७६ ॥

अनेकदशदिक्पालैश्चन्द्रार्कवसुकोटिभिः ।
सनकाद्यैश्च योगीन्द्रैः सप्तर्षीणां च कोटिभिः ॥७७ ॥

नारदादिसुरर्षीणां कोटिभिः परिसेविताम् ।
शङ्खपद्मनिधीनां च कोटिभिः परिसेविताम् ॥७८ ॥

अप्सरोयक्षगन्धर्वकिन्नराणां च कोटिभिः ।
कोटिभिर्गुह्यकानां च सविद्याधरकोटिभिः ॥७९ ॥

भैरवीभैरवाणां च कोटिकोटिभिरावृताम् ।
सुरासुराणां कोटीनां कोटिभिः परिसेविताम् ॥८० ॥

सर्वमन्त्रमयीं देवीं सच्चिदानन्दविग्रहाम् ।
इच्छाज्ञानक्रियारूपामिच्छाकलितविग्रहाम् ॥८१ ॥
परादिवैखरीरूपां महामायां परात्पराम् ।
महालक्ष्मीं महादेवीं महात्रिपुरसुन्दरीम् ॥८२ ॥
जगदाह्लादनकरीं जगत्सङ्कल्पविग्रहाम् ।
जगत्संजीवनोद्युक्तां जगद्रञ्जनकारिणीम् ॥८३ ॥
महाकामकलारूपां चतुरासनसंस्थिताम् ।
राजराजेश्वराङ्कस्थां राजराजेश्वरेश्वरीम् ॥८४ ॥
एवं ध्यात्वा पराशक्तिं हृदि श्रीचक्ररूपिणीम् ।
पूर्वोक्तन्यासशुद्धात्मा स्वात्माभेदेन भावयेत् ॥८५ ॥
अन्तर्यागक्रमेणैव शुद्धिद्रव्यसमन्वितः ।
रक्ताम्बरस्रगालेपरक्तभूषणभूषितः ॥८६ ॥
लाक्षारुणगृहे स्थित्वा पूजां कुर्यात्समाहितः ।
आवाहनादिभेदांश्च दश मुद्राः प्रदर्शयेत् ॥८७ ॥
यथाशक्ति जपेद्विद्वान् श्रीविद्यां सर्वसिद्धिदाम् ।
सौभाग्यदण्डिनीमुद्रां रिपुजिह्वाग्रहन्त्रिणीम् ॥८८ ॥
शाक्तं च तिलकं कुर्वन्मुखवेष्टनमाचरेत् ।
पुनः संपूर्णया चैव गलोर्ध्वं विन्यसेद्बुधः ॥८९ ॥
व्यापकान्ते योनिमुद्रां मुखे क्षिप्त्वाभिवादयेत् ।
ब्रह्मरन्ध्रे न्यसेत्पूर्वं मणिबन्धद्वये पुनः ॥९० ॥
ललाटेऽनामिकां कृत्वा त्रैलोक्यस्याप्यहं प्रभुः ।
गुरूपदिष्टमार्गेण षोडशार्णं न्यसेत्ततः ॥९१ ॥
संहारं च ततः सृष्टिं स्थितिन्यासं समाचरेत् ।
ऋष्यादिकन्यासपूर्वं षडङ्गन्यासमाचरेत् ॥९२ ॥
चक्रपूजापरो मन्त्री श्रीचक्रार्चनपूर्वकम् ।
बिन्दुबिन्दुद्वयारूढहार्दबिन्दुस्वरूपकम् ॥९३ ॥

महाकामकलारूपमात्मानं भावयेद्धिया ।
सम्पूर्णं चिन्तयेद्विद्वान् ब्रह्मरन्ध्रेऽरुणप्रभाम् ॥९४ ॥
स्रवस्सुधाषोडशार्णां सर्वसौभाग्यदां स्मरेत् ।
षोडशार्णं महामन्त्रं मन्त्रराजोत्तमोत्तमम् ॥९५ ॥
सकृच्छ्रवणमात्रेण कोटिजन्माघनाशनम् ।
महापातककोटीनां भञ्जनं स्मृतिमात्रतः ॥९६ ॥
उपपातकदौर्भाग्यशमनं भुक्तिमुक्तिदम् ।
विषरोगादिदारिद्र्यमृत्युसंहारकारकम् ॥९७ ॥
सप्तकोटिमहामन्त्रपारायणफलप्रदम् ।
शतरुद्रीयकोटीनां जपयज्ञफलप्रदम् ॥९८ ॥
चतुस्समुद्रपर्यन्तभूदानफलदं शिवे ।
सहस्रकोटिगोदानफलदं ध्यानमात्रतः ॥९९ ॥
कोट्यश्वमेधफलदं जरामृत्युनिवारणम् ।
किं पुनर्बहुनोक्तेन शिवसायुज्यदायकम् ॥१०० ॥
घुटिकापादुकासिद्धिखेचरत्वादिदायकम् ।
ब्रह्मविष्णुमहेशाद्यैर्जप्तं यत्पदसिद्धये ॥१०१ ॥
तत्पदं देशिकाल्लब्धुं षोडशार्णं महामनुम् ।
सहस्रं प्रजपेद्विद्वान् त्रिशतं शतमेव वा ॥१०२ ॥
स जीवन्मुक्त एव स्यात्सर्वसौभाग्यसुन्दरः ।
चतुःषष्टिकलापूर्णहृदयः सदयोदयः ॥१०३ ॥
श्रीगुरोः पादुका मूर्ध्नि श्रीचक्रं हृदि देवता ।
श्रीविद्या यस्य जिह्वाग्रे स साक्षात्परमः शिवः ॥१०४ ॥
सहस्रारसुधाक्लृप्तषडम्भोरुहमण्डलः ।
आचन्द्रतारकस्थायिनिजवंशयशोज्ज्वलः ॥१०५ ॥
श्रीचक्रदेवीश्रीनाथस्वात्मनामैक्यमामृशन् ।
त्रैलोक्यमरुणं ध्यात्वा श्रीविद्यां यो जपेत्सुधीः ॥१०६ ॥

स योगी कृतकृत्यश्च चराचरविभुर्भवेत् ।
सृष्टिस्थितिलयादीनां कृत्याकृत्यविभञ्जकः ॥१०७॥
जङ्गमस्थावरोद्भूतविषविद्रावकोविदः ।
दिव्यमङ्गलकल्याणगुणरत्नैरलङ्कृतः ॥१०८॥
मृतसंजीवको नित्यो महाद्भुतचरित्रभूः ।
सिद्धचारणगन्धर्वयक्षरक्षोरगैः स्तुतः ॥१०९॥
विचरन्सकलाँल्लोकान्निग्रहानुग्रहक्षमः ।
महालक्ष्मीमयो भूत्वा लक्ष्मीबृन्दैश्च सेवितः ॥११०॥
भुञ्जानो बहुलान्भोगान् मूर्तिमानिव मन्मथः ।
सृष्टिस्थित्युपसंहारकर्ता शिव इवापरः ॥१११॥
राजराजेश्वरीरूपो राजराजाभिवन्दितः ।
कुलकोटिं समुद्धृत्य शिवयोरैक्यमाप्नुयात् ॥
इदं ध्यानं मया प्रोक्तं श्रीविद्याप्रीतिदायकम् ॥११२॥

॥इति दिव्यमङ्गलाध्यानम् ॥

■

संक्षिप्त-श्रीचक्रनित्यार्चनविधिः

[यहाँ पर वर्तमान युग में भक्तों की समय-सीमा को देखते हुए संक्षिप्ततर रूप में भगवती की पूजा-विधि दी जा रही है। इसमें भगवती की षोडशोपचार पूजा दी गई है। इसके अतिरिक्त यथालब्ध पूजोपचारों को मूलमन्त्र से भी भगवती को समर्पित किया जा सकता है।]

ध्यानम्— सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ।
पाणिभ्यामलि पूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम् ॥

आवाहनम्— कनकमयवितर्दिशोभमानं
दिशि दिशि पूर्णसुवर्णकुम्भयुक्तम् ।
मणिमयमण्डपमध्यमेहि मात-
र्मयि कृपया हि समर्चनं गृहीतुम् ॥

आसनम्— कनकमयवितर्दिस्थापिते तूलिकाढ्ये
विविधकुसुमकीर्णे कोटिबालार्कवर्णे ।
भगवति रमणीये रत्नसिंहासनेऽस्मि-
न्नुपविश पदयुग्मं हेमपीठे निधेहि ॥

पाद्यम्— दूर्वया सरसिजान्वितं विष्णुक्रान्तया च सहितं कुसुमाढ्यम् ॥
पद्मयुग्मसदृशे पदयुग्मे पाद्यमेतदुररीकुरु मातः ॥

अर्घ्यम्— गन्धपुष्पयवसर्षपदूर्वासंयुतं तिलकुशाक्षतमिश्रम् ।
हेमपात्रनिहितं सह रत्नैरर्घ्यमेतदुररीकुरु मातः ॥

आचमनम्— जलजद्युतिना करेण जातीफलकंकोललवंगगन्धयुक्तैः ।
अमृतैरमृतैरिवाहृतैर्भगवत्याचमनं विधीयताम् ॥

मधुपर्कः — निहितः कनकस्य संपुटे पिहितो रत्नपिधानकेन सह।
तदयं भवती करेऽर्पितो मधुपर्को भवति प्रगृह्यताम्॥

स्नानम्— दधिदुग्धघृतैः समाक्षिकैः सितया शर्करया समन्वितैः।
स्नपयामि तवाहमादृतो जननि! त्वां पुनरुष्णवारिभिः॥

वस्त्राणि— बालार्कद्युतिदाडिमीयकुसुमप्रस्पर्धिसर्वोत्तमं
मातस्त्वं परिधेहि दिव्यवसनं भक्त्या मया कल्पितम्।
मुक्ताभिर्ग्रथितं सकञ्चुकमिदं स्वीकृत्य पीतप्रभं
तप्तस्वर्णसमानवर्णबहुलं प्रावर्णमंगीकुरु॥

आभरणानि— मंजीरे पदयोर्निधाय रुचिरे विन्यस्य काञ्चीं कटौ
मुक्ताहारमुरोजयोरनुपमां नक्षत्रमालां गले।
केयूराणि भुजेषु रत्नवलयश्रेणीः करेषु क्रमात्
ताटङ्के तव कर्णयोर्विनिदधे शीर्षे च चूडामणिम्॥

गन्धम्— मातर्भालतले तवातिविमले काश्मीरकस्तूरिका
कर्पूरागरुभिः करोमि तिलकं देहेऽङ्गरागं ततः।
वक्षोजादिषु यक्षकर्दमरसैः सिक्ताञ्च पुष्पद्रवैः
पादौ कुंकुमलेपनादिभिरहं सम्पूजयामि क्रमात्॥

पुष्पाणि— मन्दारकुन्दकरवीरलवङ्गपुष्पै-
स्त्वां देवि संततमहं परिपूजयामि।
जातीजपाबकुलचम्पककेतकादि
नानाविधानि कुसुमानि च तेऽर्पयामि॥

धूपम्— लाक्षासम्मिलितैः शिलारसयुतैः श्रीवाससम्मिश्रितैः
कर्पूराकलितैः सितामधुयुतैर्गोसर्पिषा लोडितैः।

श्रीखण्डागुरुगुग्गुलुप्रभृतिभिर्नानाविधैर्वस्तुभिः
धूपं ते परिकल्पयामि जननि स्नेहात्त्वमंगीकुरु ॥

दीपम्— रत्नालंकृतहेमपात्रनिहितैर्गोसर्पिषोद्दीपितै-
र्दीपैर्दीर्घतरान्धकारभिदुरैर्बालार्ककोटिप्रभैः ।
आताम्रज्ज्वलदुज्ज्वलज्ज्वलनवद्रत्नप्रदीपैः सदा
मातस्त्वामहमादरादनुदिनं नीराजयाम्युच्चकैः ॥

नैवेद्यम्— सापूपसूप-दधि-दुग्ध-सिताघृतानि
सुस्वादु-भक्ष्य-परमान्न-पुरःसराणि ।
शाकोल्लसन्मरिच-जीरक-बाह्लिकानि
भक्ष्याणि भुङ्क्ष्व जगदम्ब मयार्पितानि ॥

नीराजनम्— सविनयमथ दत्त्वा जानुयुग्मं धरायां
सपदि शिरसि धृत्वा पात्रमारार्तिकस्य ।
मुखकमलसमीपे तेऽम्ब सार्धत्रिवारं
भ्रमयति मयि भूयात्ते कृपार्द्रः कटाक्षः ॥

पुष्पाञ्जलिः— चरणनलिनयुग्मं पङ्कजैः पूजयित्वा
कनककमलमालां कण्ठदेशेऽर्पयित्वा ।
शिरसि विनिहितोऽयं रत्नपुष्पांजलिस्ते
हृदयकमलमध्ये देवि हर्षन्तनोतु ॥

वन्दनम्— रक्तोत्पलारक्ततलप्रभाभ्यां
ध्वजोर्ध्वरेखाकुलिशांकिताभ्याम् ।
अशेषवृन्दारकवन्दिताभ्यां
नमो भवानीपदपंकजाभ्याम् ॥

क्षमा-प्रार्थना

एषा भक्त्या तव विरचितया मया देवि पूजा
स्वीकृत्यैनां सपदि सकलान्मेऽपराधान् क्षमस्व।
न्यूनं यत्तत्तव करुणया पूर्णतामेतु सद्यः
सानन्दम्मे हृदयकमले तेऽस्तु नित्यं निवासः॥

[एतदनन्तर यथाशक्ति जप करके समर्पण करें।]

■

श्रीसूक्तम्

['श्रीसूक्तम्' से श्रीयन्त्र का अभिषेक किया जाता है। अन्य भी अनेकों पुरश्चरणात्मक अनुष्ठान किए जाते हैं। 'हिरण्यवर्णाम्' आदि पन्द्रह ऋचाओं को त्रिपुराप्रीतिकारक बतलाया गया है। इसकी ऋचाओं को वाग्बीज से सम्पुटित करके पाठ करने से वाक्पतित्व, श्रीबीजसम्पुटन से देवतात्मा तथा कामबीज के सम्पुटीकरण से जगद्वशीकरण होता है। पूजा करने में अशक्त होने पर इसके तीन पाठ कर लेने से पूजा का फल मिलता है। किसी भी त्रिपुरोपासक को इसका नित्यपाठ करना चाहिए, इससे अधिक पुण्यप्रद और कोई पाठ नहीं है। इसके जान लेने से समस्त पाप वैसे ही नष्ट हो जाते हैं जैसे कच्ची मिट्टी के घड़े पर पानी डालने से घड़ा नष्ट हो जाता है।]

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१॥
तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥२॥
अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवीर्जुषताम् ॥३॥
कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥४॥
चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।
तां पद्मनीमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ॥५॥
आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ॥६॥
उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन्कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥७॥

क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ॥८ ॥
गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥९ ॥
मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥१० ॥
कर्दमेन प्रजा भूता मयि संभव कर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥११ ॥
आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥१२ ॥
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१३ ॥
आर्द्रां यष्करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१४ ॥
तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरुषानहम् ॥१५ ॥
यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
श्रियः पञ्चदशर्चञ्च श्रीकामः सततं जपेत् ॥१६ ॥
सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुकगन्धमाल्यशोभे ।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥१७ ॥
धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसुः ।
धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणं धनमश्विनौ ॥१८ ॥
वैनतेय सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा ।
सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः ॥१९ ॥
न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः ।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां श्रीसूक्तं जपेत् ॥२० ॥

पद्मानने पद्म ऊरू पद्माक्षि पद्मसम्भवे ।
तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम् ॥२१ ॥
विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम् ।
विष्णुप्रियसखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम् ॥२२ ॥
महालक्ष्मीं च विद्महे विष्णुपत्नीं च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥२३ ॥
पद्मानने पद्मिनि पद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि ।
विश्वप्रिये विश्वमनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व ॥२४ ॥
आनन्दः कर्दमः श्रीदः चिक्लीत इति विश्रुताः ।
ऋषयः श्रियपुत्राश्च मयि श्रीर्देवी देवता ॥२५ ॥
ऋणरोगादिदारिद्र्यं पापक्षुदपमृत्यवः ।
भयशोकमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा ॥२६ ॥
श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते ।
धनं धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ॥२७ ॥

॥इति फलश्रुतिसहितं श्रीसूक्तं समाप्तम् ॥

■

देव्यथर्वशीर्षम्

[देव्यथर्वशीर्ष से भगवती ललिता का नित्याभिषेक किया जाता है । इसका दश बार पाठ करने वाला समस्त पातकों से मुक्त शुद्ध हो जाता है । प्रातः पाठ करने से रात्रि के पाप तथा सायंकाल पाठ करने से दिन भर के पाप नष्ट हो जाते हैं । रात्रिकाल में इसके पाठ से वाक्सिद्धि होती है । जब मंगलवार को अश्विनी नक्षत्र पड़े, तब इसका भगवती के समक्ष पाठ करने से मुक्ति प्राप्त होती है ।]

ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवीति ॥१ ॥

साऽब्रवीत्— अहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् । शून्यं चाशून्यं च ॥२ ॥

अहमानन्दानानन्दौ । अहं विज्ञानाविज्ञाने । अहं ब्रह्म-ब्रह्मणी । द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये । इति चाथर्वणी श्रुतिः । अहं पञ्चभूतानि । अहं पञ्चतन्मात्रा । अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि अहमखिलं जगत् ॥३ ॥

वेदोऽहमवेदोऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अजाहमनजाहम् । अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् ॥४ ॥

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः ।
अहं मित्रावरुणावुभौ विभर्मि अहमिद्राग्नी अहमश्विनावुभौ ॥५ ॥
अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि अहं विष्णुमुरुक्रमम् ।
ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि ॥६ ॥
अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ।
अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ॥
अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन् मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे ।
य एवं वेद स दैवीं सम्पदमाप्नोति ॥७ ॥
ते देवा अब्रुवन्—
नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥८ ॥

तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं
वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम्।
दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्या-
महेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः ॥९॥
देवीं वाचमजनयन्त देवा-
स्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना
धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ॥१०॥
कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम्।
सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् ॥११॥
महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥१२॥
अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव।
तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ॥१३॥
कामो योनिः कमला वज्रपाणि-
र्गुहा हंसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः।
पुनर्गुहा सकला मायया च
पुरूच्यैषा विश्वमातादिविद्योम् ॥१४॥

एषाऽऽत्मशक्तिः। एषा विश्वमोहिनी। पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरा। एषा श्रीमहाविद्या। य एवं वेद स शोकं तरति ॥१५॥

नमस्ते अस्तु भगवती मातरस्मान् पाहि सर्वतः ॥१६॥

सैषा वैष्णव्यष्टौ वसवः। सैषैकादश रुद्राः। सैषा द्वादशादित्याः। सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च। सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाच-यक्ष-सिद्धाः। सैषा सत्त्वरजस्तमांसि। सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी। सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः। सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतिः कलाकाष्ठादि-काल-विश्वरूपिणी। तामहं प्रणौमि नित्यम् ॥१७॥

पापापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम्।
अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शिवाम् ॥१८॥
वियदाकार-संयुक्तं वीतिहोत्र-समन्वितम्।
अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ॥१९॥
एवमेकाक्षरं ब्रह्म यतयः शुद्ध-चेतसः।
ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः ॥२०॥
वाङ्माया ब्रह्मसूस्तस्मात् षष्ठवक्त्रसमन्वितम्।
सूर्यो वामश्रोत्र-बिन्दु-संयुक्ताष्टा तृतीयकम् ॥२१॥
नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधरयुक् ततः।
विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महदानन्ददायकः ॥२२॥
हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातः सूर्यसमप्रभाम्।
पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम्।
त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्त-काम-दुघा-भजे ॥२३॥
नमामि त्वां महादेवीं महाभयविनाशिनीम्।
महादुर्ग-प्रशमनीं महाकारुण्यरूपिणीम् ॥२४॥

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया। यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता। यस्या लक्ष्यं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या। यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा। एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका। एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यतेऽनेका। अत एवोच्यते अज्ञेयानन्ता-लक्ष्याजैकानेकेति ॥२५॥

मन्त्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी।
ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी।
यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता ॥२६॥

तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम्।
नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णव-तारिणीम् ॥२७॥

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पञ्चाथर्वशीर्षजपफलमाप्नोति। इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्चा स्थापयति शतलक्षं प्रजप्त्वापि सोऽर्चासिद्धिं न विन्दति। शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः ॥२८॥

दशवारं पठेत् यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते।
महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः ॥२९॥

सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायंप्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति। निशीथे तुरीय-सन्ध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति। नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासान्निध्यं भवति। प्राणप्रतिष्ठायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति। भौमाश्विन्यां महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति। स महामृत्युं तरति य एवं वेद। इत्युपनिषत् ॥३०॥

॥इति देव्यथर्वशीर्षं सम्पूर्णम्॥

■

देव्युपनिषद्

[बह्वृचोपनिषद् को ही देव्युपनिषद् कहा जाता है। इससे भी भगवती का अभिषेक -कर्म संपादित किया जाता है। इसमें देवी से ही इस चराचर प्रपञ्च की उत्पत्ति निदर्शित है। यही देवी ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र की जनयित्री हैं। यही षोडशी, श्रीविद्या, पंचदशाक्षरी बाला, अंबिका, बगला, मातंगी आदि अनेकों नामों से अभिहित हैं।]

ओं वाङ्मे मनसीति शान्तिः।

देवी ह्येकाग्र एवासीत्। सैव जगदण्डमसृजत्।

कामकलेति विज्ञायते। शृंगारकलेति विज्ञायते ॥१॥

तस्या एव ब्रह्मा अजीजनत्। विष्णुरजीजनत्। रुद्रोऽजीजनत्। सर्वे मरुद्गणा अजीजनत्। गन्धर्वाप्सरसः किन्नरा वादित्रवादिनः समन्तादजीजनत्। भोग्यमजीजनत्। सर्वमजीजनत्। सर्वं शाक्तमजीजनत्। अण्डजं स्वेदजमुद्भिज्जं जरायुजं यत्किंचैतत् प्राणि स्थावरजंगमं मनुष्यमजीजनत् ॥२॥

सैषा परा शक्तिः। सैषा शांभवी-विद्या कादि-विद्येति वा हादिविद्येति वा सादिविद्येति वा। रहस्यमोमों वाचि प्रतिष्ठा ॥३॥

सैव पुरत्रयं शरीरत्रयं व्याप्य बहिरन्तरवभासयन्ती देश-काल-वस्त्वन्तरासंगान्महात्रिपुरसुन्दरी वै प्रत्यक्चितिः ॥४॥

सैवात्मा ततोऽन्यमसत्यमनात्मा। अत एषा ब्रह्म-संवित्तिर्भावाभावकला-विनिर्मुक्ता चिद्विद्याऽद्वितीय-ब्रह्मसंवित्तिः सच्चिदानन्दलहरी महात्रिपुरसुन्दरी बहिरन्तरनुप्रविश्य स्वयमेकैव विभाति। यदस्ति सन्मात्रम्। यद्विभाति चिन्मात्रम्। यत्प्रियमानन्दं तदेतत् पूर्वाकारा महात्रिपुरसुन्दरी। त्वं चाहं च सर्वं विश्वं सर्वदेवता इतरत् सर्वं महात्रिपुरसुन्दरी। सत्यमेकं ललिताख्यं वस्तु तदद्वितीयमखण्डार्थं परं ब्रह्म ॥५॥

पंचरूप-परित्यागादर्वरूप-प्रहाणतः। अधिष्ठानं परं तत्त्वमेकं सच्छिष्यते महत्॥ इति ॥६॥

प्रज्ञानं ब्रह्मेति वा अहं ब्रह्मास्मीति वा भाष्यते । तत्त्वमसीत्येव संभाष्यते । अयमात्मा ब्रह्मेति वा ब्रह्मैवाहमस्मीति वा ॥७ ॥

योऽहमस्मीति वा सोहमस्मीति वा योऽसौ सोऽहमस्मीति वा या भाव्यते सैषा षोडशी श्रीविद्या पंचदशाक्षरी श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी बालाम्बिकेति बगलेति वा मातंगीति स्वयंवर-कल्याणीति भुवनेश्वरीति चामुण्डेति चण्डेति वाराहीति तिरस्करिणीति राजमातंगीति वा शुकश्यामलेति वा लघुश्यामलेति वा अश्वारूढेति वा प्रत्यंगिरा धूमावती सावित्री गायत्री सरस्वती ब्रह्मानन्दकलेति ॥८ ॥

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् । यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः । यस्तन्न वेद किं ऋचा करिष्यति । य इत्तद्विदुस्त इमे समासते । इत्युपनिषत् ॥९ ॥

॥ओं वाङ्मे मनसीति शान्तिः ॥

॥इति देव्युपनिषत् ॥

त्रिपुरोपनिषद्

[यह भी देव्युपनिषद् है, इससे भी भगवती के अभिषेक का विधान है। यह भी भगवती द्वारा ही समस्त सृष्टि की उत्पत्ति की व्याख्या करता है। यह महोपनिषत् भगवती का स्वरूप है। इसके पाठ से चारों वेदों के पाठ का फल प्राप्त होता है।]

ओं वाङ्मे मनसि प्रतिष्ठिता। मनो मे वाचि प्रतिष्ठितम्। आविरावी-र्म एधि। वेदस्य म आणीस्थः। श्रुतं मे मा प्रहासीः। अनेनाधीतेनाहोरात्रान् संदधामि। ऋतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्॥ ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ओं तिस्रः पुरास्त्रिपथा विश्वचर्षणा अत्राकथा अक्षराः संनिविष्टाः। अधिष्ठायैनामजरा पुराणी महत्तरा महिमा देवतानाम्॥१॥

नवयोनीर्नव चक्राणि दीधिरे नवैव योगा नव योगिन्यश्च। नवानां चक्रे अधिनाथाः स्योना नव मुद्रा नव भद्रा महीनाम्॥२॥

एका सा आसीत् प्रथमा सा नवासीदासोनविंशदासोनत्रिंशत्। चत्वा-रिंशदथ तिस्रः समिधा उशतीरिव मातरो मा विशन्तु॥३॥

ऊर्ध्वज्वलनं ज्योतिरग्रे तमो वै तिश्चीनमजरं तद्रजोऽभूत्। आनन्दनं मोदनं ज्योतिरिन्द्रो रेता उ वै मण्डला मण्डयन्ति॥४॥

तिस्रश्च रेखाः सदनानी भूमेस्त्रिविष्टपास्त्रिगुणास्त्रिप्रकाशाः। एतत् पुरं पूरकं पूरकाणा-मत्र प्रथेते मदनो मदन्या॥५॥

मदन्तिका मानिनी मंगला च सुभगा च सा सुन्दरी सिद्धिमत्ता। लज्जा मति-स्तुष्टि-रिष्टा च पुष्टा लक्ष्मी-रुमा ललिता लालपन्ती॥६॥

इमां विज्ञाय सुधया मदन्ती परिस्रुता तर्पयन्तः स्वपीठम्। नाकस्य पृष्ठे महतो वसन्ति परं धाम त्रैपुरं चाविशन्ति॥७॥

कामो योनिः कमला वज्रपाणि-र्गुहा हसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः। पुनर्गुहा सकला मायया च पुरूच्येषा विश्वमातादि-विद्या॥८॥

षष्ठं सप्तम-मथ वह्निसारथि-मस्या मूल-त्रिक्रमा-देश अन्तः। कथ्यं कविं कल्पकं काममीशं तुष्टुवांसो अमृतत्वं भजन्ते ॥९॥

त्रिविष्टपं त्रिमुखं विश्वमातु-र्नवरेखाः स्वरमध्यं तदीळे। बृहत्तिथी-र्दश पंचादि नित्या सा षोडशी पुरमध्यं बिभर्ति ॥१०॥

द्वा मण्डला द्वा स्तना बिम्बमेकं मुखं चाध-स्त्रीणि गुहा सुदनानि। कामीं कलां काम्यरूपां विदित्वा नरो जायते कामरूपश्च काम्यः ॥११॥

परिस्रुतं झषमाद्यं पलं च भक्तानि योनीः सुपरिष्कृतानि। निवेदयन् देवतायै महत्यै स्वात्मीकृत्य सुकृती सिद्धिमेति ॥१२॥

सृण्येव सितया विश्वचर्षणिः पाशेन प्रति-बध्नात्यभीकान्। इषुभिः पंचभिर्धनुषा विध्यत्यादिशक्तिररुणा विश्वजन्या ॥१३॥

भगः शक्ति-र्भगवान् काम ईश उभा दातारावह सौभगानाम्। सम-प्रधानौ समसत्त्वौ समोजौ तयोः शक्ति-रजरा विश्वयोनिः ॥१४॥

परिस्रुता हविषा पावितेन प्रसंकोचे गलिते वै मनस्तः। शर्वः सर्वस्य जगतो विधाता धर्ता हर्ता विश्वरूपत्व-मेति ॥१५॥

इयं महोपनिषत् त्रिपुराया यामक्षरं परमे गीर्भिरीट्टे। एषग्र्यजुः परमेतच्च सामेवायमथर्वेयमन्या च विद्योम् ॥१६॥ ओं ह्रीमों ह्रीं इत्युपनिषत्॥

॥ओं वाङ्मे मनसीति शान्तिः॥

॥ इति त्रिपुरोपनिषत्॥

■

भावनोपनिषद्

[इससे भी भगवती के अभिषेक-पाठादि का विधान है। इसके आदि में सभी के लिए कल्याण की कामना की गई है। तथा अपने लिए कानों से अच्छा सुनने, आँखों से अच्छा देखने तथा शरीर से अच्छा करने की कामना की गई है। इसमें समस्त ऋतुओं, रचनाओं, पदार्थों से भगवती के स्वरूप की निर्मिति का वर्णन है। तथा अन्त में सभी में अभेदान्वय से भगवती का वास कहा गया है। जो तीन, दो या एक मुहूर्त भी इस भावना से भावित होते हैं, वे जीवन्मुक्त होकर शिवयोगी कहलाते हैं। यह कादिमतानुसारि अन्तश्चक्रभावना है।]

ओं भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवाः। भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाँसस्तनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति न-स्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पति-र्दधातु। ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

आत्मान-मखण्डमण्डलाकार-मावृत्य सकल-ब्रह्माण्ड-मण्डलं स्वप्रकाशं ध्यायेत्। श्रीगुरुः सर्वकारण-भूता शक्तिः॥१॥ तेन नवरन्ध्ररूपो देहः॥२॥ नवचक्ररूपं श्रीचक्रम्॥३॥ वाराही पितृरूपा कुरुकुल्ला बलिदेवता माता॥४॥ पुरुषार्थाः सागराः॥५॥ देहो नवरत्नद्वीपः॥६॥ त्वगादिसप्तधातु-रोम-संयुक्तः॥७॥ सङ्कल्पाः कल्पतरव-स्तेजः कल्पकोद्यानम्॥८॥ रसनया भाव्यमाना मधुराम्ल-तिक्त-कटु-कषाय-लवण रसाः षड्तवः॥९॥ ज्ञान मर्घ्यं ज्ञेयं हवि-र्ज्ञाता होता ज्ञातृ-ज्ञान-ज्ञेयानामभेद-भावनं श्रीचक्रपूजनम्॥१०॥ नियतिः श्रृंगारादयो रसा अणिमादयः॥११॥ काम-क्रोध-लोभ-मोह-मद-मात्सर्य-पुण्य-पाप-मया ब्रह्मयाद्यष्ट- शक्तयः॥१२॥ आधार-नवकं मुद्राशक्तयः॥१३॥ पृथिव्यप्तेजो-वाय्वाकाश-श्रोत्र-त्वक्-चक्षु-र्जिह्वा-घ्राण-वाक्-पाणि-पाद-पायूपस्थानि मनोविकाराः कामाकर्षिण्यादि षोडश-शक्तयः॥१४॥ वचनादानागमन-विसर्गानन्द-हानोपादानोपेक्षाख्य-बुद्धयोऽनंगकुसुमाद्यष्टौं॥१५॥ अलंबुसा कुहु-र्विश्वोदरा वारणा हस्तिजिह्वा यशोवती पयस्विनी गान्धारी पूषा शंखिनी सरस्वतीडा पिंगला सुषुम्ना चेति चतुर्दश नाड्यः सर्वसंक्षोभिण्यादि चतुर्दश-शक्तयः॥१६॥

प्राणापान-व्यानोदान-समान-नाग-कूर्म-कृकर-देवदत्त-धनं-जया दशवायवः सर्वसिद्धिप्रदादि-बहिर्दशार-देवताः ॥१७॥ एतद्वायु- संसर्गकोपाधि-भेदेन रेचकः पाचकः शोषको दाहकः प्लावक इति प्राणमुख्यत्वेन पंचधा जठराग्निर्भवति ॥१८॥ क्षारक उद्धारकः क्षोभको जंभको मोहक इति नागप्राधान्येन पंचविधास्ते मनुष्याणां देहगा भक्ष्य-भोज्य-शोष्य-लेह्य-पेयात्मक-पंचविधमन्नं पाचयन्ति ॥१९॥

एता दशवह्निकलाः सर्वज्ञाद्या अन्तर्दशारदेवताः ॥२०॥ शीतोष्ण-सुखदुःखेच्छाः सत्त्वं रजस्तमो वशिन्यादि-शक्तयोऽष्टौ ॥२१॥ शब्दादि-तन्मात्राः पंचपुष्पबाणाः ॥२२॥ मन इक्षुधनुः ॥२३॥ रागः पाशः ॥२४॥ द्वेषोऽङ्कुशः ॥२५॥ अव्यक्त-महदहंकाराः कामेश्वरी-वज्रेश्वरी-भगमालिन्योऽन्तस्त्रिकोणगा देवताः ॥२६॥ निरुपाधिक-संविदेव कामेश्वरः ॥२७॥ सदानन्दपूर्णः स्वात्मैव परदेवता ललिता ॥२८॥ लौहित्य-मेतस्य सर्वस्य विमर्शः ॥२९॥ अनन्य-चित्तत्वेन च सिद्धिः ॥३०॥ भावनायाः क्रिया उपचारः ॥३१॥ अहं त्वमस्ति नास्ति कर्तव्य-मकर्तव्य-मुपासितव्यमिति विकल्पानामात्मनि विलापनं होमः ॥३२॥ भावना-विषयाणामभेदभावना तर्पणम् ॥३३॥ पंचदश-तिथिरूपेण कालस्य परिणामावलोकनम् ॥३४॥ एवं मुहूर्तत्रितयं मुहूर्त-द्वितयं मुहूर्त-मात्रं वा भावनापरो जीवन्मुक्तो भवति स एव शिवयोगीति गद्यते ॥३५॥ कादिमतेनान्तश्चक्र-भावनाः प्रतिपादिताः ॥३६॥ य एवं वेद सोऽथर्वशिरोऽधीते ॥३७॥ इत्युपनिषत् ॥ ओं भद्रं कर्णेभिरिति शान्तिः ॥

॥इति भावनोपनिषत् ॥

■

श्रीललितानामार्चनात्मको भागः

ललितासहस्रनामस्तोत्रम्

अस्य श्रीललितासहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य वशिन्यादिवाग्देवता ऋषयः। अनुष्टुप्छन्दः। श्रीललिताम्बादेवता। प्रथमकूटं बीजम्। तृतीयकूटं शक्तिः द्वितीयकूटं कीलकम्। श्रीललिताम्बाप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। कूटत्रयेण षडङ्ग-न्यासः।

अथ ध्यानश्लोकः—

सिन्दूरारूणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्-
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम्।
पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेद् परामम्बिकाम् ॥५२॥

श्रीहयग्रीव उवाच—

श्रीमाता श्रीमहाराज्ञी श्रीमत्सिंहासनेश्वरी।
चिदग्निकुण्डसम्भूता देवकार्यसमुद्यता ॥५३॥
उद्यद्भानुसहस्राभा चतुर्बाहुसमन्विता।
रागस्वरूपपाशाढ्या क्रोधाकाराङ्कुशोज्ज्वला ॥५४॥
मनोरूपेक्षुकोदण्डा पञ्चतन्मात्रसायका।
निजारुणप्रभापूरमज्जद्ब्रह्माण्डमण्डला ॥५५॥
चम्पकाशोकपुन्नागसौगन्धिकलसत्कचा।
कुरुविन्दमणिश्रेणीकनत्कोटीरमण्डिता ॥५६॥
अष्टमीचन्द्रविभ्राजदलिकस्थलशोभिता।
मुखचन्द्रकलङ्काभमृगनाभिविशेषका ॥५७॥
वदनस्मरमाङ्गल्यगृहतारणचिल्लिका।
वक्त्रलक्ष्मीपरीवाहचलन्मीनाभलोचना ॥५८॥
नवचम्पकपुष्पाभनासादण्डविराजिता।
ताराकान्तितिरस्कारिनासाभरणभासुरा ॥५९॥

कदम्बमञ्जरीक्लृप्तकर्णपूरमनोहरा ।
ताटङ्कयुगलीभूततपनोडुपमण्डला ॥६०॥
पद्मरागशिलादर्शपरिभाविकपोलभूः ।
नवविद्रुमबिम्बश्रीन्यक्कारिरदनच्छदा ॥६१॥
शुद्धविद्याङ्कुराकारद्विजपंक्तिद्वयोज्ज्वला ।
कर्पूरवीटिकामोदसमाकर्षिदिगन्तरा ॥६२॥
निजसंलापमाधुर्यविनिर्भर्त्सितकच्छपी ।
मन्दस्मितप्रभापूरमज्जत्कामेशमानसा ॥६३॥
अनाकलितसादृश्यचिबुकश्रीविराजिता ।
कामेशबद्धमाङ्गल्यसूत्रशोभितकन्धरा ॥६४॥
कनकाङ्गदकेयूरकमनीयभुजान्विता ।
रत्नग्रैवेयचिन्ताकलोलमुक्ताफलान्विता ॥६५॥
कामेश्वरप्रेमरत्नमणिप्रतिपणस्तनी ।
नाभ्यालवालरोमालिलताफलकुचद्वयी ॥६६॥
लक्ष्यरोमलताधारतासमुन्नेयमध्यमा ।
स्तनभारदलन्मध्यपट्टबन्धवलित्रया ॥६७॥
अरुणारुणकौसुम्भवस्त्रभास्वत्कटीतटी ।
रत्नकिङ्किणिकारम्यरशनादामभूषिता ॥६८॥
कामेशज्ञातसौभाग्यमार्दवोरुद्वयान्विता ।
माणिक्यमुकुटाकारजानुद्वयविराजिता ॥६९॥
इन्द्रगोपपरिक्षिप्तस्मरतूणाभजङ्घिका ।
गूढगुल्फा कूर्मपृष्ठजयिष्णुप्रपदान्विता ॥७०॥
नखदीधितिसञ्छन्ननमज्जनतमोगुणा ।
पदद्वयप्रभाजालपराकृतसरोरुहा ॥७१॥
शिञ्जानमणिमञ्जीरमण्डितश्रीपदाम्बुजा ।
मरालीमन्दगमना महालावण्यशेवधिः ॥७२॥

सर्वारूणाऽनवद्याङ्गी सर्वाभरणभूषिता ।
शिवकामेश्वराङ्कस्था शिवा स्वाधीनवल्लभा ॥७३ ॥
सुमेरुश्रृङ्गमध्यस्था श्रीमन्नगरनायिका ।
चिन्तामणिगृहान्तस्था पञ्चब्रह्मासनस्थिता ॥७४ ॥
महापद्माटवीसंस्था कदम्बवनवासिनी ।
सुधासागरमध्यस्था कामाक्षी कामदायिनी ॥७५ ॥
देवर्षिगणसङ्घातस्तूयमानात्मवैभवा ।
भण्डासुरवधोद्युक्तशक्तिसेनासमन्विता ॥७६ ॥
सम्पत्करीसमारूढसिन्धुरव्रजसेविता ।
अश्वारूढाधिष्ठिताश्वकोटिकोटिभिरावृता ॥७७ ॥
चक्रराजरथारूढसर्वायुधपरिष्कृता ।
गेयचक्ररथारूढसर्वायुधपरिष्कृता ॥७८ ॥ मन्त्रिणी परिसेविता
किरिचक्ररथारूढदण्डनाथापुरस्कृता ।
ज्वालामालिनिकाक्षिप्तवह्निप्राकारमध्यगा ॥७९ ॥
भण्डसैन्यवधोद्युक्तशक्तिविक्रमहर्षिता ।
नित्यापराक्रमाटोपनिरीक्षणसमुत्सुका ॥८० ॥
भण्डपुत्रवधोद्युक्तबालाविक्रमनन्दिता ।
मन्त्रिण्यम्बाविरचितविशुक्रवधतोषिता ॥८१ ॥
विषङ्गप्राणहरणवाराहीवीर्यनन्दिता ।
कामेश्वरमुखालोककल्पितश्रीगणेश्वरा ॥८२ ॥
महागणेशनिर्भिन्नविघ्नयन्त्रप्रहर्षिता ।
भण्डासुरेन्द्रनिर्मुक्तशस्त्रप्रत्यस्त्रवर्षिणी ॥८३ ॥
कराङ्गुलिनखोत्पन्ना नारायणदशाकृतिः ।
महापाशुपतास्त्राग्निनिर्दग्धासुरसैनिका ॥८४ ॥
कामेश्वरास्त्रनिर्दग्धसभण्डासुरशून्यका ।
ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रादिदेवसंस्तुतवैभवा ॥८५ ॥

हरनेत्राग्निसन्दग्धकामसञ्जीवनौषधिः ।
श्रीमद्वाग्भवकूटैकस्वरूपमुखपङ्कजा ॥८६ ॥
कण्ठाधःकटिपर्यन्तमध्यकूटस्वरूपिणी ।
शक्तिकूटैकतापन्नकट्यधोभागधारिणी ॥८७ ॥
मूलमन्त्रात्मिका मूलकूटत्रयकलेवरा ।
कुलामृतैकरसिका कुलसङ्केतपालिनी ॥८८ ॥
कुलाङ्गना कुलान्तस्था कौलिनी कुलयोगिनी ।
अकुला समयान्तस्था समयाचारतत्परा ॥८९ ॥
मूलाधारैकनिलया ब्रह्मग्रन्थिविभेदिनी ।
मणिपूरान्तरुदिता विष्णुग्रन्थिविभेदिनी ॥९० ॥
आज्ञाचक्रान्तरालस्था रुद्रग्रन्थिविभेदिनी ।
सहस्राराम्बुजारूढा सुधासाराभिवर्षिणी ॥९१ ॥
तडिल्लतासमरुचिः षट्चक्रोपरि संस्थिता ।
महाशक्तिः कुण्डलिनी बिसतन्तुतनीयसी ॥९२ ॥
भवानी भावनागम्या भवारण्यकुठारिका ।
भद्रप्रिया भद्रमूर्तिर्भक्तसौभाग्यदायिनी ॥९३ ॥
भक्तप्रिया भक्तिगम्या भक्तिवश्या भयापहा ।
शाम्भवी शारदाराध्या शर्वाणी शर्मदायिनी ॥९४ ॥
शाङ्करी श्रीकरी साध्वी शरच्चन्द्रनिभानना ।
शातोदरी शान्तिमती निराधारा निरञ्जना ॥९५ ॥
निर्लेपा निर्मला नित्या निराकारा निराकुला ।
निर्गुणा निष्कला शान्ता निष्कामा निरुपप्लवा ॥९६ ॥
नित्यमुक्ता निर्विकारा निष्प्रपञ्चा निराश्रया ।
नित्यशुद्धा नित्यबुद्धा निरवद्या निरन्तरा ॥९७ ॥
निष्कारणा निष्कलङ्का निरुपाधिर्निरीश्वरा ।
नीरागा रागमथना निर्मदा मदनाशिनी ॥९८ ॥

निश्चिन्ता निरहङ्कारा निर्मोहा मोहनाशिनी ।
निर्ममा ममताहन्त्री निष्पापा पापनाशिनी ॥९९ ॥
निष्क्रोधा क्रोधशमनी निर्लोभा लोभनाशिनी ।
निःसंशया संशयघ्नी निर्भवा भवनाशिनी ॥१०० ॥
निर्विकल्पा निराबाधा निर्भेदा भेदनाशिनी ।
निर्नाशा मृत्युमथनी निष्क्रिया निष्परिग्रहा ॥१०१ ॥
निस्तुला नीलचिकुरा निरपाया निरत्यया ।
दुर्लभा दुर्गमा दुर्गा दुःखहन्त्री सुखप्रदा ॥१०२ ॥
दुष्टदूरा दुराचारशमनी दोषवर्जिता ।
सर्वज्ञा सान्द्रकरुणा समानाधिकवर्जिता ॥१०३ ॥
सर्वशक्तिमयी सर्वमङ्गला सद्गतिप्रदा ।
सर्वेश्वरी सर्वमयी सर्वमन्त्रस्वरूपिणी ॥१०४ ॥
सर्वयन्त्रात्मिका सर्वतन्त्ररूपा मनोन्मनी ।
माहेश्वरी महादेवी महालक्ष्मीर्मृडप्रिया ॥१०५ ॥
महारूपा महापूज्या महापातकनाशिनी ।
महामाया महासत्त्वा महाशक्तिर्महारतिः ॥१०६ ॥
महाभोगा महैश्वर्या महावीर्या महाबला ।
महाबुद्धिर्महासिद्धिर्महायोगेश्वरेश्वरी ॥१०७ ॥
महातन्त्रा महामन्त्रा महायन्त्रा महासना ।
महायागक्रमाराध्या महाभैरवपूजिता ॥१०८ ॥
महेश्वरमहाकल्पमहाताण्डवसाक्षिणी ।
महाकामेशमहिषी महात्रिपुरसुन्दरी ॥१०९ ॥
चतुःषष्ट्युपचाराढ्या चतुःषष्टिकलामयी ।
महाचतुःषष्टिकोटियोगिनीगणसेविता ॥११० ॥
मनुविद्या चन्द्रविद्या चन्द्रमण्डलमध्यगा ।
चारुरूपा चारुहासा चारुचन्द्रकलाधरा ॥१११ ॥

चराचरजगन्नाथा चक्रराजनिकेतना ।
पार्वती पद्मनयना पद्मरागसमप्रभा ॥११२ ॥
पञ्चप्रेतासनासीना पञ्चब्रह्मस्वरूपिणी ।
चिन्मयी परमानन्दा विज्ञानघनरूपिणी ॥११३ ॥
ध्यानध्यातृध्येयरूपा धर्माधर्मविवर्जिता ।
विश्वरूपा जागरिणी स्वपन्ती तैजसात्मिका ॥११४ ॥
सुप्ता प्राज्ञात्मिका तुर्या सर्वावस्थाविवर्जिता ।
सृष्टिकर्त्री ब्रह्मरूपा गोप्त्री गोविन्दरूपिणी ॥११५ ॥
संहारिणी रुद्ररूपा तिरोधानकरीश्वरी ।
सदाशिवाऽनुग्रहदा पञ्चकृत्यपरायणा ॥११६ ॥
भानुमण्डलमध्यस्था भैरवी भगमालिनी ।
पद्मासना भगवती पद्मनाभसहोदरी ॥११७ ॥
उन्मेषनिमिषोत्पन्नविपन्नभुवनावली ।
सहस्रशीर्षवदना सहस्राक्षी सहस्रपात् ॥११८ ॥
आब्रह्मकीटजननी वर्णाश्रमविधायिनी ।
निजाज्ञारूपनिगमा पुण्यापुण्यफलप्रदा ॥११९ ॥
श्रुतिसीमन्तसिन्दूरीकृतपादाब्जधूलिका ।
सकलागमसन्दोहशुक्तिसम्पुटमौक्तिका ॥१२० ॥
पुरुषार्थप्रदा पूर्णा भोगिनी भुवनेश्वरी ।
अम्बिकाऽनादिनिधना हरिब्रह्मेन्द्रसेविता ॥१२१ ॥
नारायणी नादरूपा नामरूपविवर्जिता ।
ह्रींकारी ह्रीमती हृद्या हेयोपादेयवर्जिता ॥१२२ ॥
राजराजार्चिता राज्ञी रम्या राजीवलोचना ।
रञ्जनी रमणी रम्या रणत्-किङ्किणिमेखला ॥१२३ ॥
रमा राकेन्दुवदना रतिरूपा रतिप्रिया ।
रक्षाकरी राक्षसघ्नी रामारमणलम्पटा ॥१२४ ॥

काम्या कामकलारूपा कदम्बकुसुमप्रिया ।
कल्याणी जगतीकन्दा करुणारससागरा ॥१२५॥
कलावती कलालापा कान्ता कादम्बरीप्रिया ।
वरदा वामनयना वारुणीमदविह्वला ॥१२६॥
विश्वाधिका वेदविद्या विन्ध्याचलनिवासिनी ।
विधात्री वेदजननी विष्णुमाया विलासिनी ॥१२७॥
क्षेत्रस्वरूपा क्षेत्रेशी क्षेत्रक्षेत्रज्ञपालिनी ।
क्षयवृद्धिविनिर्मुक्ता क्षेत्रपालसमर्चिता ॥१२८॥
विजया विमला वन्द्या वन्दारुजनवत्सला ।
वाग्वादिनी वामकेशी वह्निमण्डलवासिनी ॥१२९॥
भक्तिमत्कल्पलतिका पशुपाशविमोचिनी ।
संहृताशेषपाखण्डा सदाचारप्रवर्तिका ॥१३०॥
तापत्रयाग्निसन्तप्तसमाह्लादनचन्द्रिका ।
तरुणी तापसाराध्या तनुमध्या तमोपहा ॥१३१॥
चितिस्तत्पदलक्ष्यार्था चिदेकरसरूपिणी ।
स्वात्मानन्दलवीभूतब्रह्माद्यानन्दसन्ततिः ॥१३२॥
परा प्रत्यक्चितीरूपा पश्यन्ती परदेवता ।
मध्यमा वैखरीरूपा भक्तमानसहंसिका ॥१३३॥
कामेश्वरप्राणनाडी कृतज्ञा कामपूजिता ।
शृङ्गाररससम्पूर्णा जया जालन्धरस्थिता ॥१३४॥
ओड्याणपीठनिलया बिन्दुमण्डलवासिनी ।
रहोयागक्रमाराध्या रहस्तर्पणतर्पिता ॥१३५॥
सद्यःप्रसादिनी विश्वसाक्षिणी साक्षिवर्जिता ।
षडङ्गदेवतायुक्ता षाड्गुण्यपरिपूरिता ॥१३६॥
नित्यक्लिन्ना निरुपमा निर्वाणसुखदायिनी ।
नित्याषोडशिकारूपा श्रीकण्ठार्धशरीरिणी ॥१३७॥

प्रभावती प्रभारूपा प्रसिद्धा परमेश्वरी ।
मूलप्रकृतिरव्यक्ता व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी ॥१३८ ॥
व्यापिनी विविधाकारा विद्याविद्यास्वरूपिणी ।
महाकामेशनयनकुमुदाह्लादकौमुदी ॥१३९ ॥
भक्तहार्दतमोभेदभानुमद्भानुसन्ततिः ।
शिवदूती शिवाराध्या शिवमूर्तिः शिवङ्करी ॥१४० ॥
शिवप्रिया शिवपरा शिष्टेष्टा शिष्टपूजिता ।
अप्रमेया स्वप्रकाशा मनोवाचामगोचरा ॥१४१ ॥
चिच्छक्तिश्चेतनारूपा जडशक्तिर्जडात्मिका ।
गायत्री व्याहृतिः सन्ध्याद्विजवृन्दनिषेविता ॥१४२ ॥
तत्त्वासना तत्त्वमयी पञ्चकोशान्तरस्थिता ।
निःसीममहिमा नित्ययौवना मदशालिनी ॥१४३ ॥
मदघूर्णितरक्ताक्षी मदपाटलगण्डभूः ।
चन्दनद्रवदिग्धाङ्गी चाम्पेयकुसुमप्रियां ॥१४४ ॥
कुशला कोमलाकारा कुरुकुल्ला कुलेश्वरी ।
कुलकुण्डालया कौलमार्गतत्परसेविता ॥१४५ ॥
कुमारगणनाथाम्बा तुष्टिः पुष्टिर्मतिर्धृतिः ।
शान्तिः स्वस्तिमती कान्तिर्नन्दिनी विघ्ननाशिनी ॥१४६ ॥
तेजोवती त्रिनयना लोलाक्षी कामरूपिणी ।
मालिनी हंसिनी माता मलयाचलवासिनी ॥१४७ ॥
सुमुखा नलिनी सुभ्रूः शोभना सुरनायिका ।
कालकण्ठी कान्तिमती क्षोभिणी सूक्ष्मरूपिणी ॥१४८ ॥
वज्रेश्वरी वामदेवी वयोऽवस्थाविवर्जिता ।
सिद्धेश्वरी सिद्धविद्या सिद्धमाता यशस्विनी ॥१४९ ॥
विशुद्धिचक्रनिलयाऽऽरक्तवर्णा त्रिलोचना ।
खट्वाङ्गादिप्रहरणा वदनैकसमन्विता ॥१५० ॥

पायसान्नप्रिया त्वक्स्था पशुलोकभयङ्करी ।
अमृतादिमहाशक्तिसंवृता डाकिनीश्वरी ॥१५१ ॥
अनाहताब्जनिलया श्यामाभा वदनद्वया ।
दंष्ट्रोज्ज्वलाक्षमालादिधरा रुधिरसंस्थिता ॥१५२ ॥
कालरात्र्यादिशक्त्यौघवृता स्निग्धौदनप्रिया ।
महावीरेन्द्रवरदा राकिण्यम्बास्वरूपिणी ॥१५३ ॥
मणिपूराब्जनिलया वदनत्रयसंयुता ।
वज्रादिकायुधोपेता डामर्यादिभिरावृता ॥१५४ ॥
रक्तवर्णा मांसनिष्ठा गुडान्नप्रीतमानसा ।
समस्तभक्तसुखदा लाकिन्यम्बास्वरूपिणी ॥१५५ ॥
स्वाधिष्ठानाम्बुजगता चतुर्वक्त्रमनोहरा ।
शूलाद्यायुधसम्पन्ना पीतवर्णातिगर्विता ॥१५६ ॥
मेदोनिष्ठा मधुप्रीता बन्धिन्यादिसमन्विता ।
दध्यन्नासक्तहृदया काकिनीरूपधारिणी ॥१५७ ॥
मूलाधाराम्बुजारूढा पञ्चवक्त्राऽस्थिसंस्थिता ।
अङ्कुशादिप्रहरणा वरदादिनिषेविता ॥१५८ ॥
मुद्गौदनासक्तचित्ता साकिन्यम्बास्वरूपिणी ।
आज्ञाचक्राब्जनिलया शुक्लवर्णा षडानना ॥१५९ ॥
मज्जासंस्था हंसवती मुख्यशक्तिसमन्विता ।
हरिद्रान्नैकरसिका हाकिनीरूपधारिणी ॥१६० ॥
सहस्रदलपद्मस्था सर्ववर्णोपशोभिता ।
सर्वायुधधरा शुक्लसंस्थिता सर्वतोमुखी ॥१६१ ॥
सर्वौदनप्रीतचित्ता याकिन्यम्बास्वरूपिणी ।
स्वाहा स्वधा मतिर्मेधा श्रुतिस्मृतिरनुत्तमा ॥१६२ ॥
पुण्यकीर्तिः पुण्यलभ्या पुण्यश्रवणकीर्तना ।
पुलोमजार्चिता बन्धमोचनी बर्बरालका ॥१६३ ॥

विमर्शरूपिणी विद्या वियदादिजगत्प्रसूः ।
सर्वव्याधिप्रशमनी सर्वमृत्युनिवारिणी ॥१६४॥
अग्रगण्याऽचिन्त्यरूपा कलिकल्मषनाशिनी ।
कात्यायनी कालहन्त्री कमलाक्षनिषेविता ॥१६५॥
ताम्बूलपूरितमुखी दाडिमीकुसुमप्रभा ।
मृगाक्षी मोहिनी मुख्या मृडानी मित्ररूपिणी ॥१६६॥
नित्यतृप्ता भक्तनिधिर्नियन्त्री निखिलेश्वरी ।
मैत्र्यादिवासनालभ्या महाप्रलयसाक्षिणी ॥१६७॥
पराशक्तिः परानिष्ठा प्रज्ञानघनरूपिणी ।
माध्वीपानालसा मत्ता मातृकावर्णरूपिणी ॥१६८॥
महाकैलासनिलया मृणालमृदुदोर्लता ।
महनीया दयामूर्तिर्महासाम्राज्यशालिनी ॥१६९॥
आत्मविद्या महाविद्या श्रीविद्या कामसेविता ।
श्रीषोडशाक्षरीविद्या त्रिकूटा कामकोटिका ॥१७०॥
कटाक्षकिङ्करीभूतकमलाकोटिसेविता ।
शिरःस्थिता चन्द्रनिभा भालस्थेन्द्रधनुःप्रभा ॥१७१॥
हृदयस्था रविप्रख्या त्रिकोणान्तरदीपिका ।
दाक्षायणी दैत्यहन्त्री दक्षयज्ञविनाशिनी ॥१७२॥
दरान्दोलितपत्राक्षी दरहासोज्ज्वलन्मुखी ।
गुरुमूर्तिर्गुणनिधिर्गोमाता गुहजन्मभूः ॥१७३॥
देवेशी दण्डनीतिस्था दहराकाशरूपिणी ।
प्रतिपन्मुख्यराकान्ततिथिमण्डलपूजिता ॥१७४॥
कलात्मिका कलानाथा काव्यालापविमोदिनी ।
स-चामर-रमा-वाणी-सव्यदक्षिणसेविता ॥१७५॥
आदिशक्तिरमेयात्मा परमा पावनाकृतिः ।
अनेककोटिब्रह्माण्डजननी दिव्यविग्रहा ॥१७६॥

क्लींकारी केवला गुह्या कैवल्यपददायिनी ।
त्रिपुरा त्रिजगद्वन्द्या त्रिमूर्तिस्त्रिदशेश्वरी ॥१७७ ॥
त्र्यक्षरी दिव्यगन्धाढ्या सिन्दूरतिलकाञ्चिता ।
उमा शैलेन्द्रतनया गौरी गन्धर्वसेविता ॥१७८ ॥
विश्वगर्भा स्वर्णगर्भाऽवरदा वागधीश्वरी ।
ध्यानगम्याऽपरिच्छेद्या ज्ञानदा ज्ञानविग्रहा ॥१७९ ॥
सर्ववेदान्तसंवेद्या सत्यानन्दस्वरूपिणी ।
लोपामुद्रार्चिता लीलाक्लृप्तब्रह्माण्डमण्डला ॥१८० ॥
अदृश्या दृश्यरहिता विज्ञात्री वेद्यवर्जिता ।
योगिनी योगदा योग्या योगानन्दा युगन्धरा ॥१८१ ॥
इच्छाशक्ति-ज्ञानशक्ति-क्रियाशक्तिस्वरूपिणी ।
सर्वाधारा सुप्रतिष्ठा सदसद्रूपधारिणी ॥१८२ ॥
अष्टमूर्तिरजाजैत्री लोकयात्राविधायिनी ।
एकाकिनी भूमरूपा निर्द्वैता द्वैतवर्जिता ॥१८३ ॥
अन्नदा वसुदा वृद्धा ब्रह्मात्मैक्यस्वरूपिणी ।
बृहती ब्राह्मणी ब्राह्मी ब्रह्मानन्दा बलिप्रिया ॥१८४ ॥
भाषारूपा बृहत्सेना भावाभावविवर्जिता ।
सुखाराध्या शुभकरी शोभना सुलभा गतिः ॥१८५ ॥
राजराजेश्वरी राज्यदायिनी राज्यवल्लभा ।
राजत्कृपा राजपीठनिवेशितनिजाश्रिता ॥१८६ ॥
राज्यलक्ष्मीः कोशनाथा चतुरङ्गबलेश्वरी ।
साम्राज्यदायिनी सत्यसन्धा सागरमेखला ॥१८७ ॥
दीक्षिता दैत्यशमनी सर्वलोकवशङ्करी ।
सर्वार्थदात्री सावित्री सच्चिदानन्दरूपिणी ॥१८८ ॥
देशकालपरिच्छिन्ना सर्वगा सर्वमोहिनी ।
सरस्वतीशास्त्रमयी गुहाम्बा गुह्यरूपिणी ॥१८९ ॥

सर्वोपाधिविनिर्मुक्ता सदाशिवपतिव्रता ।
सम्प्रदायेश्वरी साध्वी गुरुमण्डलरूपिणी ॥१९० ॥
कुलोत्तीर्णा भगाराध्या माया मधुमती मही ।
गणाम्बा गुह्यकाराध्या कोमलाङ्गी गुरुप्रिया ॥१९१ ॥
स्वतन्त्रा सर्वतन्त्रेशी दक्षिणामूर्तिरूपिणी ।
सनकादिसमाराध्या शिवज्ञानप्रदायिनी ॥१९२ ॥
चित्कलानन्दकलिका नन्दिविद्या नटेश्वरी ॥१९३ ॥
मिथ्याजगदधिष्ठाना मुक्तिदा मुक्तिरूपिणी ।
लास्यप्रिया लयकरी लज्जा रम्भादिवन्दिता ॥१९४ ॥
भवदावसुधावृष्टिः पापारण्यदवानला ।
दौर्भाग्यतूलवातूला जराध्वान्तरविप्रभा ॥१९५ ॥
भाग्याब्धिचन्द्रिका भक्तचित्तकेकिघनाघना ।
रोगपर्वतदम्भोलिर्मृत्युदारुकुठारिका ॥१९६ ॥
महेश्वरी महाकाली महाग्रासा महाशना ।
अपर्णा चण्डिका चण्डमुण्डासुरनिषूदनी ॥१९७ ॥
क्षराक्षरात्मिका सर्वलोकेशी विश्वधारिणी ।
त्रिवर्गदात्री सुभगा त्र्यम्बका त्रिगुणात्मिका ॥१९८ ॥
स्वर्गापवर्गदा शुद्धा जपापुष्पनिभाकृतिः ।
ओजोवती द्युतिधरा यज्ञरूपा प्रियव्रता ॥१९९ ॥
दुराराध्या दुराधर्षा पाटलीकुसुमप्रिया ।
महती मेरुनिलया मन्दारकुसुमप्रिया ॥२०० ॥
वीराराध्या विराड्रूपा विरजा विश्वतोमुखी ।
प्रत्यग्रूपा पराकाशा प्राणदा प्राणरूपिणी ॥२०१ ॥
मार्तण्डभैरवाराध्या मन्त्रिणीन्यस्तराज्यधूः ।
त्रिपुरेशी जयत्सेना निस्त्रैगुण्या परापरा ॥२०२ ॥

सत्यज्ञानानन्दरूपा सामरस्यपरायणा ।
कपर्दिनी कलामाला कामधुक्कामरूपिणी ॥२०३॥
कलानिधिः काव्यकला रसज्ञा रसशेवधिः ।
पुष्टा पुरातना पूज्या पुष्करा पुष्करेक्षणा ॥२०४॥
परंज्योतिः परंधाम परमाणुः परात्परा ।
पाशहस्ता पाशहन्त्री परमन्त्रविभेदिनी ॥२०५॥
मूर्तामूर्ता नित्यतृप्ता मुनिमानसहंसिका ।
सत्यव्रता सत्यरूपा सर्वान्तर्यामिणी सती ॥२०६॥
ब्रह्माणी ब्रह्मजननी बहुरूपा बुधार्चिता ।
प्रसवित्री प्रचण्डाऽऽज्ञा प्रतिष्ठा प्रकटाकृतिः ॥२०७॥
प्राणेश्वरी प्राणदात्री पञ्चाशत्पीठरूपिणी ।
विशृङ्खला विविक्तस्था वीरमाता वियत्प्रसूः ॥२०८॥
मुकुन्दा मुक्तिनिलया मूलविग्रहरूपिणी ।
भावज्ञा भावरोगघ्नी भवचक्रप्रवर्तिनी ॥२०९॥
छन्दःसारा शास्त्रसारा मन्त्रसारा तलोदरी ।
उदारकीर्तिरुद्दामवैभवा वर्णरूपिणी ॥२१०॥
जन्ममृत्यु-जरातप्त-जनविश्रान्तदायिनी ।
सर्वोपनिषदुद्घुष्टा शान्त्यतीता कलात्मिका ॥२११॥
गम्भीरा गगनान्तस्था गर्विता गानलोलुपा ।
कल्पनारहिता काष्ठाऽकान्ताकान्तार्धविग्रहा ॥२१२॥
कार्यकारणनिर्मुक्ता कामकेलितरङ्गिता ।
कनत्कनकताटङ्का लीलाविग्रहधारिणी ॥२१३॥
अजा क्षयविनिर्मुक्ता मुग्धा क्षिप्रप्रसादिनी ।
अन्तर्मुखसमाराध्या बहिर्मुखसुदुर्लभा ॥२१४॥
त्रयी त्रिवर्गनिलया त्रिस्था त्रिपुरमालिनी ।
निरामया निरालम्बा स्वात्मारामा सुधास्रुतिः ॥२१५॥

संसारपङ्कनिर्मग्न-समुद्धरणपण्डिता ।
यज्ञप्रिया यज्ञकर्त्री यजमानस्वरूपिणी ॥२१६ ॥
धर्माधारा धनाध्यक्षा धनधान्यविवर्धिनी ।
विप्रप्रिया विप्ररूपा विश्वभ्रमणकारिणी ॥२१७ ॥
विश्वग्रासा विद्रुमाभा वैष्णवी विष्णुरूपिणी ।
अयोनिर्योनिनिलया कूटस्था कुलरूपिणी ॥२१८ ॥
वीरगोष्ठीप्रिया वीरा नैष्कर्म्या नादरूपिणी ।
विज्ञानकलना कल्या विदग्धा वैन्दवासनी ॥२१९ ॥
तत्त्वाधिका तत्त्वमयी तत्त्वमर्थस्वरूपिणी ।
सामगानप्रिया सौम्या सदाशिवकुटुम्बिनी ॥२२० ॥
सव्यापसव्यमार्गस्था सर्वापद्विनिवारिणी ।
स्वस्था स्वभावमधुरा धीरा धीरसमर्चिता ॥२२१ ॥
चैतन्यार्घ्यसमाराध्या चैतन्यकुसुमप्रिया ।
सदोदिता सदा तुष्टा तरुणादित्यपाटला ॥२२२ ॥
दक्षिणादक्षिणाराध्या दरस्मेरमुखाम्बुजा ।
कौलिनीकेवलाऽनर्घ्यकैवल्यपददायिनी ॥२२३ ॥
स्तोत्रप्रिया स्तुतिमती श्रुतिसंस्तुतवैभवा ।
मनस्विनी मानवती महेशी मङ्गलाकृतिः ॥२२४ ॥
विश्वमाता जगद्धात्री विशालाक्षी विरागिणी ।
प्रगल्भा परमोदारा परामोदा मनोमयी ॥२२५ ॥
व्योमकेशी विमानस्था वज्रिणी वामकेश्वरी ।
पञ्चयज्ञप्रिया पञ्चप्रेतमञ्चाधिशायिनी ॥२२६ ॥
पञ्चमी पञ्चभूतेशी पञ्चसंख्योपचारिणी ।
शाश्वती शाश्वतैश्वर्या शर्मदा शम्भुमोहिनी ॥२२७ ॥
धराधरसुता धन्या धर्मिणी धर्मवर्धिनी ।
लोकातीता गुणातीता सर्वातीता शमात्मिका ॥२२८ ॥

बन्धूककुसुमप्रख्या बाला लीलाविनोदिनी ।
सुमङ्गली सुखकरी सुवेषाढ्या सुवासिनी ॥२२९ ॥
सुवासिन्यर्चनप्रीताऽऽशोभना शुद्धमानसा ।
बिन्दुतर्पणसन्तुष्टा पूर्वजा त्रिपुराम्बिका ॥२३० ॥
दशमुद्रासमाराध्या त्रिपुराश्रीवशङ्करी ।
ज्ञानमुद्रा ज्ञानगम्या ज्ञानज्ञेयस्वरूपिणी ॥२३१ ॥
योनिमुद्रा त्रिखण्डेशी त्रिगुणाम्बा त्रिकोणगा ।
अनघाऽद्भुतचारित्रा वाञ्छितार्थप्रदायिनी ॥२३२ ॥
अभ्यासातिशयज्ञाता षडध्वातीतरूपिणी ।
अव्याजकरुणामूर्तिरज्ञानध्वान्तदीपिका ॥२३३ ॥
आबालगोपविदिता सर्वानुल्लङ्घ्यशासना ।
श्रीचक्रराजनिलया श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥२३४ ॥

श्रीशिवाशिवशक्त्यैक्यरूपिणी ललिताम्बिका ॐ ॥

॥ इति ललितासहस्रनामस्तोत्रम् ॥

■

श्रीललितासहस्रनामावलिः

अस्य श्रीललितासहस्रनामस्तोत्रमालामन्त्रस्य वशिन्यादिभ्यो वाग्देवताभ्य ऋषिभ्यो नमः शिरसि । अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे । श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै देवतायै नमः हृदये । क ए ई ल ह्रीं बीजाय गुह्ये । स क ल ह्रीं शक्तये पादयोः । ह स क ह ल ह्रीं कीलकाय नाभौ । चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धयर्थे जपे (श्रीललिताम्बाप्रीत्यर्थ) (पूजने) विनियोगाय सर्वाङ्गे ।

कूटत्रयं द्विरावृत्य बाला वा षडङ्गद्वयम् ।

ध्यानश्लोकः

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ।
पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम् ॥१ ॥

मानसैः पञ्चोपचारैः सम्पूज्य,

ओं-ऐं-ह्रीं-श्री

ओं श्रीमात्रे नमः ॐ
श्रीमहाराज्ञ्यै
श्रीमत्सिंहासनेश्वर्यै
चिदग्निकुण्डसंभूतायै
देवकार्यसमुद्यतायै
उद्यद्भानुसहस्राभायै

ओं चतुर्बाहुसमन्वितायै नमः ॐ
रागस्वरूपपाशाढ्यायै
क्रोधाकारांकुशोज्ज्वलायै
मनोरूपेक्षुकोदण्डायै १०
पञ्चतन्मात्रसायकायै

ॐ निजारुणप्रभापूरमज्जद्ब्रह्माण्डमण्डलायै नमः ॐ
चम्पकाशोकपुन्नागसौगन्धिकलसत्कचायै
कुरुविन्दमणिश्रेणीकनत्कोटीरमण्डितायै

अष्टमीचन्द्रविभ्राजदलिकस्थलशोभितायै
मुखचन्द्रकलङ्काभमृगनाभिविशेषकायै
वदनस्मरमाङ्गल्यगृहतोरणचिल्लिकायै
वक्त्रलक्ष्मीपरीवाहचलन्मीनाभलोचनायै
नवचम्पकपुष्पाभनासादण्डविराजितायै
ताराकान्तितिरस्कारिनासाभरणभासुरायै २०

कदम्बमञ्जरीक्लृप्तकर्णपूरमनोहरायै
ताटङ्कयुगलीभूततपनोडुपमण्डलायै
पद्मरागशिलादर्शपरिभाविकपोलभुवे
नवविद्रुमबिम्बश्रीन्यक्कारिदशनच्छदायै
शुद्धविद्यांकुराकारद्विजपंक्तिद्वयोज्ज्वलायै
कर्पूरवीटिकामोदसमाकर्षिदिगन्तरायै
निजसंल्लापमाधुर्यविनिर्भर्त्सितकच्छप्यै
मन्दस्मितप्रभापूरमज्जत्कामेशमानसायै
अनाकलितसादृश्यचिबुकश्रीविराजितायै
कामेशबद्धमाङ्गल्यसूत्रशोभितकन्धरायै ३०

कनकाङ्गदकेयूरकमनीयभुजान्वितायै
रत्नग्रैवेयचिन्ताकलोलमुक्ताफलान्वितायै
कामेश्वरप्रेमरत्नमणिप्रतिपणस्तन्यै
ॐ नाभ्यालवालरोमालिलताफलकुचद्वय्यै नमः ॐ
लक्ष्यरोमलताधारतासमुन्नेयमध्यमायै
स्तनभारदलन्मध्यपट्टबन्धवलित्रयायै
अरुणारुणकौसुम्भवस्त्रभास्वत्कटीतट्यै
रत्नकिङ्किणिकारम्यरशनादामभूषितायै
कामेशज्ञातसौभाग्यमार्दवोरुद्वयान्वितायै ४०

माणिक्यमुकुटाकारजानुद्वयविराजितायै
इन्द्रगोपपरिक्षिप्तस्मरतूणाभजङ्घिकायै
गूढगुल्फायै
कूर्मपृष्ठजयिष्णुप्रपदान्वितायै
नखदीधितिसञ्छन्ननमज्जनतमोगुणायै
पदद्वयप्रभाजालपराकृतसरोरुहायै
शिञ्जानमणिमञ्जीरमण्डितश्रीपदाम्बुजायै
ॐ मरालीमन्दगमनायै नमः
महालावण्यशेवधये
सर्वारुणायै
अनवद्याङ्ग्यै ५०
सर्वाभरणभूषितायै
शिवकामेश्वराङ्कस्थायै
शिवायै
स्वाधीनवल्लभायै
कामदायिन्यै
देवर्षिगणसंघातस्तूयमानात्मवैभवायै
भण्डासुरवधोद्युक्तशक्तिसेनासमन्वितायै
सम्पत्करीसमारूढसिंधुरव्रजसेवितायै
अश्वारूढाधिष्ठिताश्वकोटिकोटिभिरावृतायै
चक्रराजरथारूढसर्वायुधपरिष्कृतायै
गेयचक्ररथारूढमन्त्रिणीपरिसेवितायै
किरिचक्ररथारूढदण्डनाथापुरस्कृतायै ७०
ज्वालामालिनिकाक्षिप्तवह्निप्राकारमध्यगायै
भण्डसैन्यवधोद्युक्तशक्तिविक्रमहर्षितायै
नित्यापराक्रमाटोपनिरीक्षणसमुत्सुकायै
ॐ सुमेरुमध्यशृङ्गस्थायै नमः
श्रीमन्नगरनायिकायै
चिन्तामणिगृहान्तस्थायै
पञ्चब्रह्मासनस्थितायै
महापद्माटवीसंस्थायै
कदम्बवनवासिन्यै ६०
सुधासागरमध्यस्थायै
कामाक्ष्यै

ॐ भण्डपुत्रवधोद्युक्तबालाविक्रमनन्दितायै नमः
मन्त्रिण्यम्बाविरचितविषङ्गवधतोषितायै
विशुक्रप्राणहरणवाराहीवीर्यनन्दितायै
कामेश्वरमुखालोककल्पितश्रीगणेश्वरायै
महागणेशनिर्भिन्नविघ्नयन्त्रप्रहर्षितायै
भण्डासुरेन्द्रनिर्मुक्तशस्त्रप्रत्यस्त्रवर्षिण्यै
करांगुलिनखोत्पन्ननारायणदशाकृत्यै ८०
महापाशुपतास्त्राग्निनिर्दग्धासुरसैनिकायै
कामेश्वरास्त्रनिर्दग्धसभण्डासुरशून्यकायै
ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रादिदेवसंस्तुतवैभवायै
हरनेत्राग्निसंदग्धकामसंजीवनौषध्यै
श्रीमद्वाग्भवकूटैकस्वरूपमुखपङ्कजायै
कण्ठाधः कटिपर्यन्तमध्यकूटस्वरूपिण्यै
शक्तिकूटैकतापन्नकट्यधोभागधारिण्यै
ॐ मूलमन्त्रात्मिकायै नमः
मूलकूटत्रयकलेवरायै
कुलामृतैकरसिकायै ९०
कुलसंकेतपालिन्यै
कुलाङ्गनायै
कुलान्तस्थायै
कौलिन्यै
कुलयोगिन्यै
अकुलायै
समयान्तस्थायै
समयाचारतत्परायै
मूलाधारैकनिलयायै
ॐ ब्रह्मग्रन्थिविभेदिन्यै नमः १००
मणिपूरान्तरुदितायै
विष्णुग्रन्थिविभेदिन्यै
आज्ञाचक्रान्तरालस्थायै
रुद्रग्रन्थिविभेदिन्यै
सहस्राराम्बुजारूढायै
सुधासाराभिवर्षिण्यै
तटिल्लतासमरुच्यै
षट्चक्रोपरिसंस्थितायै
महाशक्त्यै
कुण्डलिन्यै ११०
बिसतन्तुतनीयस्यै
भवान्यै
भावनागम्यायै

ॐ भवारण्यकुठारिकायै नमः
भद्रप्रियायै
भद्रमूर्तये
भक्तसौभाग्यदायिन्यै
भक्तिप्रियायै
भक्तिगम्यायै
भक्तिवश्यायै
भयापहायै
शाम्भव्यै
शारदाराध्यायै
शर्वाण्यै
शर्मदायिन्यै
शांकर्यै
श्रीकर्यै
साध्व्यै
शरच्चन्द्रनिभाननायै
शातोदर्यै
शान्तिमत्यै
निराधारायै
निरञ्जनायै
निर्लेपायै
निर्मलायै
नित्यायै
निराकारायै
निराकुलायै
निर्गुणायै

ॐ निष्कलायै नमः
शान्तायै
निष्कामायै
निरुपप्लवायै
नित्यमुक्तायै
निर्विकारायै
निष्प्रपञ्चायै
निराश्रयायै
नित्यशुद्धायै
नित्यबुद्धायै
निरवद्यायै
निरन्तरायै
निष्कारणायै
निष्कलङ्कायै
निरुपाधये
निरीश्वरायै
नीरागायै
रागमथन्यै
निर्मदायै
मदनाशिन्यै
निश्चिन्तायै
निरहंकारायै
निर्मोहायै
मोहनाशिन्यै
निर्ममायै
ममताहन्त्र्यै

ॐ निष्पापायै नमः
पापनाशिन्यै
निष्क्रोधायै
क्रोधशमन्यै
निर्लोभायै १७०
लोभनाशिन्यै
निःसंशयायै
संशयघ्न्यै
निर्भवायै
भवनाशिन्यै
निर्विकल्पायै
निराबाधायै
निर्भेदायै
भेदनाशिन्यै
निर्नाशायै १८०
मृत्युमथन्यै
निष्क्रियायै
निष्परिग्रहायै
निस्तुलायै
नीलचिकुरायै
निरपायायै
निरत्ययायै
दुर्लभायै
दुर्गमायै
दुर्गायै
दुःखहन्त्र्यै १९०

ॐ सुखप्रदायै नमः
दुष्टदूरायै
दुराचारशमन्यै
दोषवर्जितायै
सर्वज्ञायै
सान्द्रकरुणायै
समानाधिकवर्जितायै
सर्वशक्तिमय्यै
सर्वमङ्गलायै २००
सद्गतिप्रदायै
सर्वेश्वर्यै
सर्वमय्यै
सर्वमन्त्रस्वरूपिण्यै
सर्वयन्त्रात्मिकायै
सर्वतन्त्ररूपायै
मनोन्मन्यै
माहेश्वर्यै
महादेव्यै
महालक्ष्म्यै २१०
मृडप्रियायै
महारूपायै
महापूज्यायै
महापातकनाशिन्यै
महामायायै
महाशक्त्यै
महासत्त्वायै

ॐ महारत्यै नमः
महाभोगायै
महैश्वर्यायै
महावीर्यायै
महाबलायै
महाबुद्ध्यै
महासिद्ध्यै
महायोगीश्वरेश्वर्यै
महातन्त्रायै
महामन्त्रायै
महायन्त्रायै
महासनायै
महायागक्रमाराध्यायै
महाभैरवपूजितायै
महेश्वरमहाकल्पमहाताण्डवसाक्षिण्यै
महाकामेशमहिष्यै
महात्रिपुरसुन्दर्यै
चतुःषष्ट्युपचाराढ्यायै
चतुःषष्टिकलामय्यै
महाचतुःषष्टिकोटियोगिनीगणसेवितायै
मनुविद्यायै
चन्द्रविद्यायै
चन्द्रमण्डलमध्यगायै
चारुरूपायै
चारुहासायै
चारुचन्द्रकलाधरायै

ॐ चराचरजगन्नाथायै नमः
चक्रराजनिकेतनायै
पार्वत्यै
पद्मनयनायै
पद्मरागसमप्रभायै
पञ्चप्रेतासनासीनायै
पञ्चब्रह्मस्वरूपिण्यै
चिन्मय्यै
परमानन्दायै
विज्ञानघनरूपिण्यै
ध्यानध्यातृध्येयरूपायै
धर्माधर्मविवर्जितायै
विश्वरूपायै
जागरिण्यै
स्वपन्त्यै
तैजसात्मिकायै
सुप्तायै
प्राज्ञात्मिकायै
तुर्यायै
सर्वावस्थाविवर्जितायै
सृष्टिकर्त्र्यै
ब्रह्मरूपायै
गोप्त्र्यै
गोविन्दरूपिण्यै
संहारिण्यै
रुद्ररूपायै

ॐ तिरोधानकर्यै नमः २७०
ईश्वर्यै
सदाशिवायै
अनुग्रहदायै
पञ्चकृत्यपरायणायै
भानुमण्डलमध्यस्थायै
भैरव्यै
भगमालिन्यै
पद्मासनायै
भगवत्यै
पद्मनाभसहोदर्यै २८०
उन्मेषनिमिषोत्पन्नविपन्नभुवनावल्यै
सहस्रशीर्षवदनायै
सहस्राक्ष्यै
सहस्रपदे
आब्रह्मकीटजनन्यै
वर्णाश्रमविधायिन्यै
निजाज्ञारूपनिगमायै
पुण्यापुण्यफलप्रदायै
श्रुतिसीमन्तसिन्दूरीकृतपादाब्ज-
धूलिकायै
सकलागमसंदोहशुक्तिसंपुट
मौक्तिकायै २९०
पुरुषार्थप्रदायै
पूर्णायै
भोगिन्यै

ॐ भुवनेश्वर्यै नमः
अम्बिकायै
अनादिनिधनायै
हरिब्रह्मेन्द्रसेवितायै
नारायण्यै
नादरूपायै
नामरूपविवर्जितायै ३००
ह्रींकार्यै
ह्रींमत्यै
हृद्यायै
हेयोपादेयवर्जितायै
राजराजार्चितायै
राज्ञ्यै
रम्यायै
राजीवलोचनायै
रञ्जन्यै
रमण्यै ३१०
रस्यायै
रणत्किङ्किणिमेखलायै
रमायै
राकेन्दुवदनायै
रतिरूपायै
रतिप्रियायै
रक्षाकर्यै
राक्षसघ्न्यै
रामायै

ॐ रमणलम्पटायै नमः
काम्यायै
कामकलारूपायै
कदम्बकुसुमप्रियायै
कल्याण्यै
जगतीकन्दायै
करुणारससागरायै
कलावत्यै
कलालापायै
कान्तायै
कादम्बरीप्रियायै
वरदायै
वामनयनायै
वारुणीमदविह्वलायै
विश्वाधिकायै
वेदवेद्यायै
विन्ध्याचलनिवासिन्यै
विधात्र्यै
वेदजनन्यै
विष्णुमायायै
विलासिन्यै
क्षेत्रस्वरूपायै
क्षेत्रेश्यै
क्षेत्रक्षेत्रज्ञपालिन्यै
क्षयवृद्धिविनिर्मुक्तायै
क्षेत्रपालसमर्चितायै

ॐ विजयायै नमः
विमलायै
वन्द्यायै
वन्दारुजनवत्सलायै
वाग्वादिन्यै
वामकेश्यै
वह्निमण्डलवासिन्यै
भक्तिमत्कल्पलतिकायै
पशुपाशविमोचिन्यै
संहताशेषपाखण्डायै
सदाचारप्रवर्तिकायै
तापत्रयाग्निसन्तप्तसमाह्लादन-चन्द्रिकायै
तरुण्यै
तापसाराध्यायै
तनुमध्यायै
तमोपहायै
चित्यै
तत्पदलक्ष्यार्थायै
चिदेकरसरूपिण्यै
स्वात्मानन्दलवीभूतब्रह्माद्यानन्दसन्ततये
परायै
प्रत्यक्चितीरूपायै
पश्यन्त्यै
परदेवतायै
मध्यमायै

ॐ वैखरीरूपायै नमः
भक्तमानसहंसिकायै
कामेश्वरप्राणनाड्यै
कृतज्ञायै
कामपूजितायै
श्रृङ्गाररसम्पूर्णायै
जयायै
जालन्धरस्थितायै
ओड्याणपीठनिलयायै
बिन्दुमण्डलवासिन्यै ३८०
रहोयागक्रमाराध्यायै
रहस्तर्पणतर्पितायै
सद्यःप्रसादिन्यै
विश्वसाक्षिण्यै
साक्षिवर्जितायै
षडङ्गदेवतायुक्तायै
षाड्गुण्यपरिपूरितायै
नित्यक्लिन्नायै
निरुपमायै
निर्वाणसुखदायिन्यै ३९०
नित्याषोडशिकारूपिण्यै
श्रीकण्ठार्धशरीरिण्यै
प्रभावत्यै
प्रभारूपायै
प्रसिद्धायै
परमेश्वर्यै

ॐ मूलप्रकृत्यै नमः
अव्यक्तायै
व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिण्यै
व्यापिन्यै ४००
विविधाकारायै
विद्याविद्यास्वरूपिण्यै
महाकामेशनयनकुमुदाह्लाद- कौमुद्यै
भक्तहार्दतमोभेदभानुमद्भानुसन्तत्यै
शिवदूत्यै
शिवाराध्यायै
शिवमूर्त्यै
शिवंकर्यै
शिवप्रियायै
शिवपरायै ४१०
शिष्टेष्टायै
शिष्टपूजितायै
अप्रमेयायै
स्वप्रकाशायै
मनोवाचामगोचरायै
चिच्छक्त्यै
चेतनारूपायै
जडशक्त्यै
जडात्मिकायै
गायत्र्यै ४२०
व्याहृत्यै
संध्यायै

ॐ द्विजवृन्दनिषेवितायै नमः
तत्त्वासनायै
तस्मै
तुभ्यं
अय्यै
पञ्चकोशान्तरस्थितायै
निःसीममहिम्ने
नित्ययौवनायै ४३०
मदशालिन्यै
मदघूर्णितरक्ताक्ष्यै
मदपाटलगण्डभुवे
चन्दनद्रवदिग्धाङ्ग्यै
चाम्पेयकुसुमप्रियायै
कुशलायै
कोमलाकारायै
कुरुकुल्लायै
कुलेश्वर्यै
कुलकुण्डालयायै ४४०
कौलमार्गतत्परसेवितायै
कुमारगणनाथाम्बायै
तुष्ट्यै
पुष्ट्यै
मत्यै
धृत्यै
शान्त्यै
स्वस्तिमत्यै

ॐ कान्त्यै नमः
नन्दिन्यै ४५०
विघ्ननाशिन्यै
तेजोवत्यै
त्रिनयनायै
लोलाक्षीकामरूपिण्यै
मालिन्यै
हंसिन्यै
मात्रे
मलयाचलवासिन्यै
सुमुख्यै
नलिन्यै ४६०
सुभ्रुवे
शोभनायै
सुरनायिकायै
कालकण्ठ्यै
कान्तिमत्यै
क्षोभिण्यै
सूक्ष्मरूपिण्यै
वज्रेश्वर्यै
वामदेव्यै
वयोऽवस्थाविवर्जितायै ४७०
सिद्धेश्वर्यै
सिद्धविद्यायै
सिद्धमात्रे
यशस्विन्यै

ॐ विशुद्धिचक्रनिलयायै नमः
आरक्तवर्णायै
त्रिलोचनायै
खट्वाङ्गादिप्रहरणायै
वदनैकसमन्वितायै
पायसान्नप्रियायै ४८०
त्वक्स्थायै
पशुलोकभयङ्कर्यै
अमृतादिमहाशक्तिसंवृतायै
डाकिनीश्वर्यै
अनाहताब्जनिलयायै
श्यामाभायै
वदनद्वयायै
दंष्ट्रोज्ज्वलायै
अक्षमालादिधरायै
रुधिरसंस्थितायै ४९०
कालरात्र्यादिशक्त्योघवृतायै
स्निग्धौदनप्रियायै
महावीरेन्द्रवरदायै
राकिण्यम्बास्वरूपिण्यै
मणिपूराब्जनिलयायै
वदनत्रयसंयुतायै
वज्रादिकायुधोपेतायै
डामर्यादिभिरावृतायै
रक्तवर्णायै
मांसनिष्ठायै ५००

ॐ गुडान्नप्रीतमानसायै नमः
समस्तभक्तसुखदायै
लाकिन्यम्बास्वरूपिण्यै
स्वाधिष्ठानाम्बुजगतायै
चतुर्वक्त्रमनोहरायै
शूलाद्यायुधसम्पन्नायै
पीतवर्णायै
अतिगर्वितायै
मेदोनिष्ठायै
मधुप्रीतायै ५१०
वन्दिन्यादिसमन्वितायै
दध्यन्नासक्तहृदयायै
काकिनीरूपधारिण्यै
मूलाधाराम्बुजारूढायै
पञ्चवक्त्रायै
अस्थिसंस्थितायै
अंकुशादिप्रहरणायै
वरदादिनिषेवितायै
मुद्गौदनासक्तचित्तायै
साकिन्यम्बास्वरूपिण्यै ५२०
आज्ञावक्राब्जनिलयायै
शुक्लवर्णायै
षडाननायै
मज्जासंस्थायै
हंसवतीमुख्यशक्तिसमन्वितायै
हरिद्रान्नैकरसिकायै

ॐ हाकिनीरूपधारिण्यै नमः
सहस्रदलपद्मस्थायै
सर्ववर्णोपशोभितायै
सर्वायुधधरायै ५३०
शुक्लसंस्थितायै
सर्वतोमुख्यै
सर्वौदनप्रीतचित्तायै
याकिन्यम्बास्वरूपिण्यै
स्वाहा
स्वधा
अमत्यै
मेधायै
श्रुत्यै
स्मृत्यै ५४०
अनुत्तमायै
पुण्यकीर्त्यै
पुण्यलभ्यायै
पुण्यश्रवणकीर्तनायै
पुलोमजार्चितायै
बन्धमोचन्यै
बर्बरालकायै
विमर्शरूपिण्यै
विद्यायै
वियदादिजगत्प्रसुवे ५५०
सर्वव्याधिप्रशमन्यै
सर्वमृत्युनिवारिण्यै

ॐ अग्रगण्यायै नमः
अचिन्त्यरूपायै
कलिकल्मषनाशिन्यै
कात्यायन्यै
कालहन्त्र्यै
कमलाक्षनिषेवितायै
ताम्बूलपूरितमुख्यै
दाडिमीकुसुमप्रभायै ५६०
मृगाक्ष्यै
मोहिन्यै
मुख्यायै
मृडान्यै
मित्ररूपिण्यै
नित्यतृप्तायै
भक्तनिधये
नियन्त्र्यै
निखिलेश्वर्यै
मैत्र्यादिवासनालभ्यायै ५७०
महाप्रलयसाक्षिण्यै
परस्यै शक्त्यै
परायै निष्ठायै
प्रज्ञानघनरूपिण्यै
माध्वीपानालसायै
मत्तायै
मातृकावर्णरूपिण्यै
महाकैलासनिलयायै

ॐ मृणालमृदुदोर्लतायै नमः
महनीयायै ५८०
दयामूर्त्यै
महासाम्राज्यशालिन्यै
आत्मविद्यायै
महाविद्यायै
श्रीविद्यायै
कामसेवितायै
श्रीषोडशाक्षरीविद्यायै
त्रिकूटायै
कामकोटिकायै
कटाक्षकिङ्करीभूतकमला-
कोटिसेवितायै ५९०
शिरःस्थितायै
चन्द्रनिभायै
भालस्थायै
इन्द्रधनुःप्रभायै
हृदयस्थायै
रविप्रख्यायै
त्रिकोणान्तरदीपिकायै
दाक्षायण्यै
दैत्यहन्त्र्यै
दक्षयज्ञविनाशिन्यै ६००
दरान्दोलितदीर्घाक्ष्यै
दरहासोज्ज्वलन्मुख्यै
गुरुमूर्तये

ॐ गुणनिधये नमः
गोमात्रे
गुहजन्मभुवे
देवेश्यै
दण्डनीतिस्थायै
दहराकाशरूपिण्यै
प्रतिपन्मुख्यराकान्ततिथिमण्डल-
पूजितायै ६१०
कलात्मिकायै
कलानाथायै
काव्यालापविनोदिन्यै
सचामररमावाणीसव्यदक्षिणसेवितायै
आदिशक्त्यै
अमेयायै
आत्मने
परमायै
पावनाकृतये
अनेककोटिब्रह्माण्डजनन्यै ६२०
दिव्यविग्रहायै
क्लींकार्यै
केवलायै
गुह्यायै
कैवल्यपददायिन्यै
त्रिपुरायै
त्रिजगद्वन्द्यायै
त्रिमूर्तये

ॐ त्रिदशेश्वर्यै नमः
त्र्यक्षर्यै ६३०
दिव्यगन्धाढ्यायै
सिन्दूरतिलकाञ्चितायै
उमायै
शैलेन्द्रतनयायै
गौर्यै
गन्धर्वसेवितायै
विश्वगर्भायै
स्वर्णगर्भायै
अवरदायै
वागधीश्वर्यै ६४०
ध्यानगम्यायै
अपरिच्छेद्यायै
ज्ञानदायै
ज्ञानविग्रहायै
सर्ववेदान्तसंवेद्यायै
सत्यानन्दस्वरूपिण्यै
लोपामुद्रार्चितायै
लीलाक्लृप्तब्रह्माण्डमण्डलायै
अदृश्यायै
दृश्यरहितायै ६५०
विज्ञात्र्यै
वेद्यवर्जितायै
योगिन्यै
योगदायै

ॐ योग्यायै नमः
योगानन्दायै
युगन्धरायै
इच्छाशक्तिज्ञानशक्तिक्रियाशक्तिस्वरूपिण्यै
सर्वाधारायै
सुप्रतिष्ठायै ६६०
सदसद्रूपधारिण्यै
अष्टमूर्त्यै
अजाजेत्र्यै
लोकयात्राविधायिन्यै
एकाकिन्यै
भूमरूपायै
निर्द्वैतायै
द्वैतवर्जितायै
अन्नदायै
वसुदायै ६७०
वृद्धायै
ब्रह्मात्मैक्यस्वरूपिण्यै
बृहत्यै
ब्राह्मण्यै
ब्राह्म्यै
ब्रह्मानन्दायै
बलिप्रियायै
भाषारूपायै
बृहत्सेनायै

ॐ भावाभावविवर्जितायै नमः ६८० ॐ गुहाम्बायै नमः
सुखाराध्यायै
शुभकर्यै
शोभनायै सुलभायै गत्यै
राजराजेश्वर्यै
राज्यदायिन्यै
राज्यवल्लभायै
राजत्कृपायै
राजपीठनिवेशितनिजाश्रितायै
राज्यलक्ष्म्यै
कोशनाथायै ६९०
चतुरङ्गबलेश्वर्यै
साम्राज्यदायिन्यै
सत्यसन्धायै
सागरमेखलायै
दीक्षितायै
दैत्यशमन्यै
सर्वलोकवशंकर्यै
सर्वार्थदात्र्यै
सावित्र्यै
सच्चिदानन्दरूपिण्यै ७००
देशकालापरिच्छिन्नायै
सर्वगायै
सर्वमोहिन्यै
सरस्वत्यै
शास्त्रमय्यै
गुह्यरूपिण्यै
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तायै
सदाशिवपतिव्रतायै
सम्प्रदायेश्वर्यै ७१०
साधुने
यै
गुरुमण्डलरूपिण्यै
कुलोत्तीर्णायै
भगाराध्यायै
मायायै
मधुमत्यै
महौ
गणाम्बायै
गुह्यकाराध्यायै ७२०
कोमलाङ्ग्यै
गुरुप्रियायै
स्वतन्त्रायै
सर्वतन्त्रेश्यै
दक्षिणामूर्तिरूपिण्यै
सनकादिसमाराध्यायै
शिवज्ञानप्रदायिन्यै
चित्कलायै
आनन्दकलिकायै
प्रेमरूपायै ७३०
प्रियंकर्यै

ॐ नामपारायणप्रीतायै नमः
नन्दिविद्यायै
नटेश्वर्यै
मिथ्याजगदधिष्ठानायै
मुक्तिदायै
मुक्तिरूपिण्यै
लास्यप्रियायै
लयकर्यै
लज्जायै ७४०
रम्भादिवन्दितायै
भवदावसुधावृष्ट्यै
पापारण्यदवानलायै
दौर्भाग्यतूलवातूलायै
जराध्वान्तरविप्रभायै
भाग्याब्धिचन्द्रिकायै
भक्तचित्तकेकिघनाघनायै
रोगपर्वतदम्भोलये
मृत्युदारुकुठारिकायै
महेश्वर्यै ७५०
महाकाल्यै
महाग्रासायै
महाशनायै
अपर्णायै
चण्डिकायै
चण्डमुण्डासुरनिषूदिन्यै
क्षराक्षरात्मिकायै

ॐ सर्वलोकेश्यै नमः
विश्वधारिण्यै
त्रिवर्गदात्र्यै ७६०
सुभगायै
त्र्यम्बकायै
त्रिगुणात्मिकायै
स्वर्गापवर्गदायै
शुद्धायै
जपापुष्पनिभाकृतये
ओजोवत्यै
द्युतिधरायै
यज्ञरूपायै
प्रियव्रतायै ७७०
दुराराध्यायै
दुराधर्षायै
पाटलीकुसुमप्रियायै
महत्यै
मेरुनिलयायै
मन्दारकुसुमप्रियायै
वीराराध्यायै
विराड्रूपायै
विरजसे
विश्वतोमुख्यै ७८०
प्रत्यग्रूपायै
पराकाशायै
प्राणदायै

ॐ प्राणरूपिण्यै नमः
मार्तण्डभैरवाराध्यायै
मन्त्रिणीन्यस्तराज्यधुरे
त्रिपुरेश्यै
जयत्सेनायै
निस्त्रैगुण्यायै
परापरायै ७९०
सत्यज्ञानानन्दरूपायै
सामरस्यपरायणायै
कपर्दिन्यै
कलामालायै
कामदुहे
कामरूपिण्यै
कलानिधये
काव्यकलायै
रसज्ञायै
रसशेवधये ८००
पुष्टायै
पुरातनायै
पूज्यायै
पुष्करायै
पुष्करेक्षणायै
परस्मै ज्योतिषे
परस्मै धाम्ने
परमाणवे
परात्परायै

ॐ पाशहस्तायै नमः ८१०
पाशहन्त्र्यै
परमन्त्रविभेदिन्यै
मूर्तायै
अमूर्तायै
अनित्यतृप्तायै
मुनिमानसहंसिकायै
सत्यव्रतायै
सत्यरूपायै
सर्वान्तर्यामिण्यै
सत्यै ८२०
ब्रह्माण्यै
ब्रह्मणे
जनन्यै
बहुरूपायै
बुधार्चितायै
प्रसवित्र्यै
प्रचण्डायै
आज्ञायै
प्रतिष्ठायै
प्रकटाकृतये ८३०
प्राणेश्वर्यै
प्राणदात्र्यै
पञ्चाशत्पीठरूपिण्यै
विशृङ्खलायै
विविक्तस्थायै

ॐ वीरमात्रे नमः
वियत्प्रसुवे
मुक्तिनिलयायै
मूलविग्रहरूपिण्यै ८४०
भावज्ञायै
भवरोगघ्न्यै
भवचक्रप्रवर्तिन्यै
छन्दःसारायै
शास्त्रसारायै
मन्त्रसारायै
तलोदर्यै
उदारकीर्तये
उद्दामवैभवायै
वर्णरूपिण्यै ८५०
जन्ममृत्युजरातप्तजनविश्रान्ति
दायिन्यै
सर्वोपनिषदुद्घुष्टायै
शान्त्यतीतकलात्मिकायै
गम्भीरायै
गगनान्तस्थायै
गर्वितायै
गानलोलुपायै
कल्पनारहितायै
काष्ठायै
अकान्तायै ८६०

ॐ कान्तार्धविग्रहायै नमः
कार्यकारणनिर्मुक्तायै
कामकेलितरङ्गितायै
कनत्कनकताटङ्कायै
लीलाविग्रहधारिण्यै
अजायै
क्षयविनिर्मुक्तायै
मुग्धायै
क्षिप्रप्रसादिन्यै
अन्तर्मुखसमाराध्यायै ८७०
बहिर्मुखसुदुर्लभायै
त्रय्यै
त्रिवर्गनिलयायै
त्रिस्थायै
त्रिपुरमालिन्यै
निरामयायै
निरालम्बायै
स्वात्मारामायै
सुधासृत्यै
संसारपङ्कनिर्मग्नसमुद्धरण-
पण्डितायै ८८०
यज्ञप्रियायै
यज्ञकर्त्र्यै
यजमानस्वरूपिण्यै
धर्माधारायै
धनाध्यक्षायै

ॐ धनधान्यविवर्धिन्यै नमः
विप्रप्रियायै
विप्ररूपायै
विश्वभ्रमणकारिण्यै
विश्वग्रासायै ८९०
विद्रुमाभायै
वैष्णव्यै
विष्णुरूपिण्यै
अयोन्यै
योनिनिलयायै
कूटस्थायै
कुलरूपिण्यै
वीरगोष्ठीप्रियायै
वीरायै
नैष्कर्म्यायै ९००
नादरूपिण्यै
विज्ञानकलनायै
कल्यायै
विदग्धायै
बैन्दवासनायै
तत्त्वाधिकायै
तत्त्वमय्यै
तत्त्वमर्थस्वरूपिण्यै
सामगानप्रियायै
सौम्यायै ९१०
सदाशिवकुटुम्बिन्यै

ॐ सव्यापसव्यमार्गस्थायै नमः
सर्वापद्विनिवारिण्यै
स्वस्थायै
स्वभावमधुरायै
धीरायै
धीरसमर्चितायै
चैतन्यार्घ्यसमाराध्यायै
चैतन्यकुसुमप्रियायै
सदोदितायै ९२०
सदातुष्टायै
तरुणादित्यपाटलायै
दक्षिणादक्षिणाराध्यायै
दरस्मेरमुखाम्बुजायै
कौलिनीकेवलायै
अनर्घ्यकैवल्यपददायिन्यै
स्तोत्रप्रियायै
स्तुतिमत्यै
श्रुतिसंस्तुतवैभवायै
मनस्विन्यै ९३०
मानवत्यै
महेश्यै
मङ्गलाकृतये
विश्वमात्रे
जगद्धात्र्यै
विशालाक्ष्यै
विरागिण्यै

ॐ प्रगल्भायै नमः
परमोदारायै
परमोदायै
मनोमय्यै
व्योमकेश्यै
विमानस्थायै
वज्रिण्यै
वामकेश्वर्यै
पञ्चयज्ञप्रियायै
पञ्चप्रेतमञ्चाधिशायिन्यै
पञ्चम्यै
पञ्चभूतेश्यै
पञ्चसङ्ख्योपचारिण्यै
शाश्वत्यै
शाश्वतैश्वर्यायै
शर्मदायै
शम्भुमोहिन्यै
धरायै
धरसुतायै
धन्यायै
धर्मिण्यै
धर्मवर्धिन्यै
लोकातीतायै
गुणातीतायै
सर्वातीतायै
शमात्मिकायै

ॐ बन्धूककुसुमप्रख्यायै नमः
बालायै
लीलाविनोदिन्यै
सुमङ्गल्यै
सुखकर्यै
सुवेषाढ्यायै
सुवासिन्यै
सुवासिन्यर्चनप्रीतायै
आशोभनायै
शुद्धमानसायै
बिन्दुतर्पणसन्तुष्टायै
पूर्वजायै
त्रिपुराम्बिकायै
दशमुद्रासमाराध्यायै
त्रिपुराश्रीवशंकर्यै
ज्ञानमुद्रायै
ज्ञानगम्यायै
ज्ञानज्ञेयस्वरूपिण्यै
योनिमुद्रायै
त्रिखण्डेश्यै
त्रिगुणायै
अम्बायै
त्रिकोणगायै
अनघायै
अद्भुतचारित्रायै
वाञ्छितार्थप्रदायिन्यै

ॐ अभ्यासातिशयज्ञातायै नमः ९९०
षडध्वातीतरूपिण्यै
अव्याजकरुणामूर्त्तये
अज्ञानध्वान्तदीपिकायै
आबालगोपविदितायै
सर्वानुल्लङ्घ्यशासनायै

ॐ श्रीचक्रराजनिलयायै नमः
श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्यै
श्रीशिवायै
शिवशक्त्यैक्यरूपिण्यै
श्रीललिताम्बिकायै नमः १०००

॥इति श्रीललितासहस्रनामावलिः सम्पूर्णा॥

ललितात्रिशतीस्तोत्रम्

अस्य श्रीत्रिशतीमालामन्त्रस्य भगवान् हयग्रीव ऋषिः,
अनुष्टुप् छन्दः, ललितामहाभट्टारिका देवता।
ऐं बीजम्, सौः शक्तिः, क्लीं कीलकम्,
इष्टार्थे विनियोगः। मूलेन षडङ्गन्यासः।

अथ ध्यानम्

अतिमधुरचापहस्तामपरिमितामोदबाणसौभाग्याम्।
अरुणामतिशयकरुणामभिनवकुलसुन्दरीं वन्दे॥

अथ त्रिशती

ॐ ककाररूपा कल्याणी कल्याणगुणशालिनी।
कल्याणशैलनिलया कमनीया कलावती॥१॥
कमलाक्षी कल्मषघ्नी करुणामृतसागरा।
कदम्बकाननावासा कदम्बकुसुमप्रिया॥२॥
कन्दर्पविद्या कन्दर्पजनकापाङ्गवीक्षणा।
कर्पूरवीटीसौरभ्यकल्लोलितकुकुब्तटा॥३॥
कलिदोषहरा कञ्जलोचना कम्रविग्रहा।
कर्मादिसाक्षिणी कारयित्री कर्मफलप्रदा॥४॥
एकाररूपा एकाक्षी एकानेकाक्षराकृतिः।
एतत्तदित्यनिर्देश्या एकानन्दचिदाकृतिः॥५॥
एवमित्यागमाबोध्या एकभक्तिमदर्चिता।
एकाग्रचित्तनिर्ध्याता एषणारहितादृता॥६॥

एलासुगन्धिचिकुरा एनःकूटविनाशिनी ।
एकभोगा एकरसा एकैश्वर्यप्रदायिनी ॥७ ॥
एकातपत्रसाम्राज्यप्रदा एकान्तपूजिता ।
एधमानप्रभा एजदनेकजगदीश्वरी ॥८ ॥
एकवीरादिसंसेव्या एकप्राभवशालिनी ।
ईकाररूपिणीशित्री ईप्सितार्थप्रदायिनी ॥९ ॥
ईदृगित्यविनिर्देश्या ईश्वरत्वप्रदायिनी ।
ईशानादिब्रह्ममयी ईशित्वाद्यष्टसिद्धिदा ॥१० ॥
ईक्षित्रीक्षणसृष्टाण्डकोटिरीश्वरवल्लभा ।
ईडिता ईश्वरार्द्धाङ्गशरीरेशाधिदेवता ॥११ ॥
ईश्वरप्रेरणकरी ईशताण्डवसाक्षिणी ।
ईश्वरोत्सङ्गनिलया ईतिबाधाविनाशिनी ॥१२ ॥
ईहाविरहिता ईशशक्तिरीषत्स्मिताननना ।
लकाररूपा ललिता लक्ष्मीवाणीनिषेविता ॥१३ ॥
लाकिनी ललनारूपा लसद्दाडिमपाटला ।
ललन्तिकालसद्भाला ललाटनयनार्चिता ॥१४ ॥
लक्षणोज्ज्वलसर्वाङ्गी लक्षकोट्यण्डनायिका ।
लक्ष्यार्था लक्षणागम्या लब्धकामा लतातनुः ॥१५ ॥
ललामराजदलिका लम्बिमुक्तालताञ्चिता ।
लम्बोदरप्रसूर्लभ्या लज्जाढ्या लयवर्जिता ॥१६ ॥
ह्रीङ्काररूपा ह्रीङ्कारनिलया ह्रींपदप्रिया ।
ह्रीङ्कारबीजा ह्रीङ्कारमन्त्रा ह्रीङ्कारलक्षणा ॥१७ ॥
ह्रीङ्कारजपसुप्रीता ह्रींमतिर्ह्रींविभूषणा ।
ह्रींशीला ह्रींपदाराध्या ह्रींगर्भा ह्रींपदाभिधा ॥१८ ॥
ह्रीङ्कारवाच्या ह्रीङ्कारपूज्या ह्रीङ्कारपीठिका ।
ह्रीङ्कारवेद्या ह्रीङ्कारचिन्त्या ह्रींह्रींशरीरिणी ॥१९ ॥

हकाररूपा हलधृक्पूजिता हरिणेक्षणा ।
हरिप्रिया हराराध्या हरिब्रह्मेन्द्रवन्दिता ॥२० ॥
हयारूढासेविताङ्घ्रिर्हयमेधसमर्चिता ।
हर्यक्षवाहना हंसवाहना हतदानवा ॥२१ ॥
हत्यादिपापशमनी हरिदश्वादिसेविता ।
हस्तिकुम्भोत्तुङ्गकुचा हस्तिकृत्तिप्रियाङ्गना ॥२२ ॥
हरिद्राकुङ्कुमादिग्धा हर्यश्वाद्यमरार्चिता ।
हरिकेशसखी हादिविद्या हालामदालसा ॥२३ ॥
सकाररूपा सर्वज्ञा सर्वेशी सर्वमङ्गला ।
सर्वकर्त्री सर्वभर्त्री सर्वहर्त्री सनातनी ॥२४ ॥
सर्वानवद्या सर्वाङ्गसुन्दरी सर्वसाक्षिणी ।
सर्वात्मिका सर्वसौख्यदात्री सर्वविमोहिनी ॥२५ ॥
सर्वाधारा सर्वगता सर्वापगुणवर्जिता ।
सर्वारुणा सर्वमाता सर्वाभरणभूषिता ॥२६ ॥
ककारार्था कालहन्त्री कामेशी कामितार्थदा ।
कामसञ्जीवनी कल्या कठिनस्तनमण्डला ॥२७ ॥
करभोरुः कलानाथमुखी कचजिताम्बुदा ।
कटाक्षस्यन्दिकरुणा कपालिप्राणनायिका ॥२८ ॥
कारुण्यविग्रहा कान्ता कान्तिधूतजपावलिः ।
कलालापा कम्बुकण्ठी करनिर्जितपल्लवा ॥२९ ॥
कल्पवल्लीसमभुजा कस्तूरीतिलकोज्ज्वला ।
हकारार्था हंसगतिर्हाटकाभरणोज्ज्वला ॥३० ॥
हारहारिकुचाभोगा हाकिनी हल्यवर्जिता ।
हरित्पतिसमाराध्या हठात्कारहतासुरा ॥३१ ॥
हर्षप्रदा हविर्भोक्त्री हार्दसन्तमसापहा ।
हल्लीशलास्यसन्तुष्टा हंसमन्त्रार्थरूपिणी ॥३२ ॥

हानोपादाननिर्मुक्ता हर्षिणी हरिसोदरी ।
हाहाहूहूमुखस्तुत्या हानिवृद्धिविवर्जिता ॥३३ ॥
हय्यङ्गवीनहृदया हरिगोपारुणांशुका ।
लकाराख्या लतापूज्या लयस्थित्युद्भवेश्वरी ॥३४ ॥
लास्यदर्शनसन्तुष्टा लाभालाभविवर्जिता ।
लङ्घ्येतराज्ञा लावण्यशालिनी लघुसिद्धिदा ॥३५ ॥
लाक्षारससुवर्णाभा लक्ष्मणाग्रजपूजिता ।
लभ्येतरा लब्धभक्तिसुलभा लाङ्गलायुधा ॥३६ ॥
लग्नचामरहस्त - श्रीशारदापरिवीजिता ।
लज्जापदसमाराध्या लम्पटा लकुलीश्वरी ॥३७ ॥
लब्धमाना लब्धरसा लब्धसम्पत्समुन्नतिः ।
ह्रीङ्कारिणी ह्रीङ्कारादि ह्रींमध्या ह्रींशिखामणिः ॥३८ ॥
ह्रीङ्कारकुण्डाग्निशिखा ह्रीङ्कारशशिचन्द्रिका ।
ह्रीङ्कारभास्करुचिर्ह्रींङ्काराम्भोदचञ्चला ॥३९ ॥
ह्रीङ्कारकन्दाङ्कुरिका ह्रीङ्कारैकपरायणा ।
ह्रीङ्कारदीर्घिकाहंसी ह्रीङ्कारोद्यानकेकिनी ॥४० ॥
ह्रीङ्कारारण्यहरिणी ह्रीङ्कारावालवल्लरी ।
ह्रीङ्कारपञ्जरशुकी ह्रीङ्काराङ्गणदीपिका ॥४१ ॥
ह्रीङ्कारकन्दरासिंही ह्रीङ्काराम्बुजभृङ्गिका ।
ह्रीङ्कारसुमनोमाध्वी ह्रीङ्कारतरुमञ्जरी ॥४२ ॥
सकाराख्या समरसा सकलागमसंस्तुता ।
सर्ववेदान्ततात्पर्यभूमिः सदसदाश्रया ॥४३ ॥
सकला सच्चिदानन्दा साध्वी सद्गतिदायिनी ।
सनकादिमुनिध्येया सदाशिवकुटुम्बिनी ॥४४ ॥
सकलाधिष्ठानरूपा सत्त्वरूपा समाकृतिः ।
सर्वप्रपञ्चनिर्मात्री समानाधिकवर्जिता ॥४५ ॥

सर्वोत्तुङ्गा सङ्गहीना सद्गुणा सकलेष्टदा ।
ककारिणी काव्यलोला कामेश्वरमनोहरा ।।४६ ।।

कामेश्वरप्राणनाडी कामेशोत्सङ्गवासिनी ।
कामेश्वरालिङ्गिताङ्गी कामेश्वरसुखप्रदा ।।४७ ।।

कामेश्वरप्रणयिनी कामेश्वरविलासिनी ।
कामेश्वरतपःसिद्धिः कामेश्वरमनःप्रिया ।।४८ ।।

कामेश्वरप्राणनाथा कामेश्वरविमोहिनी ।
कामेश्वरब्रह्मविद्या कामेश्वरगृहेश्वरी ।।४९ ।।

कामेश्वराह्लादकरी कामेश्वरमहेश्वरी ।
कामेश्वरी कामकोटिनिलया काङ्क्षितार्थदा ।।५० ।।

लकारिणी लब्धरूपा लब्धधीर्लब्धवाञ्छिता ।
लब्धपापमनोदूरा लब्धाहङ्कारदुर्गमा ।।५१ ।।

लब्धशक्तिर्लब्धदेहा लब्धैश्वर्यसमुन्नतिः ।
लब्धवृद्धिर्लब्धलीला लब्धयौवनशालिनी ।।५२ ।।

लब्धातिशयसर्वाङ्गसौन्दर्या लब्धविभ्रमा ।
लब्धरागा लब्धपतिर्लब्धनानागमस्थितिः ।।५३ ।।

लब्धभागा लब्धसुखा लब्धहर्षाभिपूरिता ।
ह्रींकारमूर्तिर्ह्रींङ्कारसौधशृङ्गकपोतिका ।।५४ ।।

ह्रीकारदुग्धाब्धिसुधा ह्रींकारकमलेन्दिरा ।
ह्रींकारमणिदीपार्चि—र्ह्रींकारतरुशारिका ।।५५ ।।

ह्रीकारपेटकमणि— ह्रींकारादर्शबिम्बिता ।
ह्रींकारकोशासिलता ह्रीकारास्थाननर्त्तकी ।।५६ ।।

ह्रींकारशुक्तिमुक्तामणि-र्ह्रींकारबोधिता ।
ह्रींकारमणिसौवर्णस्तम्भविद्रुमपुत्रिका ।।५७ ।।

ह्रींकारवेदोपनिषद् ह्रींकाराध्वरदक्षिणा ।
ह्रीकारनन्दनारामनवकल्पद्रुवल्लरी ॥५८॥
ह्रीकारहिमवद्गङ्गा ह्रींकारार्णवकौस्तुभा ।
ह्रींकारमन्त्रसर्वस्वा ह्रींकारपरसौख्यदा ॐ ॥५९॥

॥ इति ललितात्रिशतीस्तोत्रम् ॥

■

श्रीललितात्रिशतीस्तोत्ररत्ननामावलिः

अस्य श्रीललितात्रिशतीस्तोत्रमालामन्त्रस्य हयग्रीव-ऋषये नमः शिरसि १ । अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे २ । श्रीललिताम्बादेवतायै नमः हृदये ३ । क ए ई ल ह्रीं बीजाय गुह्ये ४ । स क ल ह्रीं शक्तये पादयोः ५ । ह स क ह ल ह्रीं कीलकाय नाभौ ६ । श्रीललिताम्बाप्रसादसिद्धये जपे (पूजने) विनियोगाय सर्वाङ्गे ७ ॥

कूटत्रयं द्विरावृत्य बालया वा षडङ्गद्वयम् ।

अथ ध्यानम्

अतिमधुरचापहस्तामपरिमितमोदबाणसौभाग्याम् ।
अरुणामतिशयकरुणामभिनवकुलसुन्दरीं वन्दे ॥१ ॥

लमिति पञ्चोपचारैः सम्पूज्य,

॥ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॥

ॐ ककाररूपायै नमः
कल्याण्यै
कल्याणगुणशालिन्यै
कल्याणशैलनिलयायै
कमनीयायै
कलावत्यै
कमलाक्ष्यै
कल्मषघ्न्यै
करुणामृतसागरायै
कदम्बकाननावासायै
कदम्बकुसुमप्रियायै

ॐ कन्दर्पविद्यायै नमः
कन्दर्पजनकापाङ्गवीक्षणायै
कर्पूरवीटीसौरभ्यकल्लोलित-
ककुप्तटायै
कलिदोषहरायै
कञ्जलोचनायै
कम्रविग्रहायै
कर्मादिसाक्षिण्यै
कारयित्र्यै
कर्मफलप्रदायै
एकाररूपायै

ॐ एकाक्ष्यै नमः
एकानेकाक्षराकृत्यै
एतत्तदित्यनिर्देश्यायै
एकानन्दचिदाकृत्यै
एवमित्यागमाबोध्यायै
एकभक्तिमदर्चितायै
एकाग्रचित्तनिर्ध्यातायै
एषणारहितादृतायै
एलासुगन्धिचिकुरायै ३०
एनःकूटविनाशिन्यै
एकभोगायै
एकरसायै
एकैश्वर्यप्रदायिन्यै
एकातपत्रसाम्राज्यप्रदायै
एकान्तपूजितायै
एधमानप्रभायै
एजदनेकजगदीश्वर्यै
एकवीरादिसंसेव्यायै
एकप्राभवशालिन्यै ४०
ईकाररूपायै
ईशित्र्यै
ईप्सितार्थप्रदायिन्यै
ईदृगित्यविनिर्देश्यायै
ईश्वरत्वविधायिन्यै
ईशानादिब्रह्ममय्यै
ईशित्वाद्यष्टसिद्धिदायै

ॐ ईक्षित्र्यै नमः
ईक्षणसृष्टाण्डकोट्यै
ईश्वरवल्लभायै
ईडितायै ५०
ईश्वरार्धाङ्गशरीरायै
ईशाधिदेवतायै
ईश्वरप्रेरणकर्यै
ईशताण्डवसाक्षिण्यै
ईश्वरोत्सङ्गनिलयायै
ईतिबाधाविनाशिन्यै
ईहाविरहितायै
ईशशक्त्यै
ईषत्स्मिताननायै
लकाररूपायै ६०
ललितायै
लक्ष्मीवाणीनिषेवितायै
लाकिन्यै
ललनारूपायै
लसद्दाडिमपाटलायै
ललन्तिकालसत्फालायै
ललाटनयनार्चितायै
लक्षणोज्ज्वलदिव्याङ्गयै
लक्षकोट्यण्डनायिकायै ७०
लक्ष्यार्थायै
लक्षणागम्यायै
लब्धकामायै

ॐ लतातनवे नमः
ललामराजदलिकायै
लम्बिमुक्तालताञ्चितायै
लम्बोदरप्रसुवे
लभ्यायै
लज्जाढ्यायै
लयवर्जितायै ८०
ह्रींकाररूपायै
ह्रींकारनिलयायै
ह्रींपदप्रियायै
ह्रींकारबीजायै
ह्रींकारमन्त्रायै
ह्रींकारलक्षणायै
ह्रींकारजपसुप्रीतायै
ह्रींमत्यै
ह्रींविभूषणायै
ह्रींशीलायै ९०
ह्रींपदाराध्यायै
ह्रींगर्भायै
ह्रींपदाभिधायै
ह्रींकारवाच्यायै
ह्रींकारपूज्यायै
ह्रींकारपीठिकायै
ह्रींकारवेद्यायै
ह्रींकारचिन्त्यायै
ह्रीं

ॐ ह्रींशरीरिण्यै नमः १००
हकाररूपायै
हलधृत्पूजितायै
हरिणेक्षणायै
हरिप्रियायै
हराराध्यायै
हरिब्रह्मेन्द्रसेवितायै
हयारूढासेवितांघ्र्यै
हयमेधसमर्चितायै
हर्यक्षवाहनायै
हंसवाहनायै ११०
हतदानवायै
हत्यादिपापशमन्यै
हरिदश्वादिसेवितायै
हस्तिकुम्भोत्तुङ्गकुचायै
हस्तिकृत्तिप्रियाङ्गनायै
हरिद्राकुङ्कुमादिग्धायै
हर्यश्वाद्यमरार्चितायै
हरिकेशसख्यै
हादिविद्यायै
हालामदालसायै १२०
सकाररूपायै
सर्वज्ञायै
सर्वेश्यै
सर्वमङ्गलायै
सर्वकर्त्र्यै

ॐ सर्वभर्त्र्यै नमः
सर्वहर्त्र्यै
सनातन्यै
सर्वानवद्यायै
सर्वाङ्गसुन्दर्यै
सर्वसाक्षिण्यै
सर्वात्मिकायै
सर्वसौख्यदात्र्यै
सर्वविमोहिन्यै
सर्वाधारायै
सर्वगतायै
सर्वावगुणवर्जितायै
सर्वारुणायै
सर्वमात्रे
सर्वभूषणभूषितायै
ककारार्थायै
कालहन्त्र्यै
कामेश्यै
कामितार्थदायै
कामसञ्जीविन्यै
कल्यायै
कठिनस्तनमण्डलायै
करभोरवे
कलानाथमुख्यै
कचजिताम्बुदायै
कटाक्षस्यन्दिकरुणायै

ॐ कपालिप्राणनायिकायै नमः
कारुण्यविग्रहायै
कान्तायै
कान्तिधूतजपावल्यै
कलालापायै
कम्बुकण्ठयै
करनिर्जितपल्लवायै
कल्पवल्लीसमभुजायै
कस्तूरीतिलकाञ्चितायै
हकारार्थायै
हंसगत्यै
हाटकाभरणोज्ज्वलायै
हारहारिकुचाभोगायै
हाकिन्यै
हल्यवर्जितायै
हरित्पतिसमाराध्यायै
हठात्कारहतासुरायै
हर्षप्रदायै
हविर्भोक्त्र्यै
हार्दसन्तमसापहायै
हल्लीसलास्यसन्तुष्टायै
हंसमन्त्रार्थरूपिण्यै
हानोपादाननिर्मुक्तायै
हर्षिण्यै
हरिसोदर्यै
हाहाहूहूमुखस्तुत्यायै

ॐ हानिवृद्धिविवर्जितायै नमः
हय्यङ्गवीनहृदयायै
हरिगोपारुणांशुकायै १८०
लकाराख्यायै
लतापूज्यायै
लयस्थित्युद्भवेश्वर्यै
लास्यदर्शनसन्तुष्टायै
लाभालाभविवर्जितायै
लंघ्येतराज्ञायै
लावण्यशालिन्यै
लघुसिद्धिदायै
लाक्षारससवर्णाभायै
लक्ष्मणाग्रजपूजितायै १९०
लभ्येतरायै
लब्धभक्तिसुलभायै
लांगलायुधायै
लग्नचामरहस्तश्रीशारदापरिवीजितायै
लज्जापदसमाराध्यायै
लम्पटायै
लकुलेश्वर्यै
लब्धमानायै
लब्धरसायै
लब्धसम्पत्समुन्नत्यै २००
ह्रींकारिण्यै
ह्रींकाराद्यायै
ह्रींमध्यायै

ॐ ह्रींशिखामणये नमः
ह्रींकारकुण्डाग्निशिखायै
ह्रींकारशशिचन्द्रिकायै
ह्रींकारभास्कररुच्यै
ह्रींकाराम्भोदचञ्चलायै
ह्रीङ्कारकन्दाङ्कुरिकायै
ह्रींकारैकपरायणायै २१०
ह्रींकारदीर्घिकाहंस्यै
ह्रींकारोद्यानकेकिन्यै
ह्रीङ्कारारण्यहरिण्यै
ह्रीङ्कारावालवल्लर्यै
ह्रीङ्कारपञ्जरशुक्यै
ह्रींकाराङ्गणदीपिकायै
ह्रीङ्कारकन्दरासिंह्यै
ह्रींकाराम्भोजभृङ्गिकायै
ह्रीङ्कारसुमनोमाध्व्यै
ह्रींकारतरुमञ्जर्यै २२०
सकाराख्यायै
समरसायै
सकलागमसंस्तुतायै
सर्ववेदान्ततात्पर्यभूम्यै
सदसदाश्रयायै
सकलायै
सच्चिदानन्दायै
साध्व्यै
सद्गतिदायिन्यै

ॐ सनकादिमुनिध्येयायै नमः २३० ॐ कामेश्वराह्लादकर्यै नमः
सदाशिवकुटुम्बिन्यै
सकलाधिष्ठानरूपायै
सत्यरूपायै
समाकृत्यै
सर्वप्रपञ्चनिर्मात्र्यै
समानाधिकवर्जितायै
सर्वोत्तुङ्गायै
सङ्गहीनायै
सगुणायै
सकलेष्टदायै २४०
ककारिण्यै
काव्यलोलायै
कामेश्वरमनोहरायै
कामेश्वरप्राणनाड्यै
कामेशोत्संगवासिन्यै
कामेश्वरालिंगितांग्यै
कामेश्वरसुखप्रदायै
कामेश्वरप्रणयिन्यै
कामेश्वरविलासिन्यै
कामेश्वरतपस्सिद्धयै २५०
कामेश्वरमनःप्रियायै
कामेश्वरप्राणनाथायै
कामेश्वरविमोहिन्यै
कामेश्वरब्रह्मविद्यायै
कामेश्वरगृहेश्वर्यै
कामेश्वरमहेश्वर्यै
कामेश्वर्यै
कामकोटिनिलयायै
कांक्षितार्थदायै २६०
लकारिण्यै
लब्धरूपायै
लब्धधिये
लब्धवांछितायै
लब्धपापमनोदूरायै
लब्धाहंकारदुर्गमायै
लब्धशक्त्यै
लब्धदेहायै
लब्धैश्वर्यसमुन्नत्यै
लब्धवृद्धये २७०
लब्धलीलायै
लब्धयौवनशालिन्यै
लब्धातिशयसर्वाङ्गसौन्दर्यायै
लब्धविभ्रमायै
लब्धरागायै
लब्धपत्यै
लब्धनानागमस्थित्यै
लब्धभोगायै
लब्धसुखायै
लब्धहर्षाभिपूरितायै २८०
ह्रींकारमूर्तये

ॐ ह्रींकारसौधशृङ्गकपोतिकायै नमः ॐ ह्रींकारबोधितायै नमः

ह्रींकारदुग्धाब्धिसुधायै
ह्रींकारकमलेन्दिरायै
ह्रींकारमणिदीपार्चिषे
ह्रींकारतरुशारिकायै
ह्रींकारपेटकमणये
ह्रींकारादर्शबिम्बितायै
ह्रींकारकोशासिलतायै
ह्रींकारस्थाननर्तक्यै २९०
ह्रींकारशुक्तिकामुक्तामणये
ह्रींकारमणिसौवर्णस्तंभविद्रुमपुत्रिकायै
ह्रींकारवेदोपनिषदे
ह्रींकाराध्वरदक्षिणायै
ह्रींकारनन्दनारामनवकल्पकवल्लर्यै
ह्रींकारहिमवद्गंगायै
ह्रींकारार्णवकौस्तुभायै
ह्रींकारमन्त्रसर्वस्वायै
ह्रींकारपरसौख्यदायै ३००

॥ओं, ऐं, ह्रीं, श्री, श्रीमद्राजराजेश्वर्यै नमः ॥

॥इति श्रीललितात्रिशतीस्तोत्ररत्ननामावलिः ॥

■

सौभाग्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

[प्रस्तुत अष्टोत्तरशतनाम भगवती त्रिपुरा के हैं। जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, यह सौभाग्यदायक है। इसे जमदग्नि से प्राप्त कर भगवान् दत्तात्रेय ने परशुराम से कहा है। इसे पूर्व में भगवान् शिव ने पार्वती से भी कहा है। यह स्तोत्र श्रीविद्या समुद्र के रत्न के समान है।]

ॐ अस्य श्रीसौभाग्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रस्य भार्गव-ऋषिः, रक्तः शिवः, अनुष्टुप् छन्दः, ललिताम्बिका देवता, पाठे विनियोगः।

ॐ कामेश्वरी कामशक्तिः कामसौभाग्यदायिनी।
कामरूपा कामकला कामिनी कमलासना ॥१॥
कमला कल्पनाहीना कमनीया कलावती।
कमला भारती सेव्या कल्पिताशेषसंस्कृतिः ॥२॥
अनुत्तरानघानन्ताद्भुतरूपानलोद्भवा।
अतिलोकचरित्रातिसुन्दर्यातिशुभप्रदा ॥३॥
अघहन्त्यतिविस्तारार्चनतुष्टामितप्रभा।
एकरूपैकवीरैकनाथा कान्तार्चनप्रिया ॥४॥
एकैकभावतुष्टैकरसैकान्तजनप्रिया।
एधमानप्रभावैधद्भक्तपातकनाशिनी ॥५॥
एलमोदमुखेनोद्रिशक्रायुधसमस्थितिः।
ईहाशून्येप्सितेशादिसैव्येशानवरांगना ॥६॥
ईश्वराज्ञापिकेकारभाव्येप्सितफलप्रदा।
ईशानेति हरेक्षेषदरुणाक्षीश्वरेश्वरी ॥७॥
ललिता ललनारूपा लयहीना लसत्तनुः।
लयसर्वा लयक्षाणिः लयकर्त्री लयात्मिका ॥८॥

लघिमा लघुमध्याढ्या ललमाना लघुद्रुता ।
हयारूढा हतामित्रा हरकान्ता हरिस्तुता ॥९ ॥
हयग्रीवेष्टदा हालप्रिया हर्षसमुद्वता ।
हर्षणा हल्लकामाङ्गी हस्त्यन्तैश्वर्यदायिनी ॥१० ॥
हलहस्तार्चितपदा हविर्दानप्रसादिनी ।
रामा रामार्चिता राज्ञी रम्या रवमयी रतिः ॥११ ॥
रक्षिणी रमणी राका रमणी मण्डलप्रिया ।
रक्षिताखिललोकेशा रक्षोगणनिषूदिनी ॥१२ ॥
अम्बान्तकारिण्यम्भोजप्रियान्तक भयंकरी ।
अम्बुरूपाम्बुजकराम्बुजजातवरप्रदा ॥१३ ॥
अन्तःपूजाप्रियान्तःस्थरूपिण्यन्तर्वचोमयी ।
अन्तकारातिवामाङ्कस्थितान्तस्सुखरूपिणी ॥१४ ॥
सर्वज्ञा सर्वगा सारा समा समसुखा सती ।
सन्ततिः सन्तता सोमा सर्वा सांख्या सनातनी ॥१५ ॥

॥इति श्रीत्रिपुरारहस्ये श्रीसौभाग्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ॥

■

आश्चर्याष्टोत्तरशतनामावलिः

ओं ऐं ह्रीं श्रीं परमानन्दलहर्यै नमः
परचैतन्यदीपिकायै नमः
स्वयंप्रकाशकिरणायै नमः
नित्यवैभवशालिन्यै नमः
विशुद्धकेवलाखण्डसत्यकालात्मरूपिण्यै नमः
आदिमध्यान्तरहितायै नमः
महामायाविलासिन्यै नमः
गुणत्रयपरिच्छेत्र्यै नमः
सर्वतत्त्वप्रकाशिन्यै नमः
स्त्रीपुंसभावरसिकायै नमः
जगत्सर्गादिलंपटायै नमः
अशेषनामरूपादिभेदच्छेदरविप्रभायै नमः
अनादिवासनारूपायै नमः
वासनोद्यत्प्रपञ्चिकायै नमः।
प्रपञ्चोपशमप्रौढायै नमः
चराचरजगन्मय्यै नमः
समस्तजगदाधारायै नमः
सर्वसंजीवनोत्सुकायै नमः
भक्तचेतोमयानन्तस्वार्थवैभवविभ्रमायै नमः
सर्वाकर्षणवश्यादिसर्वकर्मधुरन्धरायै नमः
विज्ञानपरमानन्दविद्यायै नमः
सन्तानसिद्धिदायै नमः
आयुरारोग्यसौभाग्यबलश्रीकीर्तिभाग्यदायै नमः

ओं ऐं ह्रीं श्रीं धनधान्यमणीवस्त्रभूषालेपनमाल्यदायै नमः
गृहग्राममहाराज्यसाम्राज्यसुखदायिन्यै नमः
सप्ताङ्गशक्तिसम्पूर्णसार्वभौमफलप्रदायै नमः
ब्रह्मविष्णुशिवेन्द्रादिपदविश्राणनक्षमायै नमः
भुक्तिमुक्तिमहाभक्तिविरक्त्यद्वैतदायिन्यै नमः
निग्रहानुग्रहाध्यक्षायै नमः
ज्ञाननिर्द्वैतदायिन्यै नमः
परकायप्रवेशादियोगसिद्धिप्रदायिन्यै नमः
शिष्टसंजीवनप्रौढायै नमः
दुष्टसंहारसिद्धिदायै नमः
त्रिपुरावासरसिकायै नमः
त्रिपुराश्रीस्वरूपिण्यै नमः
महापद्मवनान्तस्थायै नमः
श्रीमत्त्रिपुरमालिन्यै नमः
महात्रिपुरसिद्धाम्बायै नमः
श्रीमहात्रिपुराम्बिकायै नमः
नवचक्रक्रमादेव्यै नमः
महात्रिपुरभैरव्यै नमः
श्रीमात्रे नमः
ललितायै नमः
बालायै नमः
राजराजेश्वर्यै नमः
शिवायै नमः
उत्पत्तिस्थितिसंहारक्रमचक्रनिवासिन्यै नमः
अर्धमेर्वात्मचक्रस्थायै नमः
सर्वलोकमहेश्वर्यै नमः

ओं ऐं ह्रीं श्रीं वल्मीकपुरमध्यस्थायै नमः

जम्बूवननिवासिन्यै नमः

अरुणाचलश्रृंगस्थायै नमः

व्याघ्रालयनिवासिन्यै नमः

श्रीकालहस्तिनिलयायै नमः

काशीपुरनिवासिन्यै नमः

श्रीमत्कैलासनिलयायै नमः

द्वादशान्तमहेश्वर्यै नमः

श्रीषोडशान्तमध्यस्थायै नमः

सर्ववेदान्तलक्षितायै नमः

श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासागमकलेश्वर्यै नमः

भूतभौतिकतन्मात्रदेवताप्राणहन्मयत्यै नमः

जीवेश्वरब्रह्मरूपायै नमः

गुणात्मिकायै नमः

अवस्थात्रयनिर्मुक्तायै नमः

वाग्रमोमामहीमय्यै नमः

गायत्रीभुवनेशानीदुर्गाकाल्यादिरूपिण्यै नमः

मत्स्यकूर्मवराहादिनानारूपविलासिन्यै नमः

महायोगीश्वराराध्यायै नमः

लीलाविनिर्मितानेककोटिब्रह्माण्डमण्डलायै नमः

एकस्यै नमः

अनेकात्मिकायै नमः

नानारूपिण्यै नमः

अर्धाङ्गनेश्वर्यै नमः

शिवशक्तिमय्यै नमः

नित्यश्रृंगारैकरसप्रियायै नमः

ओं ऐं ह्रीं श्रीं तुष्टायै नमः
पुष्टायै नमः
अपरिच्छिन्नायै नमः
नित्ययौवनमोहिन्यै नमः
समस्तदेवतारूपायै नमः
सर्वदेवाधिदेवतायै नमः
देवर्षिपितृसिद्धादियोगिनीभैरवात्मिकायै नमः
निधिसिद्धिमणीमुद्रायै नमः
शस्त्रास्त्रायुधभासुरायै नमः
छत्रचामरवादित्रपताकाव्यजनाञ्चितायै नमः
हस्त्यश्वरथपादातामात्यसेनासुसेवितायै नमः
पुरोहितकुलाचार्यगुरुशिष्यादिसेवितायै नमः
सुधासमुद्रमध्योद्यत्सुरद्रुमनिवासिन्यै नमः
मणिद्वीपान्तरप्रोद्यत्कदम्बवनवासिन्यै नमः
चिन्तामणिगृहान्तस्थायै नमः
मणिमण्डपमध्यगायै नमः
रत्नसिंहासनप्रोद्यच्छिवमञ्चाधिशायिन्यै नमः
सदाशिवमहालिंगमूलसंघट्टयोनिकायै नमः
अन्योन्यालिंगसंघर्षकण्डूसंक्षुब्धमानसायै नमः
कलोद्यद्बिन्दुकालिन्यातुर्यनादपरम्परायै नमः
नादान्तानन्दसंदोहस्वयंव्यक्तवचोऽमृतायै नमः
कामराजमहातन्त्ररहस्याचारदक्षिणायै नमः
मकारपञ्चमोद्भूतप्रौढान्तोल्लाससुन्दर्यै नमः
श्रीचक्रराजनिलयायै नमः
श्रीविद्यामन्त्रविग्रहायै नमः
अखण्डसच्चिदानन्दशिवशक्त्यैक्यरूपिण्यै नमः

ओं ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरायै नमः
त्रिपुरेशान्यै नमः
महात्रिपुरसुन्दर्यै नमः
महावीरवरप्रदायै नमः
सिद्धेश्वरकुलाराध्यायै नमः
श्रीमच्चरणवैभवायै नमः ।

॥इत्याश्चर्याष्टोत्तरशतनामावलिः ॥

■

श्रीललिताऽष्टोत्तरशतनामावलिः

ओं-ऐं-ह्रीं-श्रीं।

ॐ रजताचलशृङ्गाग्रमध्यस्थायै नमः
हिमाचलमहावंशपावनायै
शङ्करार्धाङ्गसौन्दर्यशरीरायै
लसन्मरकतस्वच्छविग्रहायै
महातिशयसौन्दर्यलावण्यायै
शशाङ्कशेखरप्राणवल्लभायै
सदापञ्चदशात्मैक्यस्वरूपायै
वज्रमाणिक्यकटककिरीटायै
कस्तूरीतिलकोल्लासिनिटलायै
भस्मरेखाङ्कितलसन्मस्तकायै
विकचाम्भोरुहदललोचनायै
शरच्चाम्पेयपुष्पाभनासिकायै
लसत्काञ्चनताटङ्कयुगलायै
मणिदर्पणसङ्काशकपोलायै
ताम्बूलपूरितस्मेरवदनायै
सुपक्वदाडिमीबीजरदनायै
कम्बुपूगसमच्छायकन्धरायै
स्थूलमुक्ताफलोदारसुहारायै
गिरीशबद्धमाङ्गल्यमङ्गलायै
पद्मपाशांकुशलसत्कराब्जायै
पद्मकैरवमन्दारसुमालिन्यै

ॐ सुवर्णकुम्भयुग्माभसुकुचायै नमः
रमणीयचतुर्बाहुसंयुक्तायै
कनकाङ्गदकेयूरभूषितायै
बृहत्सौवर्णसौन्दर्यवसनायै
बृहन्नितम्बविलसज्जघनायै
सौभाग्यजातशृङ्गारमध्यमायै
दिव्यभूषणसन्दोहरञ्जितायै
पारिजातगुणाधिक्यपटाब्जायै
सुपद्मरागसङ्काशचरणायै
कामकोटिमहापद्मपीठस्थायै
श्रीकण्ठनेत्रकुमुदचन्द्रिकायै
सचामररमावाणीवीजितायै
भक्तरक्षणदाक्षिण्यकटाक्षायै
भूतेशालिङ्गनोद्भूतपुलकाङ्ग्यै
अनङ्गजनकापाङ्गवीक्षणायै
ब्रह्मोपेन्द्रशिरोरत्नरञ्जितायै
शचीमुख्यामरवधूसेवितायै
लीलाकल्पितब्रह्माण्डमण्डलायै
अमृतादिमहाशक्तिसंवृतायै
एकातपत्रसाम्राज्यदायिकायै
सनकादिसमाराध्यपादुकायै

ॐ देवर्षिभिस्स्तूयमानात्मवैभवायै नमः ॐ लोपामुद्रार्चितश्रीमच्चरणायै नमः

कलशोद्भवदुर्वासःपूजितायै
सहस्ररतिसौन्दर्यशरीरायै

मत्तेभवक्त्रषड्वक्त्रवत्सलायै
भावनामात्रसन्तुष्टहृदयायै

चक्रराजमहायन्त्रमध्यवर्तिन्यै
सत्यसम्पूर्णविज्ञानसिद्धिदायै

चिदग्निकुण्डसम्भूतसुदेहायै
श्रीलोचनकृतोल्लासफलदायै

शशाङ्कखण्डसम्भूतसुदेहायै
श्रीसुधाब्धिमणिद्वीपमध्यगायै

मत्तहंसवधूमन्दगमनायै
दक्षाध्वरविनिर्भेदसाधनायै

वन्दारुजनसन्दोहवन्दितायै
श्रीनाथसोदरीभूतशोभितायै

अन्तर्मुखजनानन्दफलदायै
चन्द्रशेखरभक्तार्तिभञ्जनायै

पतिव्रताङ्गनाभीष्टफलदायै
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तचैतन्यायै

अव्याजकरुणापूरपूरितायै
नामपारायणाभीष्टफलदायै

नितान्तसच्चिदानन्दसंयुक्तायै
सृष्टिस्थितितिरोधानसङ्कल्पायै

सहस्रसूर्यसंयुक्तप्रकाशायै
श्रीषोडशाक्षरीमन्त्रमध्यगायै

रत्नचिन्तामणिगृहमध्यस्थायै
अनाद्यन्तस्वयम्भूतदिव्यमूर्त्यै

हानिवृद्धिगुणाधिक्यरहितायै
भक्तहंसपरीमुख्यवियोगायै

महापद्माटवीमध्यनिवासायै
मातृमण्डलसंयुक्तललितायै

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तीनां साक्षिभूत्यै
भण्डदैत्यमहासत्त्वनाशनायै

महापापौघपापानां विनाशिन्यै
क्रूरभण्डशिरश्छेदनिपुणायै

दुष्टभीतिमहाभीतिभञ्जनायै
धात्रच्युतसुराधीशसुखदायै

समस्तदेवदनुजप्रेरकायै
चण्डमुण्डनिशुम्भादिखण्डनायै

समस्तहृदयाम्भोजनिलयायै
रक्ताक्षरक्तजिह्वादिशिक्षणायै

अनाहतमहापद्ममन्दिरायै
महिषासुरदोर्वीर्यनिग्रहायै

सहस्रारसरोजातवासितायै
अभ्रकेशमहोत्साहकारणायै

पुनरावृत्तिरहितपुरस्थायै
महेशयुक्तनटनतत्परायै

वाणीगायत्रीसमुन्नतायै
निजभर्तृमुखाम्भोजचिन्तनायै

रमाभूमिसुताराध्यपदाब्जायै
वृषभध्वजविज्ञानभावनायै

ॐ जन्ममृत्युजरारोगभञ्जनायै नमः
विधेयमुक्तविज्ञानसिद्धिदायै
कामक्रोधादिषड्वर्गनाशनायै
राजराजार्चितपदसरोजायै
सर्ववेदान्तसंसिद्धसुतत्त्वायै
श्रीवीरभक्तविज्ञाननिधनायै
अशेषदुष्टदनुजसूदनायै

ॐ साक्षाच्छ्रीदक्षिणमूर्तिमनोज्ञायै नमः
हयमेधाग्रसम्पूज्यमहिमायै
दक्षप्रजापतिसुरवेषाढ्यायै
सुमबाणेक्षुकोदण्डमण्डितायै
नित्ययौवनमाङ्गल्यमङ्गलायै
महादेवसमायुक्तशरीरायै
महादेवरतौत्सुक्यमहादेव्यै

॥इति श्रीललिताष्टोत्तरशतनामावलिः सम्पूर्णा॥

■

सम्बुद्ध्यन्त-खड्गमालास्तोत्रम्

विनियोगः —

अस्य श्रीशुद्धशक्तिसंबुद्धयन्तमालामहामन्त्रस्य उपस्थेन्द्रियाधिष्ठायि-वरुणादित्य-ऋषयः, गायत्रीच्छंदः, सात्त्विककारभट्टारकपीठस्थितशिवकामेश्वराङ्कनिलया कामेश्वरी ललिता महाभट्टारिका देवता, ऐं बीजं, क्लीं शक्तिः, सौः कीलकं, खड्गसिद्धौ विनियोगः । ध्यानम् —

तादृशं खड्गमाप्नोति येन हस्तस्थितेन वै ।
अष्टादशमहाद्वीपसम्राड्भोक्ता भविष्यति ॥
आरक्ताभां त्रिणेत्रामरुणिमवसनां रत्नताटङ्करम्यां
हस्ताम्भोजैस्सपाशांकुशमदनधनुस्सायकैर्विस्फुरन्तीम् ।
आपीनोत्तुंगवक्षोरुहकलशलुठत्तारहारोज्वलाङ्गीं
ध्यायेदम्भोरुहस्थामरुणिमवसनामीश्वरीमीश्वराणाम् ॥

लमित्यादि पञ्चपूजा

लं पृथिवीतत्त्वात्मिकायै श्रीललितादेव्यै गन्धं परिकल्पयामि ।
हं आकाशतत्त्वात्मिकायै श्रीललितादेव्यै पुष्पं परिकल्पयामि ।
यं वायुतत्त्वात्मिकायै श्रीललितादेव्यै धूपं परिकल्पयामि ।
रं वह्नितत्त्वात्मिकायै श्रीललितादेव्यै दीपं परिकल्पयामि ।
वं अमृततत्त्वात्मिकायै श्रीललितादेव्यै अमृतनैवेद्यं परिकल्पयामि ।
सं सर्वतत्त्वात्मिकायै श्रीललितादेव्यै ताम्बूलादिसर्वोपचारान् परिकल्पयामि ।

अथ स्तोत्रम्

ऐं ह्रीं श्रीं ओं नमस्त्रिपुरसुन्दरि हृदयदेवि शिरोदेवि शिखादेवि कवचदेवि नेत्रदेव्यस्त्रदेवि कामेश्वरि भगमालिनि नित्यक्लिन्ने भेरुण्डे वह्निवासिनि महावज्रेश्वरि शिवादूति त्वरिते कुलसुन्दरि नित्ये नीलपताके विजये सर्वमंगले ज्वाला-

मालिनि चित्रे महानित्ये परमेश्वरपरमेश्वरि मित्रीशमयि षष्ठीशमय्युड्डीशमयि चर्यानाथमयि लोपामुद्रामय्यगस्त्यमयि कालतापनमयि धर्माचारमयि मुक्तकेशीश्वरमयि दीपकलानाथमयि विष्णुदेवमयि प्रभाकरदेवमयि तेजोदेवमयि मनोजदेवमयि कल्याणदेवमयि रत्नदेवमयि वासुदेवमयि श्रीरामानन्दमय्यणिमासिद्धे लघिमासिद्धे महिमासिद्धे ईशित्वसिद्धे वशित्वसिद्धे प्राकाम्यसिद्धे भुक्तिसिद्धे इच्छासिद्धे प्राप्तिसिद्धे सर्वकामसिद्धे ब्राह्मि माहेश्वरि कौमारि वैष्णवि वाराहि माहेन्द्रि चामुण्डे महालक्ष्मि सर्वसंक्षोभिणि सर्वविद्राविणि सर्वाकर्षिणि सर्ववशंकरि सर्वोन्मादिनि सर्वमहाङ्कुशे सर्वखेचरि सर्वबीजे सर्वयोने सर्वत्रिखण्डे त्रैलोक्यमोहनचक्रस्वामिनि प्रकटयोगिनि कामाकर्षिणि बुद्धयाकर्षिणि अहंकाराकर्षिणि शब्दाकर्षिणि स्पर्शाकर्षिणि रूपाकर्षिणि रसाकर्षिणि गन्धाकर्षिणि चित्ताकर्षिणि धैर्याकर्षिणि स्मृत्याकर्षिणि नामाकर्षिणि बीजाकर्षिण्यात्माकर्षिण्यमृताकर्षिणि शरीराकर्षिणि सर्वाशापरिपूरकचक्रस्वामिनि गुप्तयोगिन्यनङ्गकुसुमेऽनङ्गमेखलेऽनङ्गमदनेऽनङ्गमदनातुरेऽनङ्गरेखेऽनङ्गवेगिन्यनङ्गाङ्कुशेऽनङ्गमालिनि सर्वसंक्षोभणचक्रस्वामिनि गुप्ततरयोगिनि सर्वसंक्षोभिणि सर्वविद्राविणि सर्वाकर्षिणि सर्वाह्लादिनि सर्वसंमोहिनि सर्वस्तम्भिनि सर्वार्थसाधिनि सर्वसंपत्तिपूरिणि सर्वमन्त्रमयि सर्वद्वन्द्वक्षयंकरि सर्वसौभाग्यदायक-चक्रस्वामिनि संप्रदाययोगिनि सर्वसिद्धिप्रदे सर्वसंपत्प्रदे सर्वप्रियंकरि सर्वमङ्गलकारिणि सर्वकामप्रदे सर्वदुःखविमोचिनि सर्वमृत्युप्रशमिनि सर्वविघ्ननिवारिणि सर्वाङ्गसुन्दरि सर्वसौभाग्यदायिनि सर्वार्थसाधकचक्रस्वामिनि कुलोत्तीर्णयोगिनि सर्वज्ञे सर्वशक्ते सर्वैश्वर्यप्रदे सर्वज्ञानमयि सर्वव्याधिविनाशिनि सर्वाधारस्वरूपे सर्वपापहरे सर्वानन्दमयि सर्वरक्षास्वरूपिणि सर्वेप्सितप्रदे सर्वरक्षाकरचक्रस्वामिनि निगर्भयोगिनि वशिनि कामेश्वरि मेदिनि विमलेऽरुणे जयिनि सर्वेश्वरि कौलिनि सर्वरोगहरचक्रस्वामिनि रहस्ययोगिनि बाणिनि चापिनि पाशिन्यङ्कुशिनि महाकामेश्वरि महावज्रेश्वरि महाभगमालिनि महाश्रीसुन्दरि सर्वसिद्धिप्रदचक्रस्वामिन्यतिरहस्ययोगिनि श्रीश्रीमहाभट्टारिके सर्वानन्दमयचक्रस्वामिनि परापररहस्ययोगिनि त्रिपुरे त्रिपुरेशि त्रिपुरसुन्दरि त्रिपुरवासिनि त्रिपुराश्रीस्त्रिपुरमालिनि त्रिपुरासिद्धे त्रिपुराम्ब महात्रिपुरसुन्दरि महामहेश्वरि महामहारात्रि महामहाशक्ते महामहागुप्ते महामहाज्ञप्ते महानमहानन्दे महामहास्पन्दे महामहाशये महामहाश्रीचक्रनगरसाम्राज्ञि नमस्ते नमस्ते नमस्ते स्वाहा श्रीं ह्रीं ऐं ।

एषा विद्यामहासिद्धिदायिनी स्मृतिमात्रतः ।
अग्निवातमहाक्षोभे राजा राष्ट्रस्य विप्लवे ॥१ ॥
लुंठने तस्करभये संग्रामे सलिलप्लवे ।
समुद्रयानविक्षोभे भूतप्रेतादिके भये ॥२ ॥
अपस्मारज्वरव्याधिमृत्युक्षामादिजे भये ।
शाकिनीपूतनायक्षरक्षःकूष्माण्डजे भये ॥३ ॥
मित्रभेदे ग्रहभये व्यसनेष्वाभिचारिके ।
अन्येष्वपि च दोषेषु मालामन्त्रं स्मरेन्नरः ॥४ ॥
सर्वोपद्रवनिर्मुक्तः साक्षाच्छिवमयो भवेत् ।
आपत्काले नित्यपूजां विस्तरात्कर्तुमारभेत् ॥५ ॥
एकवारं जपध्यानं सर्वपूजाफलं लभेत् ।
नवावरणदेवीनां ललितायां महौजसः ॥६ ॥
एकत्र गणनारूपो वेदवेदाङ्गगोचरः ।
सर्वागमरहस्यार्थः स्मरणात्पापनाशिनी ॥७ ॥
ललिताया महेशान्या मालाविद्या महीयसी ।
नरवश्यं नरेन्द्राणां वश्यं नारीवशंकरम् ॥८ ॥
अणिमादिगुणैश्वर्यं रंजनं पापभञ्जनम् ।
तत्तदावरणस्थामि देवतावृन्दमंत्रकम् ॥९ ॥
मालामन्त्रं परं गुह्यं परं धाम प्रकीर्तितम् ।
तत्तदावरणस्थायि देवतावृन्दमंत्रकम् ॥१० ॥
शक्तिमाला पंचधा स्याच्छिवमाला च तादृशी ।
तस्माद्गोप्यतराद्गोप्यं रहस्यं भुक्तिमुक्तिदम् ॥११ ॥

॥इति श्रीवामकेश्वरतन्त्रे उमाशंकरसंवादे देवीखड्गमालास्तोत्रम् ॥

■

चतुर्थ्यन्तखड्गमालानामावलिः

अस्य श्रीखड्गमालामन्त्रस्य उपस्थाधिष्ठायिने वरुणादित्य-ऋषये नमः शिरसि, गायत्रीच्छन्दसे नमः मुखे, ललितादेवतायै नमः हृदये, क ५ बीजाय नमः गुह्ये, ह ६ शक्तये नमः पादयोः, स ४ कीलकाय नमः नाभौ, श्रीललिता-प्रसादसिद्धयर्थे पाठे विनियोगः । कूटत्रयद्विरावृत्त्या करहृदयादिन्यासः ।

ध्यानम्

बालार्कारुणतेजसां त्रिनयनां रक्ताम्बरोल्लासिनीं
नानालङ्कृतिराजमानवपुषं बालोडुराड्शेखराम् ।
हस्तैरिक्षुधनुःसृणींसुमशरं पाशं मुदा बिभ्रतीं
श्रीचक्रस्थितसुन्दरीं त्रिजगतामाधारभूतां स्मरेत् ॥

इति ध्यात्वा मानसैः संपूज्य ।

ओं ऐं ह्रीं श्रीं

४ ओं नमः त्रिपुरसुन्दर्यै नमः
४ ॐ नमः हृदयदेव्यै नमः
४ ॐ नमः शिरोदेव्यै नमः
४ ॐ नमः शिखादेव्यै नमः
४ ॐ नमः कवचदेव्यै नमः
४ ॐ नमः नेत्रदेव्यै नमः
४ ॐ नमः अस्त्रदेव्यै नमः
४ ॐ नमः कामेश्वर्यै नमः
४ ॐ नमः भगमालिन्यै नमः
४ ॐ नमः नित्यक्लिन्नायै नमः
४ ॐ नमः भेरुण्डायै नमः
४ ॐ नमः वह्निवासिन्यै नमः
४ ॐ नमः महावज्रेश्वर्यै नमः
४ ॐ नमः शिवदूत्यै नमः
४ ॐ नमः त्वरितायै नमः
४ ॐ नमः कुलसुन्दर्यै नमः
४ ॐ नमः नित्यायै नमः
४ ॐ नमः नीलपताकायै नमः
४ ॐ नमः विजयायै नमः
४ ॐ नमः सर्वमङ्गलायै नमः
४ ॐ नमः ज्वालामालिन्यै नमः
४ ॐ नमः चित्रायै नमः
४ ॐ नमः महानित्यायै नमः
४ ॐ नमः परमेश्वरपरमेश्वर्यै नमः

४ ॐ नमः मित्रीशमय्यै नमः
४ ॐ नमः षष्ठीशमय्यै नमः
४ ॐ नमः उड्डीशमय्यै नमः
४ ॐ नमः चर्यानाथमय्यै नमः
४ ॐ नमः लोपामुद्रामय्यै नमः
४ ॐ नमः अगस्त्यमय्यै नमः
४ ॐ नमः कालतापनमय्यै नमः
४ ॐ नमः धर्माचार्यमय्यै नमः
४ ॐ नमः मुक्तकेशीश्वरमय्यै नमः
४ ॐ नमः दीपकलानाथमय्यै नमः
४ ॐ नमः विष्णुदेवमय्यै नमः
४ ॐ नमः प्रभाकरदेवमय्यै नमः
४ ॐ नमः तेजोदेवमय्यै नमः
४ ॐ नमः मनोजदेवमय्यै नमः
४ ॐ नमः कल्याणदेवमय्यै नमः
४ ॐ नमः रत्नदेवमय्यै नमः
४ ॐ नमः वासुदेवमय्यै नमः
४ ॐ नमः श्रीरामानन्दमय्यै नमः
४ ॐ नमः अणिमासिद्धयै नमः
४ ॐ नमः लघिमासिद्धयै नमः
४ ॐ नमः महिमासिद्धयै नमः
४ ॐ नमः ईशित्वसिद्धयै नमः
४ ॐ नमः वशित्वसिद्धयै नमः
४ ॐ नमः प्राकाम्यसिद्धयै नमः
४ ॐ नमः भुक्तिसिद्धयै नमः
४ ॐ नमः इच्छासिद्धयै नमः

४ ॐ नमः प्राप्तिसिद्धयै नमः
४ ॐ नमः सर्वकामसिद्धयै नमः
४ ॐ नमः ब्राह्मयै नमः
४ ॐ नमः माहेश्वर्यै नमः
४ ॐ नमः कौमार्यै नमः
४ ॐ नमः वैष्णव्यै नमः
४ ॐ नमः वाराह्यै नमः
४ ॐ नमः माहेन्द्रयै नमः
४ ॐ नमः चामुण्डायै नमः
४ ॐ नमः महालक्ष्म्यै नमः
४ ॐ नमः सर्वसंक्षोभिण्यै नमः
४ ॐ नमः सर्वविद्राविण्यै नमः
४ ॐ नमः सर्वाकर्षिण्यै नमः
४ ॐ नमः सर्ववशङ्कर्यै नमः
४ ॐ नमः सर्वोन्मादिन्यै नमः
४ ॐ नमः सर्वमहांकुशायै नमः
४ ॐ नमः सर्वखेचर्यै नमः
४ ॐ नमः सर्वबीजायै नमः
४ ॐ नमः सर्वयोन्यै नमः
४ ॐ नमः सर्वत्रिखण्डायै नमः
४ ॐनमः त्रैलोक्यमोहनचक्रस्वामिन्यै नमः
४ ॐ नमः प्रकटयोगिन्यै नमः
४ ॐ नमः कामाकर्षिण्यै नमः
४ ॐ नमः बुद्ध्याकर्षिण्यै नमः
४ ॐ नमः अहङ्काराकर्षिण्यै नमः
४ ॐ नमः शब्दाकर्षिण्यै नमः

ॐ ॐ नमः स्पर्शाकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः रूपाकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः रसाकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः गन्धाकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः चित्ताकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः धैर्याकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः स्मृत्याकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः नामाकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः बीजाकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः आत्माकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः अमृताकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः शरीराकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वाशा-परिपूरकचक्रस्वामिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः गुप्तयोगिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः अनङ्गकुसुमायै नमः
ॐ ॐ नमः अनङ्गमेखलायै नमः
ॐ ॐ नमः अनङ्गमदनायै नमः
ॐ ॐ नमः अनङ्गमदनातुरायै नमः
ॐ ॐ नमः अनङ्गरेखायै नमः
ॐ ॐ नमः अनङ्गवेगिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः अनङ्गांकुशायै नमः
ॐ ॐ नमः अनङ्गमालिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वसंक्षोभण-चक्रस्वामिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः गुप्ततरयोगिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वसंक्षोभिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वविद्राविण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वाकर्षिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वाह्लादिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वसम्मोहिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वस्तम्भिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वजृम्भिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्ववशङ्कर्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वरञ्जिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वोन्मादिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वार्थसाधिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वसम्पत्तिपूरण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वमन्त्रमय्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वद्वन्द्वक्षयङ्कर्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वसौभाग्यदायक-चक्रस्वामिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सम्प्रदाययोगिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वसिद्धिप्रदायै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वसम्पत्प्रदायै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वप्रियङ्कर्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वमङ्गलकारिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वकामप्रदायै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वदुःखविमोचिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वमृत्युप्रशमिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वविघ्ननिवारिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वाङ्गसुन्दर्यै नमः

ॐ ॐ नमः सर्वसौभाग्यदायिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वार्थसाधकचक्र-स्वामिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः कुलोत्तीर्णयोगिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वज्ञायै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वशक्त्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वैश्वर्यप्रदायै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वज्ञानमय्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वव्याधिविनाशिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वाधारस्वरूपायै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वपापहरायै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वानन्दमय्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वरक्षास्वरूपिण्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वेप्सितप्रदायै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वरक्षाकरचक्र-स्वामिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः निगर्भयोगिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः वशिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः कामेश्वर्यै नमः
ॐ ॐ नमः मोदिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः विमलायै नमः
ॐ ॐ नमः अरुणायै नमः
ॐ ॐ नमः जयिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वेश्वर्यै नमः
ॐ ॐ नमः कौलिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वरोगहरचक्र-स्वामिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः रहस्ययोगिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः बाणिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः चापिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः पाशिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः अंकुशिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः महाकामेश्वर्यै नमः
ॐ ॐ नमः महावज्रेश्वर्यै नमः
ॐ ॐ नमः महाभगमालिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः महाश्रीसुन्दर्यै नमः
ॐ ॐ नमः सर्वसिद्धिप्रदचक्रस्वामिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः परापररहस्ययोगिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः त्रिपुरायै नमः
ॐ ॐ नमः त्रिपुरेश्यै नमः
ॐ ॐ नमः त्रिपुरसुन्दर्यै नमः
ॐ ॐ नमः त्रिपुरवासिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः त्रिपुराश्रियै नमः
ॐ ॐ नमः त्रिपुरमालिन्यै नमः
ॐ ॐ नमः त्रिपुरासिद्धायै नमः
ॐ ॐ नमः त्रिपुराम्बमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः
ॐ ॐ नमः महामहेश्वर्यै नमः
ॐ ॐ नमः महामहाराज्ञ्यै नमः
ॐ ॐ नमः महामहाशक्त्यै नमः
ॐ ॐ नमः महामहागुप्तायै नमः
ॐ ॐ नमः महामहाज्ञप्तायै नमः

४ ॐ नमः महामहानन्दायै नमः

४ ॐ नमः महामहास्पन्दायै नमः

४ ॐ नमः महामहाशयायै नमः

४ ॐ नमः महामहाश्रीचक्रनगरसाम्राज्ञ्यै नमस्ते
नमस्ते नमस्ते स्वाहा
श्रीं ह्रीं ऐं ओं श्रीपरदेवतार्पणमस्तु ।

॥इति चतुर्थ्यन्तखड्गमालामन्त्रः ॥

■

श्रीललिताम्बिकानीराजनम्

॥श्रीहरिः ॥

अनन्तश्रीविभूषित-ज्योतिष्-द्वारका-पीठाधीश्वर-जगद्गुरु-शङ्कराचार्य-

स्वामिश्रीस्वरूपानन्दसरस्वती-महाराज-कृतम्

जय देवि जय देवि जय ललिते जननि ।
कारुण्यं कुरु वरदे पंकजदलनयने ॥
ध्यान-स्तवन-परायण-शमिताखिलतापे
रक्तकबीजविनाशिनि पावितकृतपापे ।
दनुजाधीशविमर्दिनि पावककृतविमले
विधिवृषवाहनमाधववन्दितपदकमले ॥जय ॥
प्राप्य तवान्तिकमगजे रक्षितसुरवृन्दे
चरणसरोरुहयुग्मं नित्यमहं वन्दे ।
शुम्भासुरमथिनि त्वं मामाश्रयहीनं
करुणापूरितनयने पश्य जनं दीनम् ॥जय ॥
निजभक्ताभयवरदे कल्पितबहुरूपे
मातस्त्वं मामुद्धर पतितं भवकूपे ।
महिषासुरहननेनामर-विहितानन्दे
मग्नं कुरु मामीश्वरि तव भजनानन्दे ॥जय ॥
निशुम्भमानध्वंसिनि रचितासुरमणे
मातर्मयि कुरु करुणामरुणद्युति-चरणे ।
पापं मे हर गिरिजे तव पूजनकरणे
भक्तिं देहि महेश्वरि भीतिहरस्मरणे ॥जय ॥

मात्रातनयगुणानामरुणाम्बुजवदने
क्रियतेऽन्वेषणमयिनाखिल-भयहर-भजने ।
निर्गुणमयि यदि सगुणं मत्वाव महेशि
शरणागतमसुरार्दिनि मामिह भूतेशि ।।जय ।।
चेदपराधो यदि वा संहृतजनशोके
क्षन्तव्यो मेऽसुरवध-तोषितसुरलोके ।
निर्जरमुकुटस्थितमणि-नीराजित-चरणे
शक्तं कुरु मां कृपया भववारिधितरणे ।।जय ।।
अंगीकुरु गिरितनये नीराजन-क़रणम्
दानवकुलपतिहन्त्रि त्वं भव मम शरणम् ।
यद्यंगीकुरुषे नो मद्रचितस्तवनं
जगति न कोऽपि करिष्यति भक्त्या तव भजनम् ।।जय ।।
धनदाभिधकविरिच्छति मम चेतः सततं
तिष्ठतु चरणसमीपे त्वं भव सुखशरणम् ।
यः कश्चित् प्रपठिष्यति नीराजनसमये
तुष्टा भवतु भवेऽस्मिन् देवि दुःखमये ।।जय ।।

।।इति श्रीललिताम्बिकानीराजनम् ।।

■

पुष्पाञ्जलिस्तोत्रम्

(वैदिकपुष्पाञ्जलिः)

योऽपां पुष्पं वेद । पुष्पवान् प्रजावान् पशुमान् भवति । चन्द्रमा वा अपां पुष्पम् । पुष्पवान् प्रजावान् पशुमान् भवति । य एवं वेद । योऽपामायतनं वेद । आयतनवान् भवति । अग्निर्वा अपामायतनम् । आ॰ । योऽग्नेरायतनं वेद । आ॰ । आपो वा अग्नेरायतनम् । आ॰ । य एवं वेद । योऽपामायतनं वेद । आ॰ । वायुर्वा अपामायतनम् । आ॰ । यो वायोरायतनं वेद । आ॰ । आपो वै वायोरायतनम् । आ॰ । य एवं वेद । योऽपामायतनं वेद । आ॰ । असौ वै तपन्नपामायतनम् । आ॰ । योऽमुष्य तपत आयतनं वेद । आ॰ । आपो वा अमुष्य तपत आयतनम् । आ॰ । य एवं वेद । योऽपामायतनं वेद । आ॰ । चन्द्रमा वा अपामायतनम् । आ॰ । यश्चन्द्रमस आयतनं वेद । आ॰ । आपो वै चन्द्रमस आयतनम् । आ॰ । य एवं वेद । योऽपामायतनं वेद । आ॰ । नक्षत्राणि वा अपामायतनम् । आ॰ । यो नक्षत्राणामायतनं वेद । आ॰ । आपो वै नक्षत्राणामायतनम् । आ॰ । य एवं वेद । योऽपामायतनं वेद । आ॰ । पर्जन्यो वा अपामायतनम् । आ॰ । यः पर्जन्यस्यायतनं वेद । आ॰ । आपो वै पर्जन्यस्यायतनम् । आ॰ । य एवं वेद । योऽपामायतनं वेद । आ॰ । संवत्सरो वा अपामायतनम् । आ॰ । यस्संवत्सरस्यायतनं वेद । आ॰ । आपो वै संवत्सरस्यायतनम् । आ॰ । य एवं वेद । योऽप्सु नावं प्रतिष्ठितां वेद । प्रत्येव तिष्ठति ॥

शिवे शिवसुशीतलामृततरङ्गगन्धोल्लस-
न्नवावरणदेवते नवनवामृतस्यन्दिनि ।
गुरुक्रमपुरस्कृते गुणशरीरनित्योज्ज्वले
षडङ्गपरिवारिते कलित एष पुष्पाञ्जलिः ॥
समस्तमुनियक्षकिम्पुरुषसिद्धविद्याधर-
गुह्यासुरसुराप्सरोगणमुखैर्गणैः सेविते ।
निवृत्तितिलकाम्बरप्रकृतिशान्तिविद्याकला-
कलापमधुराकृते कलित एष पुष्पाञ्जलिः ॥

त्रिवेदकृतविग्रहे त्रिविधकृत्यसन्धायिनि
त्रिरूपसमवायिनि त्रिपुरमार्गसञ्चारिणि ।
त्रिलोचनकुटुम्बिनि त्रिगुणसंविदुद्यत्पदे
त्रयि त्रिपुरसुन्दरि त्रिजगदीशि पुष्पाञ्जलिः ॥
पुरन्दरजलाधिपान्तककुबेररक्षोहर-
प्रभञ्जनधनञ्जयप्रभृतिवन्दनानन्दिते ।
प्रवालपदपीठिकानिकटनित्यवर्तिस्वभू-
विरिञ्चिविहितस्तुते विहित एष पुष्पाञ्जलिः ॥
यदानतिबलादलङ्कृतिरुदेति विद्यावय-
स्तपोद्रविणसौरभाकृतिकवित्वसंविन्मयी ।
जरामरणजन्मजं भयमपैति तस्यै समा-
हिताखिलसमीहितप्रसवभूमि तुभ्यं नमः ॥
निरावरणसंविदुद्गमपरास्तभेदोल्लस-
त्पदास्पदचिदेकतावरशरीरिणि स्वैरिणि ।
रसायनतरङ्गिणीरुचितरङ्गसञ्चारिणि
प्रकामपरिपूरणि प्रसृत एष पुष्पाञ्जलिः ॥
तरङ्गयति सम्पदं तदनु संहरत्यापदं
सुखं वितरति श्रियं परिचिनोति हन्ति द्विषः ।
क्षिणोति दुरितानि यत्प्रणतिरम्ब तस्यै सदा
शिवङ्करि शिवे परे शिवपुरन्धि तुभ्यं नमः ॥
त्वमेव जननी पिता त्वमथ बान्धवस्त्वं सखा
त्वमायुरपरं त्वमाभरणमात्मनस्त्वं कला ।
त्वमेव वपुषः स्थितिस्त्वमखिलायतिस्त्वं गुरुः
प्रसीद परमेश्वरि प्रणतिपात्रि तुभ्यं नमः ॥
कञ्जासनादिसुरवृन्दलसत्किरीटकोटिप्रघर्षणसमुज्ज्वलदङ्घ्रिपीठे ।
त्वामेव यामि शरणं विगतान्यभावंदीनं विलोकय दयार्द्रविलोचनेन ॥

महामन्त्रराजान्तबीजं पराख्यं स्वतो न्यस्तबिन्दुं स्वयं न्यस्तहार्दं ।
भवद्वक्त्रवक्षोजगुह्याभिधानं स्वरूपं सकृद्भावयेत् सत्त्वमेव ।
तथान्ये विकल्पेषु निर्विण्णाचित्तास्तदेकं समाधाय बिन्दुत्रयं ते
परानन्दसन्धानसिन्धौ निमग्नाः पुनर्गर्भरन्ध्रं न पश्यन्ति धीराः ॥
चरणनलिनयुग्मं पङ्कजैः पूजयित्वा
कनककमलमालां कण्ठदेशेऽर्पयित्वा ।
शिरसि विनिहितोऽयं रत्नपुष्पांजलिस्ते
हृदयकमलमध्ये देवि हर्षं तनोतु ॥
श्रीललितामहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ।

॥इति पुष्पाञ्जलिस्तोत्रम् ॥

■

मूलदेवतास्तुतिः

[कल्याणवृष्टिस्तवः]

कल्याणवृष्टिभिरिवामृतपूरिताभि-
र्लक्ष्मी स्वयंवरणमङ्गलदीपिकाभिः।
सेवाभिरम्ब तव पादसरोजमूले
नाकारि किं मनसि भक्तिमतां जनानाम् ॥१॥
एतावदेव जननि स्पृहणीयमास्ते
त्वद्वन्दनेषु सलिलस्थगिते च नेत्रे।
सांनिध्यमुद्यदरुणायतसोदरस्य
त्वद्विग्रहस्य सुधया परयाऽऽप्लुतस्य ॥२॥
ईशित्वभावकलुषाः कति नाम सन्ति
ब्रह्मादयः प्रतियुगं प्रलयाभिभूताः।
एकः स एव जननि स्थिरसिद्धिरास्ते
यः पादयोस्तव सकृत् प्रणतिं करोति ॥३॥
लब्ध्वा सकृत् त्रिपुरसुन्दरि तावकीनं
कारुण्यकन्दलितकान्तिभरं कटाक्षम्।
कन्दर्पभावसुभगास्त्वयि भक्तिभाजः
संमोहयन्ति तरुणीर्भुवनत्रयेषु ॥४॥
ह्रींकारमेव तव नाम गृणन्ति वेदाः
मातस्त्रिकोणनिलये त्रिपुरे त्रिनेत्रे।
यत्संस्मृतौ यमभटादिभयं विहाय
दीव्यन्ति नन्दनवने सह लोकपालैः ॥५॥
हन्तुः पुरामधिगलं परिपूर्यमाणः
क्रूरः कथं नु भविता गरलस्य वेगः।

आश्वासनाय किल मातरिदं तवार्धं
देहस्य शश्वदमृताप्लुतशीतलस्य ॥६ ॥
सर्वज्ञतां सदसि वाक्पटुतां प्रसूते
देवि त्वदङ्घ्रिसरसीरुहयोः प्रणामः ।
किञ्च स्फुरन्मुकुटमुज्ज्वलमातपत्रं
द्वे चामरे च वसुधां महतीं ददाति ॥७ ॥
कल्पद्रुमैरभिमतप्रतिपादनेषु
कारुण्यवारिधिभिरम्ब भवत्कटाक्षैः ।
आलोकय त्रिपुरसुन्दरि मामनाथं
त्वय्येव भक्तिभरितं त्वयि दत्तदृष्टिम् ॥८ ॥
हन्तेतरेष्वपि मनांसि निधाय चान्ये
भक्तिं वहन्ति किल पामरदैवतेषु ।
त्वामेव देवि मनसा वचसा स्मरामि
त्वामेव नौमि शरणं जगति त्वमेव ॥९ ॥
लक्ष्येषु सत्स्वपि तवाक्षिविलोकनाना-
मालोकय त्रिपुरसुन्दरि मां कथञ्चित् ।
नूनं मयापि सदृशं करुणैकपात्रं
जातो जनिष्यति जनो न च जायते च ॥१० ॥
ह्रीं ह्रीमिति प्रतिदिनं जपतां जनानां
किं नाम दुर्लभमिह त्रिपुराधिवासे ।
मालाकिरीटमदवारणमाननीयां-
स्तान् सेवते मधुमती स्वयमेव लक्ष्मीः ॥११ ॥
सम्पत्करणि सकलेन्द्रियनन्दनानि
साम्राज्यदानकुशलानि सरोरुहाक्षि ।
त्वद्वन्दनानि दुरितौघहरोद्यतानि
मामेव मातरनिशं कलयन्तु नान्यम् ॥१२ ॥

कल्पोपसंहरणकल्पिततताण्डवस्य
देवस्य खण्डपरशोः परमेश्वरस्य ।
पाशाङ्कुशैक्षवशरासनपुष्पबाणा
सा साक्षिणी विजयते तव मूर्त्तिरेका ॥१३ ॥
लग्नं सदा भवतु मातरिदं तवार्धं
तेजः परं बहुलकुंकुमपङ्कशोणम् ।
भास्वत्किरीटममृतांशुकलावतंसं
मध्ये त्रिकोणमुदितं परमामृतार्द्रम् ॥१४ ॥
ह्रींकारमेव तव धाम तदेव रूपं
त्वन्नाम सुन्दरि सरोजनिवासमूले ।
त्वत्तेजसा परिणतं जगदादिमूलं
सङ्गं तनोतु सरसीरुहसङ्गमस्य ॥१५ ॥
ह्रींकारत्रयसम्पुटेन महता मन्त्रेण सन्दीपितं
स्तोत्रं यः प्रतिवासरं तव पुरो मातर्जपेन्मन्त्रवित् ।
तस्य क्षोणिभुजो भवन्ति वशगाः लक्ष्मीश्चिरस्थायिनी
वाणीनिर्मलसूक्तिभारभरिता जागर्ति दीर्घं वयः ॥१६ ॥

* * * *

ओं गणेशग्रहनक्षत्रयोगिनीं राशिरूपिणीम् ।
देवीं मन्त्रमयीं नौमि मातृकां पीठरूपिणीम् ॥१ ॥
प्रणमामि महादेवीं मातृकां परमेश्वरीम् ।
कालहल्लोहलोल्लोलकलनाशमकारिणीम् ॥२ ॥
यदक्षरैकमात्रेऽपि संसिद्धे स्पर्धते नरः ।
रविताक्ष्यैन्दुकन्दर्पशङ्करानलविष्णुभिः ॥३ ॥
यदक्षरशशिज्योत्स्नामण्डितं भुवनत्रयम् ।
वन्दे सर्वेश्वरीं देवीं महाश्रीसिद्धमातृकाम् ॥४ ॥

यदक्षरमहासूत्रप्रोतमेतज्जगत्त्रयम् ।
ब्रह्माण्डादिकटाहान्तं तां वन्दे सिद्धमातृकाम् ॥५ ॥
यदेकादशमाधारं बीजं कोणत्रयोद्भवम् ।
ब्रह्माण्डादिकटाहान्तं जगदद्यापि दृश्यते ॥६ ॥
अकचादिटतोन्नद्धपयशाक्षरवर्गिणीम् ।
ज्येष्ठाङ्गबाहुहृत्पृष्ठकटिपादनिवासिनीम् ॥७ ॥
तामीकाराक्षरोद्धारां सारात् सारां परात् पराम् ।
प्रणमामि महादेवीं परमानन्दरूपिणीम् ॥८ ॥
अद्यापि यस्या जानन्ति न मनागपि देवताः ।
केयं कस्मात् क्व केनेति सरूपारूपभावनाम् ॥९ ॥
वन्दे तामहमक्षय्यां क्षकाराक्षररूपिणीम् ।
देवीं कुलकलोल्लासप्रोल्लसन्तीं परां शिवाम् ॥१० ॥
वर्गानुक्रमयोगेन यस्यां मात्रष्टकं स्थितम् ।
वन्दे तामष्टवर्गोत्थमहासिद्ध्यष्टकेश्वरीम् ॥११ ॥
कामपूर्णजकाराख्यश्रीपीठान्तर्निवासिनीम् ।
चतुराज्ञाकोशमूलां नौमि श्रीत्रिपुरामहम् ॥१२ ॥
इति द्वादशभिः श्लोकैः स्तवनं सर्वसिद्धिकृत् ।
देव्यास्त्वखण्डरूपायाः स्तवनं तव तथ्यतः ॥
भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवावलम्बनम् ।
त्वयि जातापराधानां त्वमेव शरणं शिवे ॥
जपो जल्पः शिल्पं सकलमपि मुद्राविरचना
गतिः प्रादक्षिण्यक्रमणमशनाद्याहुतिविधिः ।
प्रणामः संवेशः सुखमखिलमात्मार्पणदृशा
सपर्यापर्यायस्तव भवतु यन्मे विलसितम् ॥
पिता माता भ्राता गुरुरथ सुहृद्बान्धवजनः
प्रभुस्तीर्थं कर्माविकलमिह चामुत्र च हितम् ।

विशुद्धा विद्या वा पदमपि च तत्राप्यमसि मे
त्वमेव श्रीमातः स्वपिमि गतशङ्कः सुखतमः ॥
दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा
दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे ।
अनेनायं धन्यो भवति न च ते हानिरियता
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥
हे सद्रूपिणि हे चिदर्चिरुदये हे कामराजप्रिये
हे भण्डासुरहन्त्रि हेऽद्भुतनिधे हेऽनङ्गसञ्जीविनि ।
हे विश्वप्रसवित्रि हे सकरुणे हे दीनरक्षामणे
हे श्रीमल्ललिताम्ब हे परशिवे मां पाहि डिम्भं निजम् ॥
नमो हेमाद्रिस्थे शिवसति नमः श्रीपुरगते
नमः पद्माटव्यां कुतुकिनि नमो रत्नगृहगे ।
नमः श्रीचक्रस्थेऽखिलमयि नमो बिन्दुनिलये
नमः कामेशाङ्कस्थितिमति नमस्तेऽम्ब ललिते ॥
जय जय जगदम्ब भक्तवश्ये
जय जय सान्द्रकृपावशान्तरङ्गे ।
जय जय निखिलार्थदानशौण्डे
जय जय हे ललिताम्बचित्सुखाब्धे ॥
षडङ्गदेवतां नित्यां दिव्याद्योघत्रयीगुरून् ।
नमाम्यायुधदेवीश्च शक्तीश्चावरणस्थिताः ॥
अमुकानन्दनाथाय मम श्रीगुरवे नमः ।
अमुकानन्दनाथाय गुरवे परमाय मे ॥
अमुकानन्दनाथाय गुरवे परमेष्ठिने ॥
यदिदं श्रीगुरुस्तोत्रं स्वस्वरूपोपलक्षणम् ॥
बालभावानुसारेण ममेदं हि विचेष्टितम् ।
मातृवात्सल्यसदृशं त्वया देवि विधीयताम् ॥
॥ इति मूलदेवतास्तुतिः ॥

■

देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
च चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः ।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥१ ॥
विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया
विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।
तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥२ ॥
पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३ ॥
जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि ! द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत् प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४ ॥
परित्यक्ता देवा विविध-विधि-सेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम् ॥५ ॥
श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटिकनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥६ ॥

चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि त्वत्पाणिग्रहण-परिपाटी-फलमिदम् ॥७॥
न मोक्षस्याकांक्षा भवविभववाञ्छापि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छाऽपि न पुनः ।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥८॥
नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्षचिन्तनपरैर्न कृतं वचोभिः ।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव ॥९॥
आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं
करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि ।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः
क्षुधा-तृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥
जगदम्ब विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि ।
अपराधपरम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥
मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि यथा योग्यं तथा कुरु ॥१२॥

॥ इति देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम् ॥

■

परिशिष्टात्मको भागः

॥श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्यै नमः ॥

सौन्दर्यलहरी

[भगवान् भाष्यकार श्रीमदादिशंकराचार्य प्रणीत सौन्दर्यलहरी उनकी उत्कृष्ट कृति है । यह एक स्तोत्र ही नहीं, समस्त तन्त्र-ग्रन्थों का सार है । आचार्य ने प्रस्तुत स्तोत्र के प्रत्येक श्लोक को जहाँ तान्त्रिक स्वरूप दिया, वहीं भगवती के समुपासकों के लिए विविध सहज सुलभ प्रयोगों का वर्णन भी किया है । निश्चय ही साधकगण निर्दिष्ट प्रयोगों से मोक्षमार्गगामी होंगे । साधारणतया प्रतिदिन इसके शत-श्लोकों के आवर्तक श्रीचक्राधिष्ठायिनी भगवती महात्रिपुरसुन्दरी के कृपापात्र हो जाते हैं । इस स्तोत्र से साधकों के हृदय में अतिसुख, महान् तेज तथा तत्त्वज्ञान की प्राप्ति होती है । उसके तेजोमय प्रकाश से सम्पूर्ण जगत् प्रकाशित हो रहा है । जैसे मन्त्रों और यन्त्रों के द्वारा भगवती की उपासना की जाती है वैसे ही शरीर को श्रीचक्र मानकर मन्त्रयोग से कुण्डलिनी शक्ति को जागृत किया जाता है ।]

न्यास :

अस्य श्रीसौन्दर्यलहरीस्तोत्रस्य गोविन्द-ऋषिः । अनुष्टुप्छन्दः । श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीदेवता । शिवः शक्त्या युक्त इति बीजम् । सुधासिन्धोर्मध्य इति शक्तिः । जपो जल्पः शिल्पमिति कीलकम् । हां हीं हूं हैं हौं हः इत्यादि षडङ्गन्यासः ।

ध्यानम्

लौहित्यनिर्जितजपाकुसुमानुरागां पाशाङ्कुशे धनुरिषूनपि धारयन्तीम् ।
ताम्रायतामरुणमाल्यविशेषशोभां ताम्बूलपूरितमुखीं त्रिपुरां नमामि ॥

लमित्यादिपञ्चोपचाराः ।

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।
अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरिञ्चादिभिरपि
प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति ॥१ ॥

तनीयांसं पांसुं तव चरणपङ्केरुहभवं
विरिञ्चिः संचिन्वन्विरचयति लोकानविकलम् ।
वहत्येनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसां
हरः संक्षुभ्यैनं भजति भसितोद्धूलनविधिम् ॥२ ॥

अविद्यानामन्तस्तिमिरमिहिरद्वीपनगरी
जडानां चैतन्यस्तबकमकरन्दस्रुतिझरी ।
दरिद्राणां चिन्तामणिगुणनिका जन्मजलधौ
निमग्नानां द्रंष्ट्रा मुररिपुवराहस्य भवति ॥३ ॥

त्वदन्यः पाणिभ्यामभयवरदो दैवतगण-
स्त्वमेका नैवासि प्रकटितवराभीत्यभिनया ।
भयात्त्रातुं दातुं फलमपि च वाञ्छासमधिकं
शरण्ये लोकानां तव हि चरणावेव निपुणौ ॥४ ॥

हरिस्त्वामाराध्य प्रणतजनसौभाग्यजननीं
पुरा नारी भूत्वा पुररिपुमपि क्षोभमनयत् ।
स्मरोऽपि त्वां नत्वा रतिनयनलेह्येन वपुषा
मुनीनामप्यन्तः प्रभवति हि मोहाय महताम् ॥५ ॥

धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी पञ्च विशिखाः
वसन्तः सामन्तो मलयमरुदायोधनरथः ।
तथाऽप्येकः सर्वं हिमगिरिसुते कामपि कृपा-
मपाङ्गात्ते लब्ध्वा जगदिदमनङ्गो विजयते ॥६ ॥

क्वणत्काञ्चीदामा करिकलभकुम्भस्तननता
परिक्षीणा मध्ये परिणतशरच्चन्द्रवदना ।
धनुर्बाणान् पाशं सृणिमपि दधाना करतलैः
पुरस्तादास्तां नः पुरमथितुराहोपुरुषिका ॥७॥

सुधासिन्धोर्मध्ये सुरविटपिवाटीपरिवृते
मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणिगृहे ।
शिवाकारे मञ्चे परमशिवपर्यङ्कनिलयां
भजन्ति त्वां धन्याः कतिचन चिदानन्दलहरीम् ॥८॥

महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि ।
मनोऽपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्त्वा कुलपथं
सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसे ॥९॥

सुधाधारासारैश्चरणयुगलान्तर्विगलितैः
प्रपञ्चं सिञ्चन्ती पुनरपि रसाम्नायमहसः ।
अवाप्य स्वां भूमिं भुजगनिभमध्युष्टवलयं
स्वमात्मानं कृत्वा स्वपिषि कुलकुण्डे कुहरिणि ॥१०॥

चतुर्भिः श्रीकण्ठैः शिवयुवतिभिः पञ्चभिरपि
प्रभिन्नाभिः शम्भोर्नवभिरपि मूलप्रकृतिभिः ॥
चतुश्चत्वारिंशद्वसुदलकलाश्रत्रिवलय-
त्रिरेखाभिः सार्धं तव शरणकोणाः परिणताः ॥११॥

त्वदीयं सौन्दर्यं तुहिनगिरिकन्ये तुलयितुं
कवीन्द्राः कल्पन्ते कथमपि विरिञ्चिप्रभृतयः ।
यदालोकौत्सुक्यादमरललना यान्ति मनसा
तपोभिर्दुष्प्रापामपि गिरिशसायुज्यपदवीम् ॥१२॥

नरं वर्षीयांसं नयनविरसं नर्मसु जडं
तवापाङ्गालोके पतितमनुधावन्ति शतशः ।
गलद्वेणीबन्धाः कुचकलशविस्रस्तसिचया
हठात्त्रुट्यत्काञ्च्यो विगलितदुकूला युवतयः ॥१३॥

क्षितौ षट्पञ्चाशद्द्विसमधिकपञ्चाशदुदके
हुताशे द्वाषष्टिश्चतुरधिकपञ्चाशदनिले ।
दिवि द्विःषट्त्रिंशन्मनसि च चतुःषष्टिरिति ये
मयूखास्तेषामप्युपरि तव पादाम्बुजयुगम् ॥१४॥

शरज्ज्योत्स्नाशुद्धां शशियुतजटाजूटमुकुटां
वरत्रासत्राणस्फटिकघटिकापुस्तककराम् ।
सकृन्नत्वा नत्वा कथमिव सतां संनिदधते
मधक्षीरद्राक्षामधुरिमधुरीणाः फणितयः ॥१५॥

कवीन्द्राणां चेतःकमलवनबालातपरुचिं
भजन्ते ये सन्तः कतिचिदरुणामेव भवतीम् ।
विरिञ्चिप्रेयस्यास्तरुणतरशृङ्गारलहरी-
गभीराभिर्वाग्भिर्विदधति सतां रञ्जनममी ॥१६॥

सवित्रीभिर्वाचां शशिमणिशिलाभङ्गरुचिभि-
र्वशिन्याद्याभिस्त्वां सह जननि सञ्चिन्तयति यः ।
स कर्ता काव्यानां भवति महतां भङ्गिरुचिभि-
र्वचोभिर्वाग्देवीवदनकमलामोदमधुरैः ॥१७॥

तनुच्छायाभिस्ते तरुणतरणिश्रीसरणिभि-
र्दिवं सर्वामुर्वीमरुणिमनिमग्नां स्मरति यः ।
भवन्त्यस्य त्रस्यद्वनहरिणशालीननयनाः
सहोर्वश्या वश्याः कति कति न गीर्वाणगणिकाः ॥१८॥

मुखं बिन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तदधो
हरार्धं ध्यायेद्यो हरमहिषि ते मन्मथकलाम्।
स सद्यः संक्षोभं नयति वनिता इत्यतिलघु
त्रिलोकीमप्याशु भ्रमयति रवीन्दुस्तनयुगाम् ॥१९॥

किरन्तीमङ्गेभ्यः किरणनिकुरम्बामृतरसं
हृदि त्वामाधत्ते हिमकरशिलामूर्तिमिव यः।
स सर्पाणां दर्पं शमयति शकुन्ताधिप इव
ज्वरप्लुष्टान् दृष्ट्या सुखयति सुधाधारसिरया ॥२०॥

तटिल्लेखातन्वीं तपनशशिवैश्वानरमयीं
निषण्णां षण्णामप्युपरि कमलानां तव कलाम्।
महापद्माटव्यां मृदितकलमायेन मनसा
महान्तः पश्यन्तो दधति परमाह्लादलहरीम् ॥२१॥

भवानि त्वं दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणा-
मिति स्तोतुं वाञ्छन् कथयति भवानि त्वमिति यः।
तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदाम् ॥२२॥

त्वया हृत्वा वामं वपुरपरितृप्तेन मनसा
शरीरार्धं शम्भोरपरमपि शङ्के हृतमभूत्।
यदेतत्त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिनयनं
कुचाभ्यामानम्रं कुटिलशशिचूडालमुकुटम् ॥२३॥

जगत्सूते धाता हरिरवति रुद्रः क्षपयते
तिरस्कुर्वन्नेतत्स्वमपि वपुरीशस्तिरयति।
सदापूर्वः सर्वं तदिदमनुगृह्णाति च शिव-
स्तवाज्ञामालम्ब्य क्षणचलितयोर्भ्रूलतिकयोः ॥२४॥

त्रयाणां देवानां त्रिगुणजनितानां तव शिवे
भवेत्पूजा पूजा तव चरणयोर्या विरचिता ।
तथा हि त्वत्पादोद्वहनमणिपीठस्य निकटे
स्थिता ह्येते शश्वन्मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः ॥२५॥
विरिञ्चिः पञ्चत्वं व्रजति हरिराप्नोति विरतिं
विनाशं कीनाशो भजति धनदो याति निधनम् ।
वितन्द्री माहेन्द्री विततिरपि संमीलितदृशा
महासंहारेऽस्मिन् विहरति सति त्वत्पतिरसौ ॥२६॥
जपो जल्पः शिल्पं सकलमपि मुद्राविरचना
गतिः प्रादक्षिण्यक्रमणमशनाद्याहुतिविधिः ।
प्रणामः संवेशः सुखमखिलमात्मार्पणदृशा
सपर्यापर्यायस्तव भवतु यन्मे विलसितम् ॥२७॥
सुधामप्यास्वाद्य प्रतिभयजरामृत्युहरिणीं
विपद्यन्ते विश्वे विधिशतमखाद्या दिविषदः ।
करालं यत्क्ष्वेलं कवलितवतः कालकलना
न शंभोस्तन्मूलं तव जननि ताटङ्कमहिमा ॥२८॥

किरीटं वैरिञ्चं परिहर पुरः कैटभभिदः
कठोरे कोटीरे स्खलसि जहि जम्भारिमुकुटम् ।
प्रणम्रेष्वेतेषु प्रसभमुपयातस्य भवनं
भवस्याभ्युत्थाने तव परिजनोक्तिर्विजयते ॥२९॥

स्वदेहोद्भूताभिर्घृणिभिरणिमाद्याभिरभितः
निषेव्ये नित्ये त्वामहमिति सदा भावयति यः ।
किमाश्चर्यं तस्य त्रिनयनसमृद्धिं तृणयतः
महासंवर्ताग्निर्विरचयति नीराजनविधिम् ॥३०॥

चतुःषष्ट्या तन्त्रैः सकलमतिसन्धाय भुवनं
स्थितस्तत्तत्सिद्धिप्रसवपरतन्त्रैः पशुपतिः ।
पुनस्त्वन्निर्बन्धादखिलपुरुषार्थैकघटना-
स्वतन्त्रं ते तन्त्रं क्षितितलमवातीतरदिदम् ॥३१ ॥

शिवः शक्तिः कामः क्षितिरथ रविः शीतकिरणः
स्मरो हंसः शक्रस्तदनु च परामारहरयः ।
अमी हल्लेखाभिस्तिसृभिरवसानेषु घटिता
भजन्ते वर्णास्ते तव जननि नामावयवताम् ॥३२ ॥

स्मरं योनिं लक्ष्मीं त्रितयमिदमादौ तव मनो-
र्निधायैके नित्ये निरवधिमहाभोगरसिकाः ।
भजन्ति त्वां चिन्तामणिगुणनिबद्धाक्षवलयाः
शिवाग्नौ जुह्वन्तः सुरभिघृतधाराहुतिशतैः ॥३३ ॥

शरीरं त्वं शंभोः शशिमिहिरवक्षोरुहयुगं
तवात्मानं मन्ये भगवति नवात्मानमनघम् ।
अतः शेषः शेषीत्ययमुभयसाधारणतया
स्थितः सम्बन्धो वां समरसपरानन्दपरयोः ॥३४ ॥

मनस्त्वं व्योम त्वं मरुदसि मरुत्सारथिरसि
त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वयि परिणतायां न हि परम् ।
त्वमेव स्वात्मानं परिणमयितुं विश्ववपुषा
चिदानन्दाकारं शिवयुवतिभावेन बिभृषे ॥३५ ॥

तवाज्ञाचक्रस्थं तपनशशिकोटिद्युतिधरं
परं शंभुं वन्दे परिमिलितपार्श्वं परचिता ।
यमाराध्यन् भक्त्या रविशशिशुचीनामविषये
निरालोकेऽलोके निवसति हि भालोकभुवने ॥३६ ॥

विशुद्धौ ते शुद्धस्फटिकविशदं व्योमजनकं
शिवं सेवे देवीमपि शिवसमानव्यवसिताम् ।
ययोः कान्त्या यान्त्याः शशिकिरणसारूप्यसरणे-
र्विधूतान्तर्ध्वान्ता विलसति चकोरीव जगती ॥३७॥
समुन्मीलत्संवित्कमलमकरन्दैकरसिकं
भजे हंसद्वन्द्वं किमपि महतां मानसचरम् ।
यदालापादष्टादशगुणितविद्यापरिणति-
र्यदादत्ते दोषाद्गुणमखिलम्भ्यः पय इव ॥३८॥
तव स्वाधिष्ठाने हुतवहमधिष्ठाय निरतं
तमीडे संवर्तं जननि महतीं तां च समयाम् ।
यदालोके लोकान्दहति महति क्रोधकलिते
दयार्द्रा या दृष्टिः शिशिरमुपचारं रचयति ॥३९॥
तटित्त्वन्तं शक्त्या तिमिरपरिपन्थिस्फुरणया
स्फुरन्नानारत्नाभरणपरिणद्धेन्द्रधनुषम् ।
तव श्यामं मेघं कमपि मणिपूरैकशरणं
निषेवे वर्षन्तं हरमिहिरतप्तं त्रिभुवनम् ॥४०॥

तवाधारे मूले सह समयया लास्यपरया
नवात्मानं मन्ये नवरसमहाताण्डवनटम् ।
उभाभ्यामेताभ्यामुदयविधिमुद्दिश्य दयया
सनाथाभ्यां यज्ञे जनकजननीमज्जगदिदम् ॥४१॥

गतैर्माणिक्यत्वं गगनमणिभिः सान्द्रघटितं
किरीटं ते हैमं हिमगिरिसुते कीर्तयति यः ।
स नीडेयच्छायाच्छुरणशबलं चन्द्रशकलं
धनुः शौनासीरं किमिति न निबध्नाति धिषणाम् ॥४२॥

धुनोतु ध्वान्तं नस्तुलितदलितेन्दीवरवनं
घनस्निग्धश्लक्ष्णं चिकुरनिकुरम्बं तव शिवे।
यदीयं सौरभ्यं सहजमुपलब्धुं सुमनसो
वसन्त्यस्मिन्मन्ये बलमथनवाटीविटपिनाम् ॥४३॥

तनोतु क्षेमं नस्तव वदनसौन्दर्यलहरी-
परीवाहस्रोतःसरणिरिव सीमन्तसरणिः।
वहन्ती सिन्दूरं प्रबलकबरीभारतिमिर-
द्विषां वृन्दैर्बन्दीकृतमिव नवीनार्ककिरणम् ॥४४॥

अरालैः स्वाभाव्यादलिकलभसश्रीभिरलकैः
परीतं ते वक्त्रं परिहसति पङ्केरुहरुचिम्।
दरस्मेरे यस्मिन् दशनरुचिकिञ्जल्करुचिरे
सुगन्धौ माद्यन्ति स्मरदहनचक्षुर्मधुलिहः ॥४५॥

ललाटं लावण्यद्युतिविमलमाभाति तव यत्
द्वितीयं तन्मन्ये मुकुटघटितं चन्द्रशकलम्।
विपर्यासन्यासादुभयमपि संभूय च मिथः
सुधालेपस्यूतिः परिणमति राकाहिमकरः ॥४६॥

भ्रुवौ भुग्ने किञ्चिद्भुवनभयभङ्गव्यसनिनि
त्वदीये नेत्राभ्यां मधुकररुचिभ्यां धृतगुणम्।
धनुर्मन्ये सव्येतरकरगृहीतं रतिपतेः
प्रकोष्ठे मुष्टौ च स्थगयति निगूढान्तरमुमे ॥४७॥

अहस्सूते सव्यं तव नयनमर्कात्मकतया
त्रियामां वामं ते सृजति रजनीनायकतया।
तृतीया ते दृष्टिर्दरदलितहेमाम्बुजरुचिः
समाधत्ते सन्ध्यां दिवसनिशयोरन्तरचरीम् ॥४८॥

विशाला कल्याणी स्फुटरुचिरयोध्या कुवलयैः
कृपाधाराऽऽधारा किमपि मधुराऽऽभोगवतिका।
अवन्ती दृष्टिस्ते बहुनगरविस्तारविजया
ध्रुवं तत्तन्नामव्यवहरणयोग्या विजयते ॥४९॥

कवीनां सन्दर्भस्तबकमकरन्दैकरसिकं
कटाक्षव्याक्षेपभ्रमरकलभौ कर्णयुगलम्।
अमुञ्चन्तौ दृष्ट्वा तव नवरसास्वादतरला-
असूयासंसर्गादलिकनयनं किंचिदरुणम् ॥५०॥

शिवे शृङ्गारार्द्रा तदितरजने कुत्सनपरा
सरोषा गङ्गायां गिरिशचरिते विस्मयवती।
हराहिभ्यो भीता सरसिरुहसौभाग्यजननी
सखीषु स्मेरा ते मयि जननि दृष्टिस्सकरुणा ॥५१॥

गते कर्णाभ्यर्णं गरुत इव पक्ष्माणि दधती
पुरां भेत्तुश्चित्तप्रशमरसविद्रावणफले।
इमे नेत्रे गोत्राधरपतिकुलोत्तंसकलिकें
तवाकर्णाकृष्टस्मरशरविलासं कलयतः ॥५२॥

विभक्तत्रैवर्ण्यं व्यतिकरितलीलाञ्जनतया
विभाति त्वन्नेत्रत्रितयमिदमीशानदयिते।
पुनस्स्रष्टुं देवान् द्रुहिणहरिरुद्रानुपरतान्
रजस्सत्त्वं बिभ्रत्तम इति गुणानां त्रयमिव ॥५३॥

पवित्रीकर्तुं नः पशुपतिपराधीनहृदये
दयामित्रैर्नेत्रैररुणधवलश्यामरुचिभिः।
नदः शोणो गङ्गा तपनतनयेति ध्रुवममुं
त्रयाणां तीर्थानामुपनयसि सम्भेदमनघम् ॥५४॥

निमेषोन्मेषाभ्यां प्रलयमुदयं याति जगती
तवेत्याहुस्सन्तो धरणिधरराजन्यतनये ।
त्वदुन्मेषाज्जातं जगदिदमशेषं प्रलयतः
परित्रातुं शङ्के परिहतनिमेषास्तव दृशः ॥५५ ॥

तवापर्णे कर्णे जपनयनपैशुन्यचकिताः
निलीयन्ते तोये नियतमनिमेषाश्शफरिकाः ।
इयं च श्रीर्बद्धच्छदपुटकवाटं कुवलयं
जहाति प्रत्यूषे निशि च विघटय्य प्रविशति ॥५६ ॥

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा
दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे ।
अनेनायं धन्यो भवति न च ते हानिरियता
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥५७ ॥

अरालं ते पालीयुगलनगराजन्यतनये
न केषामाधत्ते कुसुमशरकोदण्डकुतुकम् ।
तिरश्चीनो यत्र श्रवणपथमुल्लङ्घ्य विलस-
न्नापाङ्गव्यासङ्गो दिशति शरसन्धानधिषणाम् ॥५८ ॥

स्फुरद्गण्डाभोगप्रतिफलिततादङ्कयुगलं
चतुश्चक्रं मन्ये तव मुखमिदं मन्मथरथम् ।
यमारुह्य द्रुह्यत्यवनिरथमर्केन्दुचरणं
महावीरो मारः प्रमथपतये सज्जितवते ॥५९ ॥

सरस्वत्यास्सूक्तीरमृतलहरीकोशलहरीः
पिबन्त्याः शर्वाणि श्रवणचुलुकाभ्यामविरलम् ।
चमत्कारश्लाघाचलितशिरसः कुण्डलगणो
झणत्कारैस्तारैः प्रतिवचनमाचष्ट इव ते ॥६० ॥

असौ नासावंशस्तुहिनगिरिवंशध्वजपटि
त्वदीयो नेदीयः फलतु फलमस्माकमुचितम् ।
वहत्यन्तर्मुक्ताः शिशिरकरनिश्वासगलितं
समृद्ध्या यत्तासां बहिरपि च मुक्तामणिधरः ॥६१ ॥

प्रकृत्याऽऽरक्तायास्तव सुदति दन्तच्छदरुचेः
प्रवक्ष्ये सादृश्यं जनयतु फलं विद्रुमलता ।
न बिम्बं तद्बिम्बप्रतिफलनरागादरुणितं
तुलामध्यारोढुं कथमिव विलज्जेत कलया ॥६२ ॥

स्मितज्योत्स्नाजालं तव वदनचन्द्रस्य पिबतां
चकोराणामासीदतिरसतया चञ्चुजडिमा ।
अतस्ते शीतांशोरमृतलहरीमाम्लरुचयः
पिबन्ति स्वच्छन्दं निशि निशि भृशं काञ्जिकधिया ॥६३ ॥

अविश्रान्तं पत्युर्गुणगणकथाम्रेडनजपा
जपापुष्पच्छाया तव जननि जिह्वा जयति सा ।
यदग्रासीनायाः स्फटिकदृशदच्छच्छविमयी
सरस्वत्या मूर्तिः परिणमति माणिक्यवपुषा ॥६४ ॥

रणे जित्वा दैत्यानपहृतशिरस्त्रैः कवचिभि-
र्निवृत्तैश्चण्डांशत्रिपुरहरनिर्माल्यविमुखैः ।
विशाखेन्द्रोपेन्द्रैः शशिविशदकर्पूरशकलाः
विलीयन्ते मातस्तव वदनताम्बूलकबलाः ॥६५ ॥

विपञ्च्या गायन्ती विविधमवदानं पशुपतेः
त्वयाऽऽरब्धे वक्तुं चलितशिरसा साधुवचने ।
तदीयैर्माधुर्यैरपलपिततन्त्रीकलरवां
निजां वीणां वाणी निचुलयति चोलेन निभृतम् ॥६६ ॥

कराग्रेण स्पृष्टं तुहिनगिरिणा वत्सलतया
गिरीशेनोदस्तं मुहुरधरपानाकुलतया ।
करग्राह्यं शम्भोर्मुखमुकुरवृन्तं गिरिसुते
कथंकारं ब्रूमस्तव चुबुकमौपम्यरहितम् ॥६७ ॥
भुजाश्लेषान्नित्यं पुरदमयितुः कण्टकवती
तव ग्रीवा धत्ते मुखकमलनालश्रियमियम् ।
स्वतश्श्वेता कालागुरुबहुलजम्बालमलिना
मृणालीलालित्यं वहति यदधो हारलतिका ॥६८ ॥
गले रेखास्तिस्रो गतिगमकगीतैकनिपुणे
विवाहव्यानद्धप्रगुणगुणसंख्याप्रतिभुवः ।
विराजन्ते नानाविधमधुररागाकरभुवां
त्रयाणां ग्रामाणां स्थितिनियमसीमान इव ते ॥६९ ॥
मृणाली मृद्वीनां तव भुजलतानां चतसृणां
चतुर्भिस्सौन्दर्यं सरसिजभवस्तौति वदनैः ।
नखेभ्यः संत्रस्यन् प्रथममथनादन्धकरिपोः
चतुर्णां शीर्षाणां सममभयहस्तार्पणधिया ॥७० ॥

नखानामुद्योतैर्नवनलिनरागं विहसतां
कराणां ते कान्तिं कथय कथयामः कथमुमे ।
कयाचिद्वा साम्यं भजतु कलया हन्त कमलं
यदि क्रीडल्लक्ष्मीचरणतललाक्षारसचणम् ॥७१ ॥

स[illegible]दद्विपवदनपीतं स्तनयुगं
[illegible]वेदं [illegible] हरतु सततं प्रस्नुतमुखम् ।
यदालोक्याशङ्काकुलितहृदयो हासजनकः
स्वकुम्भौ हेरम्बः परिमृशति हस्तेन झटिति ॥७२ ॥

अमू ते वक्षोजावमृतरसमाणिक्यकुतुपौ
न संदेहस्पन्दो नगपतिपताके मनसि नः ।
पिबन्तौ तौ यस्मादविदिततधूसङ्गरसिकौ
कुमारावद्यापि द्विरदवदनक्रौञ्चदलनौ ॥७३ ॥

वहत्यम्ब स्तम्बेरमदनुजकुम्भप्रकृतिभिः
समारब्धां मुक्तामणिभिरमलां हारलतिकाम् ।
कुचाभोगो बिम्बाधररुचिभिरन्तश्शबलितां
प्रतापव्यामिश्रां पुरदमयितुः कीर्तिमिव ते ॥७४ ॥

तव स्तन्यं मन्ये धरणिधरकन्ये हृदयतः
पयःपारावारः परिवहति सारस्वतमिव ।
दयावत्या दत्तं द्रविडशिशुरास्वाद्य तव यत्
कवीनां प्रौढानामजनि कमनीयः कवयिता ॥७५ ॥

हरक्रोधज्वालावलिभिरवलीढेन वपुषा
गभीरे ते नाभीसरसि कृतसङ्गो मनसिजः ।
समुत्तस्थौ तस्मादचलतनये धूमलतिका
जनस्तां जानीते तव जननि रोमावलिरिति ॥७६ ॥

यदेतत्कालिन्दी तनुतरतरङ्गाकृति शिवे
कृशे मध्ये किंचिज्जननि तव यद्भाति सुधियाम् ।
विमर्दादन्योन्यं कुचकलशयोरन्तरगतं
तनूभूतं व्योम प्रविशदिव नाभिं कुहरिणीम् ॥७७ ॥

स्थिरो गङ्गावर्तः स्तनमुकुलरोमावलिलता-
कलावालं कुण्डं कुसुमशरतेजोहुतभुजः ।
रतेर्लीलागारं किमपि तव नाभिर्गिरिसुते
बिलद्वारं सिद्धेर्गिरिशनयनानां विजयते ॥७८ ॥

निसर्गक्षीणस्य स्तनतटभरेण क्लमजुषो
नमन्मूर्त्तेर्नारीतिलकशनकैस्त्रुट्यत इव।
चिरं ते मध्यस्य त्रुटिततटिनीतीरतरुणा
समावस्थास्थेम्नो भवतु कुशलं शैलतनये ॥७९॥

कुचौ सद्यस्स्विद्यत्तटघटितकूर्पासभिदुरौ
कषन्तौ दोर्मूले कनककलशाभौ कलयता।
तव त्रातुं भङ्गादलमिति वलग्नं तनुभुवा
त्रिधा नद्धं देवि त्रिवलि लवलीवल्लिभिरिव ॥८०॥

गुरुत्वं विस्तारं क्षितिधरपतिः पार्वति निजात्
नितम्बादाच्छिद्य त्वयि हरणरूपेण निदधे।
अतस्ते विस्तीर्णो गुरुरयमशेषां वसुमतीं
नितम्बप्राग्भारस्स्थगयति लघुत्वं नयति च ॥८१॥

करीन्द्राणां शुण्डान् कनककदलीकाण्डपटलीं
उभाभ्यामूरुभ्यामुभयमपि निर्जित्य भवति।
सुवृत्ताभ्यां पत्युः प्रणतिकठिनाभ्यां गिरिसुते
विधिज्ञे जानुभ्यां विबुधकरिकुम्भद्वयमसि ॥८२॥

पराजेतुं रुद्रं द्विगुणशरगर्भौ गिरिसुते
निषङ्गौ जङ्घे ते विषमविशिखो वाढमकृत।
यदग्रे दृश्यन्ते दशशरफलाः पादयुगली-
नखाग्रच्छद्मानस्सुरमुकुटशाणैकनिशिताः ॥८३॥

श्रुतीनां मूर्धानो दधति तव यौ शेखरतया
ममाप्येतौ मातश्शिरसि दयया धेहि चरणौ।
ययोः पाद्यं पाथः पशुपतिजटाजूटतटिनी
ययोर्लाक्षालक्ष्मीररुणहरिचूडामणिरुचिः ॥८४॥

नमोवाकं ब्रूमो नयनरमणीयाय पदयोः
तवास्मै द्वन्द्वाय स्फुटरुचिरसालक्तकवते ।
असूयत्यत्यन्तं यदभिहननाय स्पृहयते
पशूनामीशानः प्रमदवनकङ्केलितरवे ॥८५ ॥
मृषा कृत्वा गोत्रस्खलनमथ वैलक्ष्यनमितं
ललाटे भर्तारं चरणकमले ताडयति ते ।
चिरादन्तश्शल्यं दहनकृतमुन्मूलितवता
तुलाकोटिक्वाणैः किलिकिलितमीशानरिपुणा ॥८६ ॥
हिमानीहन्तव्यं हिमगिरिनिवासैकचतुरौ
निशायां निद्राणं निशि चरमभागे च विशदौ ।
वरं लक्ष्मीपात्रं श्रियमतिसृजन्तौ समयिनां
सरोजं त्वत्पादौ जननि जयतश्चित्रमिह किम् ॥८७ ॥
पदं ते कीर्तीनां प्रपदमपदं देवि विपदां
कथं नीतं सद्भिः कठिनकमठीकर्परतुलाम् ।
कथं वा बाहुभ्यामुपयमनकाले पुरभिदा
यदादाय न्यस्तं दृषदि दयमानेन मनसा ॥८८ ॥
नखैर्नाकस्त्रीणां करकमलसंकोचशशिभिः
तरूणां दिव्यानां हसत इव ते चण्डि चरणौ ।
फलानि स्वस्थेभ्यः किसलयकराग्रेण ददतां
दरिद्रेभ्यो भद्रां श्रियमनिशमह्नाय ददतौ ॥८९ ॥
ददाने दीनेभ्यश्श्रियमनिशमाशानुसदृशीं
अमन्दं सौन्दर्यप्रकरमकरन्दं विकिरति ।
तवास्मिन्मन्दारस्तबकसुभगे यातु चरणे
निमज्जन्मज्जीवः करणचरणष्षट्चरणताम् ॥९० ॥

पदन्यासक्रीडापरिचयमिवारब्धुमनसः
स्खलन्तस्ते खेलं भवनकलहंसा न जहति ।
अतस्तेषां शिक्षां सुभगमणिमञ्जीररणित-
च्छलादाचक्षाणं चरणकमलं चारुचरिते ॥९१ ॥

गतास्ते मञ्चत्वं द्रुहिणहरिरुद्रेश्वरभृतः
शिवः स्वच्छच्छायाघटितकपटप्रच्छदपटः ।
त्वदीयानां भासां प्रतिफलनरागारुणतया
शरीरी शृङ्गारो रस इव दृशां दोग्धि कुतुकम् ॥९२ ॥

अराला केशेषु प्रकृतिसरला मन्दहसिते
शिरीषाभा चित्ते दृषदुपलशोभा कुचतटे ।
भृशं तन्वी मध्ये पृथुरुरसिजारोहविषये
जगत्त्रातुं शम्भोर्जयति करुणा काचिदरुणा ॥९३ ॥

कलङ्कः कस्तूरी रजनिकरबिम्बं जलमयं
कलाभिः कर्पूरैर्मरकतकरण्डं निबिडितम् ।
अतस्त्वद्भोगेन प्रतिदिनमिदं रिक्तकुहरं
विधिर्भूयो भूयो निबिडयति नूनं तव कृते ॥९४ ॥

पुरारातेरन्तःपुरमसि ततस्त्वच्चरणयोः
सपर्यामर्यादा तरलकरणानामसुलभा ।
तथा ह्येते नीताः शतमखमुखाः सिद्धिमतुलां
तव द्वारोपान्तस्थितिभिरणिमाद्याभिरमराः ॥९५ ॥

कलत्रं वैधात्रं कति कति भजन्ते न कवयः
श्रियो देव्याः को वा न भवति पतिः कैरपि धनैः ।
महादेवं हित्वा तव सति सतीनामचरमे
कुचाभ्यामासङ्गः कुरवकतरोरप्यसुलभः ॥९६ ॥

गिरामाहुर्देवीं द्रुहिणगृहिणीमागमविदो
हरेः पत्नीं पद्मां हरसहचरीमद्रितनयाम् ।
तुरीया कापि त्वं दुरधिगमनिस्सीममहिमा
महामाया विश्वं भ्रमयसि परब्रह्ममहिषि ॥९७ ॥

कदा काले मातः कथय कलितालक्तकरसं
पिबेयं विद्यार्थी तव चरणनिर्णेजनजलम् ।
प्रकृत्या मूकानामपि च कवितोकारणतया
कदा धत्ते वाणीमुखकमलताम्बूलरसताम् ॥९८ ॥

सरस्वत्या लक्ष्म्या विधिहरिसपत्नो विहरते
रतेः पातिव्रत्यं शिथिलयति रम्येण वपुषा ।
चिरं जीवन्नेव क्षपितपशुपाशव्यतिकरः
परानन्दाभिख्यं रसयति रसं त्वद्भजनवान् ॥९९ ॥

प्रदीपज्वालाभिर्दिवसकरनीराजनविधिः
सुधासूतेश्चन्द्रोपलजललवैरर्घ्यरचना ।
स्वकीयैरम्भोभिः सलिलनिधिसौहित्यकरणं
त्वदीयाभिर्वाग्भिस्तव जननि वाचां स्तुतिरियम् ॥१०० ॥

॥इति श्रीभगवत्पादविरचिता सौन्दर्यलहरी समाप्ता ॥

■

आनन्दलहरी

भवानि स्तोतुं त्वां प्रभवति चतुर्भिर्न वदनैः
प्रजानामीशानस्त्रिपुरमथनः पञ्चभिरपि ।
न षड्भिः सेनानीर्दशशतमुखैरप्यहिपति-
स्तदाऽन्येषां केषां कथय कथमस्मिन्नवसरः ॥१ ॥

घृतक्षीरद्राक्षामधुमधुरिमा कैरपि पदै-
र्विशिष्यानाख्येयो भवति रसनामात्रविषयः ।
तथा ते सौन्दर्यं परमशिवदृङ्मात्रविषयः
कथङ्कारं ब्रूमः सकलनिगमागोचरगुणे ॥२ ॥

मुखे ते ताम्बूलं नयनयुगले कज्जलकला
ललाटे काश्मीरं विलसति गले मौक्तिकलता ।
स्फुरत्काञ्ची शाटी पृथुकटितटे हाटकमयी
भजामि त्वां गौरीं नगपतिकिशोरीमविरतम् ॥३ ॥

विराजन्मन्दार-द्रुमकुसुमहार-स्तनतटी
नदद् वीणानाद-श्रवणविलसत्कुण्डलगुणा ।
नताङ्गी मातङ्गी-रुचिरगतिभङ्गी भगवती
सती शम्भोरम्भोरुहचटुलचक्षुर्विजयते ॥४ ॥

नवीनार्कभ्राजन्मणिकनकभूषापरिकरै-
र्वृताङ्गी सारङ्गीरुचिरनयनाङ्गीकृतशिवा ।
तडित्पीता पीताम्बरललितमञ्जीरसुभगा
ममापर्णा पूर्णा निरवधिसुखैरस्तु सुमुखी ॥५ ॥

हिमाद्रेः सम्भूता सुललितकरैः पल्लवयुता
सुपुष्पा मुक्ताभिर्भ्रमरकलिता चालकभरैः ।
कृतस्थाणुस्थाना कुचफलनता सूक्तिसरसा
रुजां हन्त्री गन्त्री विलसति चिदानन्दलतिका ॥६ ॥

सपर्णामाकीर्णां कतिपयगुणैः सादरमिह
श्रयन्त्यन्ये वल्लीं मम तु मतिरेवं विलसति ।
अपर्णैका सेव्या जगति सकलैर्यत्परिवृतः
पुराणोऽपि स्थाणुः फलति किल कैवल्यपदवीम् ॥७ ॥

विधात्री धर्माणां त्वमसि सकलाम्नायजननी
त्वमर्थानां मूलं धनदनमनीयाङ्घ्रिकमले ।
त्वमादिः कामानां जननि कृतकन्दर्पविजये
सतां मुक्तेर्बीजं त्वमसि परमब्रह्ममहिषी ॥८ ॥

प्रभूता भक्तिस्ते यदपि न ममालोलमनस-
स्त्वया तु श्रीमत्या सदयमवलोक्योऽहमधुना ।
पयोदः पानीयं दिशति मधुरं चातकमुखे
भृशं शङ्के कैर्वा विधिभिरनुतीता मम मतिः ॥९ ॥

कृपापाङ्गालोकं वितर तरसा साधुचरिते
न ते युक्तोपेक्षा मयि शरणदीक्षामुपगते ।
न चेदिष्टं दद्यादनुपदमहो कल्पलतिका
विशेषः सामान्यैः कथमितरवल्लीपरिकरैः ॥१० ॥

महान्तं विश्वासं तव चरणपङ्केरुहयुगे
निधायाऽन्यन् नैवाश्रितमिह मया दैवतमुमे ।
तथापि त्वच्चेतो यदि मयि न जायेत सदयं
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम् ॥११ ॥

अयःस्पर्शे लग्नं सपदि लभते हेमपदवीं
यथा रथ्यापाथः शुचि भवति गङ्गौघमिलितम् ।
तथा तत्तत्पापैरतिमलिनमन्तर्मम यदि
त्वयि प्रेम्णासक्तं कथमिव न जायेत विमलम् ॥१२ ॥

त्वदन्यस्मादिच्छाविषयफललाभेन नियम-
स्त्वमर्थानामिच्छाधिकमपि समर्था वितरणे ।
इति प्राहुः प्राञ्चः कमलभवनाद्यास्त्वयि मन-
स्त्वदासक्तं नक्तं दिवमुचितमीशानि कुरु तत् ॥१३ ॥

स्फुरन्नानारत्न-स्फटिकमयभित्ति-प्रतिफलं
त्वदाकारं चञ्चच्छशधरशिलासौधशिखरम् ।
मुकुन्द-ब्रह्मेन्द्रप्रभृतिपरिवारं विजयते
तवागारं रम्यं त्रिभुवनमहाराजगृहिणी ॥१४ ॥

निवासः कैलासे विधिशतमखाद्याः स्तुतिकराः
कुटुम्बं त्रैलोक्यं कृतकरपुटः सिद्धिनिकरः ।
महेशः प्राणेशस्तदवनिधराधीशतनये
न ते सौभाग्यस्य क्वचिदपि मनागस्ति तुलना ॥१५ ॥

वृषो वृद्धो यानं विषमशनमाशा निवसनं
श्मशानं क्रीडाभूर्भुजगनिबहो भूषणविधिः ।
समग्रा सामग्री जगति विदितैवं स्मररिपो-
र्यदेतस्यैश्वर्यं तव जननि सौभाग्यमहिमा ॥१६ ॥

अशेषब्रह्माण्ड-फलयविधि-नैसर्गिकमतिः
श्मशानेष्वासीनः कृतभसितलेपः पशुपतिः ।
दधौ कण्ठे हालाहलमखिलभूगोलकृपया
भवत्याः सङ्गत्याः फलमिति च कल्याणि कलये ॥१७ ॥

त्वदीयं सौन्दर्यं निरतिशयमालोक्य परया
भियैवासीद् गङ्गा जलमयतनुः शैलतनये ।
तदैतस्यास्तस्माद्वदनकमलं वीक्ष्य कृपया
प्रतिष्ठामातन्वन् निजशिरसि वासेन गिरिशः ॥१८ ॥

विशालश्रीखण्डद्रवमृगमदाकीर्णघुसृण-
प्रसूनव्यामिश्रं भगवति तवाभ्यङ्गसलिलम् ।
समादाय स्रष्टा चलितपदपांसून्निजकरैः
समाधत्ते सृष्टिं विबुधपुरपङ्केरुहदृशाम् ॥१९ ॥
वसन्ते सानन्दे कुसुमितलताभिः परिवृते
स्फुरन्नानापद्मे सरसि कलहंसालिसुभगे ।
सखीभिः खेलन्तीं मलयपवनान्दोलितजले
स्मरेद्यस्त्वां तस्य ज्वरजनितपीडाऽपसरति ॥२० ॥

॥इति आनन्दलहरी सम्पूर्णा ॥

■

श्रीमदादिशङ्कराचार्य द्वारा स्थापित
प्रथमपीठ-

द्वारका शारदापीठ- का संक्षिप्त परिचय

नारायणस्वरूप ब्रह्मचारी
मंत्री— द्वारका शारदापीठ

भारत के पश्चिमी समुद्र तट पर स्थित सौराष्ट्र (अब गुजरात राज्य में) का भारत के समुद्री प्रवेश द्वार के रूप में महत्त्वपूर्ण स्थान है। भगवान् कृष्ण की, जिन्होंने द्वारका में अपनी राजधानी स्थापित की, पवित्र स्मृति से इस भूमि की पवित्रता और अधिक बढ़ गई है।

द्वारका गोमती नदी के किनारे समुद्र के साथ उसके संगम पर बसा हुआ है। यह हिन्दुओं के सात पवित्र नगरों में से एक है। वे पवित्र नगर हैं— अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवन्ती और द्वारका।

जब भगवान् कृष्ण ने मथुरा में कंस को मारा, तब जरासंध ने उन पर आक्रमण किया। भगवान् कृष्ण ने मथुरा छोड़ दिया और द्वारका की स्थापना करके वहीं यादवों के साथ रहने लगे। वर्तमान द्वारका को वह प्राचीन राजधानी माना जाता है, जहाँ भगवान् कृष्ण ने शासन किया।

आधुनिक नगर द्वारका का मुख्य आकर्षण द्वारकाधीश या रणछोड़ राय का प्रसिद्ध मंदिर है। यह मंदिर त्रिलोक सुन्दर अथवा जगत् मंदिर के रूप में भी प्रसिद्ध है। पौराणिक कथाओं के अनुसार भगवान् कृष्ण के महान् पोते बज्रनाभ ने विश्वकर्मा की सहायता से इस मंदिर का निर्माण करवाया था। मंदिर की मीनार ७ महले की है और १४० फुट ऊँची है। विशाल मण्डल पाँच महले का है और ६० स्तम्भों पर गुम्बद स्थित है। मन्दिर की बाहरी दीवारों को उत्कृष्ट सूक्ष्म पच्चीकारी किये हुए पत्थरों से सजाया गया है। यह दो दीवारों से घिरा हुआ है और दोनों के बीच परिक्रमा करने की जगह है।

पवित्र मंदिर के भीतर रजत जटित संगमरमरी, सिंहासन पर द्वारकाधीश (कृष्ण) की मूर्ति विराजमान है। मूर्ति काले पत्थर से बनी हुई है। वह चार भुजाओं के साथ तीन फुट ऊँची है।

द्वारका की शोभा इस बात से और बढ़ जाती है कि मई के महीने में भी यहाँ की जलवायु शीतल रहती है। मौसम शुष्क रहता है। पानी खारा है। गोमती नदी के दूसरे किनारे पर पाँच कुएँ हैं। पाँचों कुएँ में पीने के लिये शीतल और सुस्वादु जल है। पाँचो पाण्डव बन्धुओं के नाम पर इन कुओं का नामकरण किया गया है।

आर्यों के और विशेष रूप से भगवान् कृष्ण के नेतृत्व में यादवों के आगमन के साथ ही यहाँ सांस्कृतिक इतिहास शुरू होता है। भगवान् कृष्ण ने हमें गीता का उपदेश दिया और नृत्य एवं संगीत से आर्य सभ्यता का प्रचार किया। महाभारत महाकाव्य और पुराणों में भगवान् कृष्ण के कार्यों और उनके जीवन और कार्यों से संबंधित सौराष्ट्र के स्थानों का वर्णन मिलता है। सोमनाथ और द्वारका भारत के पवित्रतम स्थानों में से अतिपवित्र स्थान हैं, जो भगवान् कृष्ण की यशगाथा का गुणगान करते हैं। भगवान् कृष्ण ने सोमनाथ (ज्योतिर्लिंग पुत्र शिव मन्दिर) के पास देहोत्सर्ग किया था।

श्री शंकर भगवत्पाद ने सामवेद के प्रचार के लिये एक पीठ के रूप में द्वारका का चयन किया। श्री भगवान् ने सर्वप्रथम नदी के किनारे के स्थान चुने। उन्होंने ऐसा स्थान चुना, जो शान्त हो और जहाँ का प्राकृतिक वातावरण अपनी सम्पूर्ण पवित्रता के साथ हो तथा मानव हाथों द्वारा उसका स्पर्श किया गया हो। समुद्र के किनारे स्थित होने के कारण द्वारका अनोखा स्थान है।

श्री शंकर भगवत्पाद ने भारत को एक सम्पूर्ण इकाई मानकर बिना किसी पूर्वाग्रह और भेदभाव के, पीठों के लिये चारों दिशाओं में स्थान का चयन किया। उन्होंने भारत को एक यज्ञकुण्ड के रूप में देखा। यज्ञकुण्ड के चारों दिशाओं में द्वारपालक हैं। इस प्रकार पश्चिम में सामवेद है। इसलिये द्वारका सामवेद के विशेष अध्ययन का केन्द्र हो गया। द्वारका पीठ की सीमा में सिन्धु, सौराष्ट्र, सौवीर और महाराष्ट्र हैं।

आदि शंकर भगवत्पाद ने धर्म के नाम पर भ्रष्टाचार की जड़ हिलाने के बाद हिन्दुत्व को एकताबद्ध करने का कार्य किया। भारत बहुत विशाल क्षेत्र है। वे जानते थे कि उनका उद्देश्य तभी पूर्ण होगा, जब हिन्दुत्व की नैतिक और आध्यात्मिक परम्पराओं को बिल्कुल सुरक्षित और शाश्वत रखा जायेगा।

आदि शंकर के चार प्रमुख शिष्यों में से एक शिष्य सुरेश्वराचार्य द्वारका मठ के प्रथम पीठाधिपति के रूप में प्रसिद्ध हैं। कुछ लोग उन्हें पद्मापादाचार्य भी कहते हैं। द्वारकापीठ शारदा पीठ के नाम से प्रसिद्ध है। हम यहाँ शारदा को विद्यास्वरूपा अथवा विद्या की देवी सरस्वती के रूप में देखते हैं। आदि शंकर ने इस पीठ में श्रीचक्र और लिंग की प्रतिष्ठापना की है।

ब्रह्मलीन शंकराचार्य श्री अभिनव सच्चिदानंद तीर्थ स्वामी जी महाराज आदि शंकराचार्य के जीवनकाल के दरम्यान शुरू हुई अखंडित पीढ़ी के ७७वें पीठाधिपति थे और वर्तमान शंकराचार्य श्री स्वामी स्वरूपानन्द जी सरस्वती ७८वें पीठाधीश्वर हैं।

इस प्रकार द्वारकाधीश का मन्दिर और शंकर मठ भारतीय धर्म, दर्शन और आध्यात्मिक विरासत का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो दो महान् विभूतियों के जीवन के साथ जुड़ी हुई है। एक ने गीता के उपदेशों द्वारा और दूसरे ने अद्वैत दर्शन द्वारा जीवनधारा में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया।

द्वारकामठ वैदिक शिक्षा की सम्मानित परम्पराओं के सिद्धान्तों पर और उसके प्रमुखों के जीवन की शुद्धता एवं पवित्रता पर स्थित है, जिन्होंने ज्ञान के प्रकाश को सेवा, आत्मसमर्पण और कठोर आध्यात्मिक अनुशासन से सदैव प्रज्ज्वलित तथा प्रकाशित बनाये रखा।

परम्पराएँ और उनके महत्त्व—

द्वारका शारदापीठ की युगों पुरानी परम्परा है। इस पीठ का ध्वज त्रिशूल चिह्न के साथ रजत स्टाफ पर केसरिया रंग का है। इसके अलावा केसरी पृष्ठ भूमि में मध्य में स्वस्तिक चिह्न है।

पूरा ध्वज दो भागों में है। जो भाग ठीक आयताकार है, दो त्रिभुजों में खत्म होता है। दोनों त्रिभुज अंग्रेजों के उलटे एम अक्षर की तरह हैं। ध्वज के प्रत्येक चिह्न का महत्त्वपूर्ण अर्थ है।

केसरी रंग अग्नि त्याग और विशुद्धता का प्रतीक है। दोनों त्रिभुजों के तीनों कोण तीनों गुणों— राजस, तामस और सत्त्व के प्रतीक हैं। ये तीन तत्त्वों के प्रतीक हैं। त्रिकोणात्मक भाग पूरे ध्वज का एक तिहाई भाग है।

ध्वज के मध्य में स्वस्तिक चिह्न में ९ कोण हैं। यह तीन त्रिकोणात्मक नोकों के ठीक तीन गुने के बराबर है। सम्भवतः यह नौ के अंक का प्रतीक है जो अद्भुत संख्या है; क्योंकि जब उसका गुणा किया जाता है, गुणनफल की संख्याओं का योग सदैव ९ ही रहता है। मध्य बिन्दु वही रहता है और इसका अर्थ यह है कि आप चाहे जो भी तरीका अपनायें, आप निश्चित रूप से अन्तिम लक्ष्य— सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापी तक पहुँच जाऐंगे।

त्रिशूल चिह्न सामवेद के देवता भगवान् शिव का प्रतीक है।

सम्प्रति द्वारका शारदापीठ में श्रीमद् जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज द्वारा निम्न संस्थाएं तथा वृत्तियाँ संचालित हैं—

(१) **श्री शारदापीठ विद्या सभा**, जिसके अंतर्गत—

(अ) श्री द्वारकाधीश संस्कृत एकेडमी, द्वारका।

(ब) श्री अभिनव सच्चिदानंद प्राच्य विद्या संशोधन मन्दिर, द्वारका।

(स) श्री शंकराचार्य अभिनव सच्चिदानन्द तीर्थ संस्कृत महाविद्यालय, द्वारका।

(द) श्री शारदापीठ विनयन एवं शिक्षण महाविद्यालय, द्वारका।

(इ) आश्रमशाला (पिछड़ी जातियों के लिए) वरवाला।

उपर्युक्त संस्थाओं में संस्कृत में एम. ए., पी-एच. डी., संस्कृत में संशोधन, संस्कृत में प्रथमा से आचार्य तक अध्ययन, वेद, कर्मकाण्ड, प्रशिक्षण, विनयन महाविद्यालय में बी. ए. गुजराती, एम. ए. गुजराती, बी. ए. संस्कृत, बी. ए. अर्थशास्त्र, बी. ए. हिन्दी तथा बी. एड्. और एम. एड्. की शिक्षा दी जाती है। आश्रमशाला में कक्षा १ से कक्षा ६ तक पिछड़ी जातियों के बालक- बालिकाओं को शिक्षा, निवास, वस्त्र भोजन तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति संस्था द्वारा

निःशुल्क की जाती है। सम्प्रति कला संकाय के साथ-साथ वाणिज्य संकाय भी शुरू हो गए हैं, जिससे लगभग ३०० छात्र-छात्राएँ लाभान्वित हो रहे हैं।

(२) पीठ द्वारा संचालित गौशाला, जिसमें लगभग २०० गायों की सेवा होती है।

(३) द्वारका धाम की यात्रा पर आए समस्त भक्तजनों के लिए द्वारका शारदापीठ की ओर से सात्त्विक तथा स्वादिष्ट भोजन निःशुल्क दिया जाता है। जिससे हजारों लोग प्रतिदिन लाभान्वित होते हैं।

(४) पीठ के भक्तों के लिए परिसर में ही धर्मशाला उपलब्ध है, जिसमें सुविधासम्पन्न प्रकोष्ठ यथासौविध्य सुलभ कराये जाते हैं।

(५) पीठ के विस्तार की भी योजना कार्यान्वित होने जा रही है, जिससे पीठ का परिसर चार गुना बढ़ाये जाने की योजना है।

(६) इसके अतिरिक्त छात्राओं के निवास के लिए एक पृथक् कन्या छात्रावास की भी योजना है, जो भक्तों के सहयोग से शीघ्र कार्यान्वित होने जा रही है।

(७) लक्ष्मी भंडार, पीठ द्वारा संचालित है, जिसमें द्वारकाधीश मन्दिर के परिसर में स्थित १६ मन्दिर आते हैं, जिनमें प्रतिदिन ११ बार भोग लगता है तथा ४ बार आरती होती है।

■

ज्योतिष्पीठ का संक्षिप्त परिचय

सुबुद्धानन्द ब्रह्मचारी
मुख्य सचिव
जगद्गुरु शङ्कराचार्य जी महाराज

भारत का इतिहास धार्मिक प्रतिक्रियाओं का इतिहास है। धर्म ही यहाँ सर्वविध क्रियाकलापों का नियामक रहा है, अतएव धर्म की अवधारणा उस तत्त्व के रूप में हुई है जिससे सम्पूर्ण जगत् का धारण होता है।

'धारणाद् धर्म इत्याहुः, धर्मो धारयति प्रजाः' इस महाभारत की उक्ति से उक्त तथ्य की पुष्टि होती है। लोकधारक धर्म का रूप संकुचित न होकर अत्यन्त विस्तृत है, जिसमें सभी साधना-पद्धतियों, दार्शनिक विचारधाराओं, दैनन्दिन क्रिया-कलापों और सामान्य तथा विशिष्ट आचारों तक का समावेश हो जाता है। यही कारण है कि हमारे धर्मशास्त्रों में जन्म के पूर्व से लेकर मरण के बाद तक की समस्त क्रियाओं का न्यूनाधिक निरूपण है। धर्म की इसी सर्वाङ्गीणता, सर्वजनीनता, सर्वलोकोद्धारता एवं सर्वलोकप्राणता को ध्यान में रखकर इसकी ग्लानि होने पर निष्कारण करुणापरायण परमेश्वर अवतरित होकर साधु-परित्राण एवं दुष्कृत-प्रणाश करते हैं।

एक समय था, जब वेद-वेदांग प्रतिपादित सनातन धर्म पाखण्डियों तथा अनधिकारियों के हाथ में पड़कर विकृत हो उठा। एक मूल-धर्म अनेक धर्माभासों के रूप में विभक्त होने लगा। शैव, वैष्णव, शाक्त, सौर और गाणपत्य वैचारिक एवं साधनापरक सम्प्रदाय भी, जो वस्तुतः एक ही सनातनधर्म के विविध रूप थे, परस्पर दुराग्रह एवं वैमनस्य से अभिभूत हो गए। आसेतु हिमालय एवं चतुर्दिक् पर्यन्त विस्तीर्ण भारत-भू की एकरूपता विखण्डन के कगार पर पहुँच गई। उसी समय एकत्व का महामन्त्र फूँककर भगवत्पाद श्री शंकराचार्य ने अवतीर्ण हो भारत का उद्धार किया।

आद्यगुरु ने उत्तर में बद्रीनाथ क्षेत्र में ज्योतिर्मठ अथवा श्रीमठ में अथर्ववेद के अनुसार उपदेशार्थ त्रोटकाचार्य को नियुक्त किया। ज्योतिष्पीठ में त्रोटकाचार्य सहित ४२ आचार्यों की परम्परा अविच्छिन्न चली आई है; परन्तु जगद्गुरु रामकृष्णतीर्थ के पश्चात् प्रारंभ के विच्छेद में प्राकृतिक प्रकोप, भूकम्प, योग्य व्यक्तियों का अभाव तथा विरक्त योगियों का आत्मकल्याण छोड़कर लोकोद्धार के प्रपंच में न पड़ना आदि कारण रहे। लगभग १६५ वर्षों तक यह पीठ आचार्य-रहित रहा। इस रिक्तता की ओर सर्वप्रथम 'भारत धर्म-महामण्डल, वाराणसी, के संस्थापक श्रीज्ञानानन्द जी महाराज का ध्यान गया। उन्होंने मण्डल के अधिवेशनों में विद्वानों तथा अन्यान्य महात्माओं तथा सद्गृहस्थों से इस विषय में विचार-विमर्श किया। योग्य महात्मा की खोज प्रारंभ की गई। अन्ततः १९४१ में बाल-ब्रह्मचारी योगी महात्मा ब्रह्मानंद जी सरस्वती महाराज का ज्योतिष्पीठाधीश्वर के रूप में अभिषेक किया। इस प्रकार १६५ वर्षों का अभाव पूर्ण हुआ। इन्होंने बड़ी योग्यता के साथ पदनिर्वाह किया। इनके ब्रह्मलीन होने के पश्चात् योग्य उत्तराधिकारी की खोज प्रारंभ हुई। यों तो बहुत से लोग इसका वैभव और सम्मान देखकर इस पद को प्राप्त करने के इच्छुक थे; किन्तु आद्यशंकराचार्य के महाम्नाय महानुशासन और ज्योतिष्पीठ की परम्परा के अनुसार इस पीठ में नैष्ठिक ब्रह्मचारी योगी और वेदवेदांग, पारंगत दण्डी स्वामी महात्मा ही पीठासीन होते चले आ रहे थे। बड़ी खोजबीन के पश्चात् परमवीतराग वेद-वेदांग-निष्णात नैष्ठिक ब्रह्मचारी दण्डी स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज को द्वारका शारदा-पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री अभिनव सच्चिदानंद तीर्थ महाराज, स्वामी श्री करपात्री महाराज आदि महात्माओं ने अभिषिक्त किया। सन् १९७३ में उन्होंने ब्रह्मीभूत जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री ब्रह्मानंद सरस्वती जी के प्रमुख शिष्य दण्डी स्वामी श्री स्वरूपानंद सरस्वती जी महाराज को पीठ का सर्वथा योग्य उत्तराधिकारी समझकर विद्वानों के समक्ष इनका नाम प्रस्तावित किया। धर्म-सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की सन्निधि में काशी विद्वत्परिषद् ने इसका सर्वसम्मति से अनुमोदन किया।

अगस्त १९७३ में ही स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज ब्रह्मीभूत हो गए। उनके ब्रह्मलीन होने पर काशी में पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज,

सुमेरु-पीठाधीश्वर स्वामी श्री महेश्वरानन्द सरस्वती जी महाराज, काशी विद्वत्-रिषद् आदि ने धर्मसंघ शिक्षा मण्डल के भवन में इनका औपचारिक अभिषेक किया। पुनः भारत की राजधानी दिल्ली में ७ दिसम्बर, १९७३ ई. को विधिवत् अभिषेक हुआ। यह अभिषेक ज्योतिष्पीठ के इतिहास तथा दिल्ली के धार्मिक अनुष्ठान में अद्‌भुत और अविस्मरणीय रहेगा। इस अभिषेक में द्वारका शारदापीठाधीश्वर जगद्‌गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री अभिनव सच्चिदानंद जी तीर्थ तथा गोवर्धन-पीठाधीश्वर जगद्‌गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री निरंजनदेव तीर्थ जी ने स्वयं उपस्थित होकर अभिषेक किया और सिंहासन पर बैठाया। श्रृंगेरी पीठाधीश्वर जगद्‌गुरु शंकराचार्य स्वामी की अभिनव विद्यातीर्थ जी महाराज ने अपना प्रतिनिधि भेजा, जिन्होंने नवाभिषिक्त जगद्‌गुरु शंकराचार्य जी को पट्टवस्त्र ओढ़ाया तथा कहा कि किसी भी जगद्‌गुरु के अभिषेक पर इतना भव्य समारोह आज तक नहीं हुआ। इस अवसर पर देश भर के विशिष्ट सन्त-महात्मा, मण्डलेश्वर, आचार्य, विद्वान् तथा भारत सरकार के मन्त्री एवं कई सांसद उपस्थित थे। पूज्य महाराजश्री के व्यक्तित्व से प्रभावित जैन मुनियों, बौद्धों और सिख सभाओं ने भी अभिनन्दन किया।

सम्प्रति पूज्य महाराजश्री ने ज्योतिष्पीठ में विकास का जो कार्यक्रम चलाया है, वह फैलता ही चला जा रहा है। जिसके तहत जोशीमठ में भव्य मठ, धर्मशाला, राजराजेश्वरी मन्दिर, गौशाला, बद्रीनाथ में भव्य मठ, शेषनेत्रोद्धार, गौशाला, अतिथिगृह आदि के निर्माण के अतिरिक्त ऋषिकेश, शाकम्भरी, मेरठ, दिल्ली तथा वाराणसी आदि नगरों में भी विशाल मठों एवं मन्दिरों के निर्माण शामिल हैं।

आपके दिव्य-प्रभापुंज में समष्टि का आकर्षण है। आपको पाकर शांकरपीठ तथा उसके क्षेत्र-निवासी सनातनधर्मी धन्यता का अनुभव कर रहे हैं।

■